समर्पण

हिन्दी-जगत् में सर्वोपयोगी उच्च साहित्यके

प्रचारक, सुकवि और सुलेखक

श्रीयुत पण्डित रूपनारायण जी पाण्डेय

के

करकमलों में अनुवादक द्वारा यह तुच्छ

भेंट उनके बढ़ते वात्सल्य के उपलक्ष्य में

सादर समर्पित।

वात्सल्य-भाजन—

नरोत्तम व्यास।

भूमिका ।
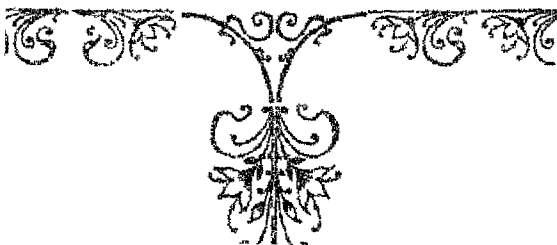
बङ्ग भाषाके उपन्यास-संसार में दामोदर बाबूके उपन्यासों
बहुत नाम पाया है। लोग उन्हें बड़ी रुचि से पढ़ते हैं
सच में आपका लेखन-कौशल अपूर्व है। अपने पात्रों
चरित्र-चित्रण में तो आप कमाल ही कर देते हैं। हिन्दी-जगत
भी आपके दो एक उपन्यासोंका रस चखा है, आ
से एक और नया उपन्यास नवीन रूपमें आता है। नाम
"नवीना"।

नवीना में प्रमुख तीन पात्र हैं। एक पुरुष और दो स्त्रियाँ
नायिका का नाम नवीनाकिशोरी और उपनायकों में ज्ञानेन्द्र
नाथ और उनकी पत्नी लावण्य है। नायिका नवीना पाप-वासना
वश होकर अपने पदसे स्खलित है—ईर्षा, द्वेष और
त्र में सफलकाम होकर भी पतित है और पतिपराय
लावण्य सती मूर्धन्या धन्या सावित्री है। ज्ञानेन्द्रनाथ क
उपमा चन्द्रसे दी जा सकती है। उपपात्रों में विधुभूष

ने इस भिन्नाभिन्नोंके चित्रण करनेमें गज़ब ढा दिया
इसीसे उपन्यास लेखकों में दामोदरका नाम अजर अम
मर है।

हमारी इच्छा थी कि, जहाँ पर निष्कलङ्क वस्तुमें कलङ्क
गा है, वहाँका प्लॉट बदलदें, किन्तु पीछे विचार करनेसे
मालूम हुआ कि ऐसा करनेसे उपन्यासके एक और मुख्य
ङ्गका गौरव नष्ट हो जायगा एवं पाठक-समाज प्रसन्न-पुष्प
र्षण करनेके बदले, इस करतूतके कारण हमारे ऊपर क्रोधा-
ार बरसाने लगेगा। इसी लिए यह ज्योंकी त्यों भेंट हिन्दी
सारमें अपने प्रकृत रूपमें अवतीर्ण होती है; हिन्दी-संसार
श्रय दे।

हाँ, एक मुख्य बात रह गयी। वह यह कि, दामोदर बाबू
हिन्दी-संसारमें अप्रकाशित उपन्यासोंके अनुवाद करनेका
र्णाधिकार प्रदान करनेवाले, उनके प्रकाशक और वसुमती
साहित्य-मन्दिर के मालिक, श्रीउपेन्द्र बाबू को हम हृदयसे
धन्यवाद देते हैं। आपने जिस उदारता से इस अकिञ्चन पर
कृपादृष्टि की है, उससे यह अनुवादक बेहद दबा हुआ है।
दूसरा धन्यवाद हमारे श्रद्धेय और साहित्य-प्रतिभाके पुञ्ज
हृद श्रीयुत हरिदासजी वैद्यको है, जो इस अपूर्व उपन्यासको
हिन्दीमें प्रकाशित करनेके लिये [illegible] है।

पहला परिच्छेद।

दोपहरके समय, कलसी काँखमें दबाकर, नवी
अकेली नदीसे जल लानेके लिये जारही है। रा
वपुर बहुत छोटा गाँव है; ऐसे गाँवोंकी बो-ब
यः नित्य-प्रति अकेलीही स्नान करने या जल भरनेके लि
या करती हैं। जिस मार्गसे नवीना जारही है, वह बहु
संकुचित है। दो जने साथ-साथ नहीं जा सकते। रा

ते ही डर जायँ, किन्तु नवीना गाँवकी लड़की है अनायास
थिताके अपनी अवस्था पर विचार करती-करती बराबर
ी जारही है।

दो साल हुए नवीना का भाग्य फूट गया। सोलह वर्ष की
में ही उसके स्वामीने अकालमें इह लीला संवरण करली,
ापि बड़े कष्टसे अबतक नवीना ससुरालमें ही रही, किन्तु
र जेठ आदि सभी ससुरालिये उसे, घरका काम-धाम करते
भी, मुट्ठी भर अन्न देनेमें बड़ी विरक्ति दिखाते थे। सास
पुत्रवधूको स्वामि-घातिनी कहकर घृणा करने लगी
।फिर; ननद की तानेजनीसे तो वह एकदम ही तंग होगयी
। पास-पड़ोसिनें भी नवीना को इस घटना के कारण
ला-बुरा कहा करती थीं। अतः उसे वहाँ रहना भारी हो
या। अगत्या, नवीनाको स्वामीका घर छोड़, आज चार रोज
ए मायके आना पड़ा है। किन्तु मायकेमें भी वृद्धा जननी
ौर दश वर्ष के एक भाई के सिवा और कोई नहीं है। उन्हें
न्न-वस्त्रका सर्वतोभावसे अभाव है। यह सब हाल जानकर
ी नवीना मातृ-शरणागता हुई। जननीने बड़े आदरसे
दुःखिनी कन्या को छातीसे लगाया। भाई बहिन को
ाकर सुखी हुआ। सांसारिक कष्ट अत्यधिक होने पर भी

ाके अनुरोधसे नवीनाके ही नामसे, उसका उल्ले
ऐंगे ।

नवीना बेजोड़ सुन्दरी है ; उसका वर्ण गोरा और शरीर
न मनोहर है। जो-जो लक्षण सुन्दरताके लिये अच्छे मा
हैं—जिन लक्षणों का विचार कर सौन्दर्यकी अवतारण
ती है, उनमेंसे अधिकांश नवीनामें हैं। नवीना, सैकड़ों
ीं हजारोंमें, अपना सानी नहीं रखती। नवीना का स्वास्
र तज्जनित दैहिक पूर्णता एवं लावण्य उसके शरीरमें अपू
भा विकीर्ण करते थे।

शुभ्रवसना भूषणहीना नवीना अकेली वनके भीतर होक
रही थी। दूरसे किसी वृक्षकी आड़में खड़े होकर देखने
लूम होता था, मानो पुण्यमयी वन-बाला अपनी इच्छ
ार वन-भ्रमण कर रही है। वह अन्यमनस्का भाव
वा मुँह किये बेरोक चली जा रही है। मुखपर घूँघ
ीं है, पर सारा शरीर साड़ीसे ढका हुआ है। सहस
ीना की गति रुकी। वह चमक कर नीचा मुँह कर
ड़ी होगयी। उसके सामने उसके गाँवका ही रघुनाथ चक्र
र्ती नामका एक युवा हाथमें खिला हुआ गुलाबका फू
ये खड़ा हुआ है। नवीनाने सिरका कपड़ा और आ

हूँ। खूब अच्छा था—समतक अच्छी तरह था, पर तुम्हारे ...हीं चाले ही बेहद अस्वस्थ होगया।

भयसे नवीना का हृदय काँप उठा। उसने मुँह और भी नीचा कर लिया।

रघुनाथ बोला—"बात क्यों नहीं करती नवीना? देखो तो, मैं तुम्हारे लिये कैसा सुन्दर फूल लाया हूँ!

नवीना ने बाँये पैरके अँगूठे से बालू में गड्ढा करते हुए कहा,—"फूल की मुझे क्या ज़रूरत है दादा? हटो, रास्ता छोड़ो, मैं पानी भरने जाती हूँ।"

रघुनाथ—हटकर क्या होगा? मेरी इच्छा तुम्हें फूल देने की है। तुम्हारे हाथमें आने से इसका जन्म सफल होगा।

नवीना की आँखोंमें आँसू भर आये। क्षुब्ध स्वरसे कहा,—"ऐसी बातें क्यों करते हो दादा? मैं विधवा हूँ—दुःखिनी हूँ—तुम्हें मेरी सब आपदाओंसे रक्षा करनी चाहिये। मुझसे हँसी करना तुम्हारे लिये ठीक नहीं। कहीं बहिन से भाई मज़ाक किया करते हैं?"

रघुनाथ ने कहा,—"नवीना, तुम्हारा रूप-यौवन ऐसा-वैसा नहीं है। उसे देखकर दुनिया का एक आदमी भी [illegible]

नवीना रोने लगी। बोली,—"दादा, तुम बड़ी भूल कर
रहे हो। अच्छा, अब जाओ। जिसे तुम इस समय अपने
हित की भूलसे अच्छा समझ रहे हो, थोड़ा विचार करने
पर मालूम हो जायगा कि, उसकी बराबर दुनियामें कोई
भी बुरी बात नहीं है।

रघुनाथ—सुनो नवीना! मैंने पहलेसे ही स्थिर कर लिया
है कि, अगर तुम मेरा कहा अमान्य ठहराओगी, तो इसमें
कोई शक नहीं कि मैं ज़हर खाकर आत्महत्या कर लूँगा।
संसारमें अपने जीवन की अपेक्षा और कोई वस्तु प्यारी
नहीं है। तुम चाहो तो मुझे अनायास ही इस प्रकार
मृत्युसे बचा सकती हो। मेरा मरना-जीना इस वक्त तुम्हारे
हाथमें है; किन्तु आज मैं और कोई बात नहीं कहूँगा।
तुम्हें विशेष विरक्त करना मैं नहीं चाहता। तुम भी मेरी
बात पर खूब विचार करो। मेरी अवस्था खराब नहीं है,—
मेरे पास किसी भी वस्तु का अभाव नहीं है। मान, संभ्रम,
सम्पत्ता—सब कुछ है। ऐसे व्यक्तिको दास बनाकर तुम सच
ही बनजाओगी। नवीना, लो मैं अब जाता हूँ, मेरी बात
भूलना मत।"

बाईं ओर से और एक ऐसाही रास्ता चला गया था

लिये रघुनाथ का सुस्पष्ट अभिप्राय उसने बिना किसी प्रय
दिमाग़ को ज़ोर दियेही समझ लिया। सोचा—
ससे तो सुसराल ही अच्छी थी। वहाँ तो बहुत से आव
यों के होने पर भी, कभी ऐसा कुत्सित प्रस्ताव नह
ाई दिया। यहाँ मैं निःसहाया हूँ। बुड्ढी माँ और अधी
ई मेरी रक्षा नहीं कर सकते। रघुनाथ विशेष ध
ी न होने पर भी बड़ा उद्दण्ड प्रसिद्ध है; उसके चुङ्ग
ुझ को बचना चाहिये।"

कांपती-डरती नवीना सरोवर पर पहुँच गयी। वहाँ प
र्जन था। सरोवरके किनारे की वृक्ष-शाखाएँ झुक क
ासे मिल गई थीं। पुष्करिणीके चारों ओर घोर जङ्गल थ
ा भी हवाके चलनेसे वृक्षों का सर्वांङ्ग हिल जाता था
ीना को भय होता—रघुनाथ मानो लता-गुल्म भेद क
रहा है! मछलियोंके पूँछ उठाकर इधर-उधर फुर-फु
के भागने से जल उथला, नवीना समझी—उसे पकड़ने
ये रघुनाथ जलमें कूदा! किसी पेड़ से कौओंके उड़ने प
ीना डरी कि, रघुनाथ आदमियोंके साथ मुझे पकड़
रहा है। चारों ओर देख-भाल कर डरती हुई नवीन
ीमें उतरी। उसके पाँवके आघातसे पानी हिला, नवीन
र पीछे की ओर देखने लगी। अपने भ्रमसे को हास्य

पहला परिच्छेद

फाल्गुन का महीना था। अति मधुर मृदु पवन नवी
। चिन्तातप्त ललाट शीतल करने लगा, उससे उसकी वि
त केश-लट हिलने लगी। महाविपत्तिकी चिन्ता कर
'ती नवीना लौटी। उसने सोचा,—इस आफ़तका ज़िक्र म
नेसे कोई फल नहीं—वह कुछ भी न कर सकेगी, केव
न्तासे व्याकुल होगी। ज्ञानेन्द्र बाबू गाँवके ज़मींदार
। थोड़ी होने पर भी सर्वगुणान्वित हैं—परमधार्मिक हैं
नाको उन्हीं की शरणागता बनना चाहिये। यही स्थि
ा।

दूसरा परिच्छेद

राघवपुरके जमींदार ज्ञानेन्द्रनाथरायने, पूर्वमें अति
हीनावस्था होने पर भी, अपनी सर्वतोभावसे उन्नति
करली थी। बचपनमें उन्हें एक सामान्यसे फूस
झोंपड़ेमें रहना पड़ता था। विधवा माताने बड़े कष्टों
उनकी परवरिश की थी। स्कूलमें ज्ञानेन्द्रनाथको अधि
लिखने-पढ़नेका सुयोग नहीं मिल सका था, किन्तु अपने य
और अध्यवसायसे वे विशेष विद्वान् होगये। मातृहीन होने
बाद, ज्ञानेन्द्रनाथ कलकत्ते जाकर एक सौदागरी आफ़िस
नौकर होगये। अपनी सत्यता, कार्य्य-तत्परता एवं विद्याबल
थोड़े समयमें ही उन्होंने आफ़िस के मालिकोंको प्रसन्न क
लिया। फलतः, पहले आफ़िसके मैनेजर और फि
अंशीदार बन बैठे। दस सालके भीतर ही ज्ञानेन्द्रनाथके पा
प्रभूत धन होगया। इस समय वे नियमित रूपसे कलकत्

ने हाथसे सभी काम करने पड़ते थे, आज बहुतसे दा
सियाँ उनकी सेवामें तत्पर है। घरका सरोसामान बड़े आद
योंके जैसा है। बाक़ी लगानके नीलाममें, उन्होंने निवार
म की ज़मींदारी ख़रीद ली है। इसके अलावा वहाँ प
के बहुत से मकान भी है। आजकल उनका सभा-भव
वक्त, लोगोंसे भरा रहता है।

आनन्दनाथ दयालु और परम रूपवान् है। उनके पा
वैश्वर्य-साधक किसी भी वस्तु की कमी नहीं है। संस
सुखनाम वाली सभी चीज़ोंके वे मालिक हैं—अधिप
। समस्त सुखोंके ऊपर प्रधान सुख उनकी सहधर्मिणी है
न है, लावण्यमयी। लावण्यमयी रूपसी, रसिका, विद्याव
र नितान्त स्वामीपरायणा है। भगवान् की कृपा से आ
नाथ आशातीत सौभाग्यके अधिकारी हैं। वे परोपकार
हङ्कारशून्य, हास्यमुख और मिष्टभाषी हैं, इसलिये गाँ
री स्त्री-पुरुष उनकी भक्ति करते हैं।

मध्याह्नकालके समय ये रूपवान युवा अपने विशाल औ
ज्जित बैठके में बैठ कर लोचनदादाके साथ प्रायः नित्य
मकी बातें किया करते हैं। अतः आज भी लोचनदादा उ
त हैं। लोचनदादा का पूरा नाम रामलोचन चक्रव

आधा भाग ज्ञानेन्द्रनाथके घर पर ही व्यतीत करते हैं। इनके साथ ज्ञानेन्द्रकी क्या-क्या बातें होती हैं, उन्हें लिखनेसे हमारे पाठकोंके अभिमर्मी बन जानेका डर है, इसलिये बहुत सी बातें हमें छोड़नी पड़ती हैं।

लोचन दादाने कहा,—"ज्ञानेन्द्र, एक बात पर तुम्हें विशेष दृष्टि रखनी चाहिये।"

ज्ञानेन्द्रने हँसकर उत्तर दिया—"एक बात पर? नानी महाशया क्या आपकी आँखोंमें धूल झोंकने का आयोजन करने लगी हैं?"

रामलोचन पास रक्खा हुक्का हाथमें लेकर बोले,—"बड़े दिल्लगीबाज़ हो ज्ञानेन्द्र! हर बातमें हँसी-दिल्लगी! नानी अब गोरमें पाँव लटकाये बैठी हैं, वे अब हमारी आँखमें धूल डालकर क्या करेंगी? क्या अब भी तुम जैसे उम्मीदवार उनको निर्जनमें बैठकर बाट जोहा करते हो?"

ज्ञानेन्द्र—बेशक। घर पर भी हम इसीलिये बैठे रहते हैं। वे उस दिन यहाँ आईं भी थीं, पर अभाग्यवश मैं बाहर चला गया था। आकर देखा, शिकार ग़ायब है।

लोचन हँसकर बोले,—"तुम्हारे मुँहमें घी-शक्कर। शिकार निकल गया—यह बहुत बुरी बात हुई। भाई मज़ा-मौजे

की बदनामी का डर है। खैर, आप तो कुछ नहीं कहेंगे, पर लावण्य तो शतमुखी वृष्टि करेगी।"

रामलोचनने कहा,—"भाई, तुम हिडिम्बका रूप धर लेना। खैर, काम की बात सुनो और हँसी का अन्त करो।"

ज्ञानेन्द्र—"आज्ञा कीजिये, मैं अब हँसी न करूँगा।"

लोचन—हरिदास मुखर्जीकी लड़की यहाँ आ गई है। क्या तुमने भी उसे देखा है?

ज्ञानेन्द्र—बहुत दिन हुए। उनका नाम शायद नवीन किशोरी है। वह तो विधवा है न?

लोचनने कृतज्ञता दिखाते हुए कहा,—"भगवान् तुम्हारा भला करें! तुम गाँवके सभी आदमियोंकी याद रखते हो। क्यों नहीं, इसीलिये परमात्माने तुम्हें सब योग्य बनाया है।

ज्ञानेन्द्रने बात काट कर कहा,—"खैर, आगे चलो। क्या ात है?"

रामलोचन—विधवा नवीना बहुतसे कारणोंसे ससुराल छोड़ ार मायके आगयी है। आप जानते ही हैं कि, उसका बाप तो ोका मर गया है। केवल एक दुःखिनी मा, और एक ोटा भाई है।

आनन्द हंसकर बोले—"लेकिन आप कहीं अनुग्रह की नजर न डाल बैठें ?"

राजलोचनने कहा,—"खैर, मेरी नजरसे तो कुछ भी न हो सकेगा, किन्तु तुम्हारे समान भाईके रहनेसे उसपर कुदृष्टि रखने वालोंसे तो जरूर रक्षा हो जायगी।"

आनन्दनाथ कुछ विचारकर कहने लगे,—"बात ठीक है। मैं जानता हूं, कि मनोमा परमा सुन्दरी है। और यह भी ठीक है कि, मैंने उसे बहुत दिनों से नहीं देखा ; लेकिन मुझे याद है कि, वह बड़ी प्यारी लड़की है। वास्तवमें उसे बहुतसे आदमी कुमार्गमें ले जानेकी चेष्टा करेंगे। वह दरिद्र है, संरक्षकहीन है। ऐसी अवस्थामें उस पर बहुतसी आफतें आवेंगी। निश्चय ही इस विषयमें थोड़ा ध्यान रखना और उसकी रक्षाके लिये थोड़ेसे उपाय करने आवश्यक हैं। अच्छा बताओ—इस बारेमें क्या-क्या करना उचित है ?"

लोचन—इस समय वह एक सामान्यसे घरमें रहती है। घर के चारों ओर की दीवारें थोड़ी-थोड़ी ऊँची करा देनेसे ही अच्छा होगा। तुम यदि समय-समय पर स्वयं उसकी खोज-खबर लो और हमारी बड़-रानी भी यदि बीच-बीचमें एक नौकरनी भेजकर उसकी सुधि ले लिया

ज्ञानेन्द्रने कहा—"आज्ञा शिरोधार्य है। ये व्यवस्था जल्दी कर दी जावेंगी। इसके सिवा लावण्यसे भी कह दिया जावेगा कि, वह समय-समय पर वहाँकी खबर लिया करे ए[क] नौकरनी भी दोनों वक्त जाकर माँ बेटियों की ज़रूरत पू[छ] आया करेगी।"

लोचन—ठीक है। लेकिन भाई, ज़ियादा मत बढ़ा लेन[ा,] समझलूँगा—रक्षक ही भक्षक न बन बैठे?

ज्ञानेन्द्रने कहा,—"मैं आज ही सायंकालके समय घूमने[के लि]ये वक्त हरिदासके मकान पर वहाँकी अवस्था देख आऊँग[ा औ]र आजही भित्तोकी दीवार ऊँची करने की आज्ञा [दे दूँग]ा। और जो-जो आवश्यकीय होगा, सबकी व्यवस्था क[र दूँग]ा।"

लोचन—तुम्हारी जय हो! तो मैं अब जाता हूँ, घूम[नेके] लिये जाते वक्त मुझे भी पुकार लेना।

ज्ञानेन्द्रने हँसकर कहा,—"आपको बुलाकर साथ लेलूँ[गा, प]र, आपको बुलाने आऊँ या न आऊँ, पर ठकुराइ[न र]ाधिया के हाथका मीठेका दोना और गिलौरी लेने मु[झे ज]रूर ही आना होगा।

लोचन खड़े होकर बोले,—"यह तो ठीक है। मुँह यदि

धर्मशीला सुन्दरीका सतीत्व अति पवित्र वस्तु है। उसकी रक्षा करनेके लिये सहायता का प्रबन्ध करना सभी का कर्त्तव्य है। सती पर कुभाव से दृष्टि डालना पाप है—ये बातें क्या सर्वसाधारण नहीं जानते? सभी जानते हैं। फिर इपका-चोरीसे सती की रक्षा का आयोजन क्यों किया जाय? ऐसे काम प्रकाश्यमें हो जाने ठीक हैं,—इत्यादि विचारते-विचारते वे अन्तःपुरमें चले गये।
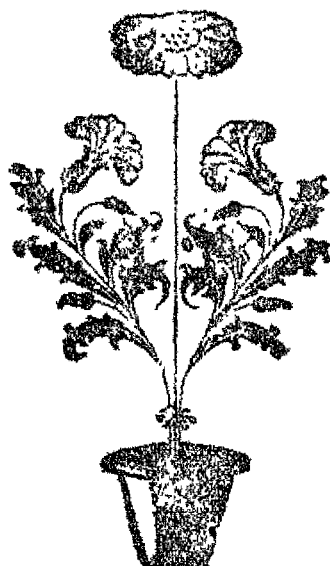
तीसरा परिच्छेद ।

ज्ञानेन्द्रनाथ प्रायः सदैव अन्तःपुरमें जाकर सबसे पहले लावण्यके सहास्य मुखका दर्शन किया करते थे। यदि किसी कारणसे लावण्य दूसरी जगह होती, तो ज्ञानेन्द्र का पदशब्द सुनते ही वह तत्काल वहाँ आजाती थी। यह वक्त, उनके जलपान करने का था। यदि किसी दिन किसी आवश्यकीय कार्य्यमें लगे रहनेके कारण उन्हें ज़रा भी देर हो जाती, तो लावण्य स्वयं दासी भेजकर—तक़ाजे पर तक़ाजा करके—बुलवा लेती थी। किन्तु ज्ञानेन्द्रके आज ठीक समय पर स्वयं आजाने पर भी, लावण्यकी वह लावण्य-छटा दिखायी नहीं दी—आज वह सुहाग भरा सहास्य मुख उन्हें नहीं दीख पड़ा। आज उस मधुर कण्ठकी मधुर ध्वनि—मुरलीके निनादने ज्ञानेन्द्रके कर्ण-कुहरोंमें सुधा वर्षण नहीं किया। आज उस आनन्दमयीके आनन्दोच्छ्वासने उनके हृदयको अभी तक शीतल नहीं किया। ज्ञानेन्द्रनाथ अपने

वह अपने सोनेके कमरेमें गये और पलँग पर बैठकर सोचने लगे—इस संसारमें गुणवती पत्नीके समान और कोई चीज़ नहीं है। जिस भाग्यवान्‌ने सुकृति-बलसे लावण्यमयीसी स्त्री प्राप्त की है, संसारमें उसके लिये दुःख तिरोहित है। मेरी धन सम्पत्ति, मान-मर्यादा सब कुछ नष्ट हो जाने पर भी, यदि लावण्य पास रहे, तो मैं एक भी आह मुँहसे न निकालूँ। तुच्छ धन-सम्पत्ति आने-जाने वाली चीज़ है, किन्तु संसारमें लावण्यसी स्त्री और कहाँ ?

उसी समय अपराधी बालिका की भाँति लावण्य आकर उपस्थित होगयी। उस समय आँचलके छोर से उसका गला फँसा हुआ था और दोनों हाथ बँधे हुए थे। उसके मुख पर हँसी, नेत्रोंमें प्रेम और सर्वाङ्ग मानो आनन्दसे सराबोर था। उसी अवस्थामें लावण्यने कहा,—"दासी हाज़िर नहीं थी, बड़ा कुसूर हुआ। धर्म्मावतार सुचतुर विचारक हैं—आसामी कसूर की सब बातें सुनकर ही दण्डकी व्यवस्था करें।"

ज्ञानेन्द्र हँस कर बोले,—"बिना सवाल-जवाब सुने, और बिना गवाही लिये मैं हुक्म देता हूँ कि, असामी बे कुसूर छूटा। अब तक क्या कर रही थीं, इसका जवाब दो।"

लावण्य—पहले आपके लिये थोड़ा जल-पान लेआऊँ, हुत देर होगई है ——

कहा—"जल-पान खाने नहीं जाने नहीं दूँगा; पहले बतलाओ, अब तक कहाँ थीं ?"

लावण्य—किसी बुरे काममें नहीं थी।

ज्ञानेन्द्र—यह मैं जानता हूँ। यदि कोई हाथमें गङ्गा-जली लेकर भी कहे कि, आज लावण्य को मैंने एक बुरे काममें देखा था, तोभी मैं विश्वास नहीं कर सकूँगा। मेरी परवा न करके निश्चयही तुम किसी अच्छे काममें लगी होगी ; पर इससे क्या ? तुम्हें कारण ज़रूर बताना होगा।

लावण्य—अच्छा बताती हूँ, छोड़िये। एक श्रेष्ठ अनुष्ठान के लिये आपसे अनुरोध करना है, उसीके बारेमें अब तक सलाह-मशवरा कर रही थी।

ज्ञानेन्द्र थोड़ा आगे सरक कर बोले—"लो, छोड़ दिया। बताओ, वह कौनसा अनुष्ठान है ?"

लावण्य ज्ञानेन्द्रके प्रश्नका बिना कुछ उत्तर दिये ही भीतर चली गयी। ज्ञानेन्द्र देखते के देखते रह गये। सोचा,—चाहे जो हो, अनुष्ठान का पता अभी निकालूँगा। जलपानकी थाली हाथमें लिये लावण्यने फिर उसी कमरेमें प्रवेश किया। ज्ञानेन्द्रके पास आकर कहा,—"लीजिये, आप खाते जाइये, मैं

बातें सुनना नहीं चाहता। मैं अब जीवनदादा के मकान पर जाता हूँ, ठाकुरानीके हाथ का जलपान करूँगा।

लावण्य—और मैं दादा महाशय की सेवामें नियुक्त होऊं? तुमने मुझे बेकुसूर बताया था, अब यह हुक्मके खिलाफ कारंवाई क्यों?

ज्ञानेन्द्रने कहा,—"एक अपराधमें बे-कुसूर हो, बारम्बार अपराध करने पर क्षमा नहीं मिल सकेगी। बताओ, अब तक तुम किस काममें व्यस्त थीं?"

लावण्य—हुजूर, बिना आपकी सहायताके मैं कौनसा काम कर सकती हूँ—आप तो यह बात भली भांति जानते हैं। फिर मैं किस काममें थी? आप जलपान कीजिये, जो होगा सो आपको स्वयं मालूम हो जायगा।"

बातका उत्तर देनेके पहले ही लावण्यने ज्ञानेन्द्रके मुंहमें थोड़ासा मीठा दे दिया। अब तो उन्हें जलपान शेष करना पड़ा। ताम्बूल खाते-खाते ज्ञानेन्द्रने कहा,—"समझ गया, सब कुछ समझ गया। अब मैं नहीं पूछता। मैं जाता हूँ, बाहर बहुतसा काम करनेके लिए पड़ा है।"

लावण्य—छुट्टी एकदम नामन्जूर। इस वक्त यहीं भी

त खड़ी हुई है। लावण्य उसका हाथ पकड़ कर घरमे
थ लायो। कहा—"इन्हें पहिचानते हो?"

ज्ञानेन्द्र—नहीं, याद नहीं, कहीं देखा है वा नहीं

लावण्यने हँसते-हँसते कहा,—"छिः! तुम पुराने अक्षतघ
! अपने आदमी को तुम हमेशा भूल जाते हो।"

ज्ञानेन्द्र—अपने आदमी! यदि ऐसा है तो बेशक
धाय है। लेकिन मैं तो नहीं जानता कि ये कौन हैं

लावण्य—बिना समझाये तो तुम कुछ भी नहीं समझते
तुम्हारी बहुत नज़दीकी रिश्तेदार हैं। मुखर्जी की कन्य
र तुम्हारी बहिन हैं।

ज्ञानेन्द्रने कहा—"नवीना? तुमने जिस तरह मुँह ढ
खा है, उससे पहचानना मुश्किल है।"

लावण्य हँसती हुई बोली—"अगर मुँह न ढकतीं, तो क
दम सदरमें सिर उघाड़े, बिना किसी सङ्कोच के, तुम
ड़ कर बैठ जातीं? फिर बिना घूँघट काढ़े तुम जै
विश्वासी पुरुष के पास आनेका साहस भी तो किसी क
हीं होता।"

नवीनाने लज्जासे मुँह नीचा कर लिया और अस्प
रसे कहा,—"अच्छा बहू, अब मैं जाती हूँ।"

आयी हो। बचपनमें तुम्हें बहुत बार देखा है। अब बहुत दिन बिना देखे बीत गये। तुम तो हमारी पुरानी आत्मीया हो।"

लावण्यने कहा—"तो और क्या चाहती हो? अब तो पुरानी स्मृति की बात भी याद आगयी। अब जो कुछ कहना हो, निःसङ्कोच कह डालो: अब दूसरे की सहायता से क्या मतलब?"

नवीना ने फिर अस्फुट स्वरसे कहा—"मैयासे जो कुछ कहना है, तुम आपही कहो, मैं तो जाती हूँ।"

ज्ञानेन्द्रने पूछा—"नवीना, क्या तुम मुझसे कुछ कहने आयी हो? लावण्य, तुम्हीं न कहो?"

लावण्यने कहा—"जब आपको स्वयं अपनी बहिनके पुराने स्मृति की बात याद आगयी है, तब तुम उसके रूपकी बात भी जानते होगे। मैं तुम्हें अपनी ननद का घूँघट उघाड़ कर मुँह भी दिखा सकती हूँ, किन्तु सम्भव है तुम उसे देखकर पागल हो जाओ,—यही डर है। इस मुखको देखकर यहाँके बहुतसे आदमी पागल होगये हैं। इस समय आपको उन पागलों के हाथसे बहिन को बचाना चाहिये।"

ज्ञानेन्द्र—अच्छा। मैं अभी लोचन दादाके साथ नवीना की ही बात कर रहा था। मुझे नवीना की सतीत्व-रक्षाका

लावण्य—तो तुम बाहर भी नवीना की ही चिन्ता कर
थे? अच्छा, बहुत अच्छा है। क्यों न हो? जैसे तुम मदन
हन हो, तुम्हारी भगिनी भी वैसे ही तिलोत्तमा है
बाहर ऐसी बहिन की हित-चिन्तना तुम्हारे लिये योग्य
है। लेकिन कुछ खबर है? रघुनाथ चक्रवर्ती तुम्हारी
बहिनको उड़ाकर लेजाने की फिक्रमें है। उसका भी
विधान सोचा?

ज्ञानेन्द्र—अचरजमें भरकर एकदम उठ खड़े हुए; बोले—
या कहा? रघुनाथ नवीना को उड़ा ले भागनेकी फिक्रमें
? वह तो बड़ा दुष्ट है! क्या उसने नवीना से कुछ कह
?"

लावण्य—हाँ, निरुपाय होकर ही नवीना को तुम्हा
स आना पड़ा है।

ज्ञानेन्द्रने कहा—"मैं इसका यथासाध्य प्रतिकार करूँगा
वीना, तुम किसी तरह भी मत डरो।"

अतिशय विरक्त और चिन्तित भावसे ज्ञानेन्द्रने वहाँ
स्थान किया। लावण्य से विदा लेकर नवीना भी अप
र को चल दी। रास्तेमें उसने सोचा—"लावण्य का कै
च्छा भाग्य है! ज्ञानेन्द्र कैसे गुणमय, स्वरूपमय देव पुरु

चौथा परिच्छेद ।

बाँध टूट गया। उस दिन ज्ञानेन्द्रबाबूके मकान से लौट कर नवीनाके मनमें भयानक वासना का उभार हुआ। लावण्य और ज्ञानेन्द्र का प्रगाढ़ प्रेम, परस्पर का अगाध अनुराग और दोनों का प्रीति-व्यवहार देखकर नवीनाने उसी स्थान पर गरम साँस छोड़ी थी। तभीसे उसके हृदय का बाँध टूट गया। जो जल-प्रवाह बाँध से रुका होता है, यदि उसके बाँधमें एक छोटासा भी छेद हो जाय, तो सब पानी उसी तरफ और उसी रास्ते से निकलने लगता है। बाँध टूट जाता है। नवीना का धर्म-ज्ञान कुवासनाके प्रवाह में बह गया। लावण्यमयीके समान होनेके लिये उसका भी हृदय व्याकुल हो उठा।

नारी-हृदयकी गति ऐसी ही होती है। रघुनाथ चक्रवर्तीके प्रेमका प्रस्ताव उठाने पर जो नवीना भय और लज्जासे

॥-तेज का विसर्जन कर दिया। आज वह लावण्यमयी
ति सर्वसुखी बननेके लिये चिन्ता-मग्न है।

एक अँगरेज़ी कविने कहा है :—Frailty, Thy name
omen, वास्तवमें शिथिलता और भङ्गुरता स्त्री-चरित्र व
असली नज़ारा है। कब और किस कारणसे स्त्री-हृदय
न हो जाय—यह निर्णय करना कठिन है। जो स्त्री ब
वधानीसे, अति सतर्कतासे अपने चरित्रको निर्मलता
कर रही है, सम्भव है एकदिन उसकी वह सावधा
सामान्य कारणसे ही नष्ट हो जाय। सम्भव है, अति तु
ना उसके स्थिर और सुदृढ़ हृदयको विचलित करके पा
में ला पटके। हम जो स्त्री-जातिसे बहुत कुछ आ
होनेकी भावना रखते हैं, अनेक दायित्वपूर्ण और गुरु
र्यों का भार उनके ऊपर रख देते हैं, एवं किंचिन्मा
भिचार देखकर ही उनके शिथिल स्वभाव और हीन चरित्र
र दोषारोपण और कलङ्क लगाने लगते हैं, उन्हीं बातों
र्थकताके लिये हमने अँगरेज़ी कवि के उक्त वचनको य
लोचना की है।

ऐसे चरित्र-दोष मनुष्यके ऊपर नित्य-प्रति घटते रहते है
ज्ञ मनुष्य-समाज इस सम्बन्धसे एकदम उदासीन है। मनु

समाज कैसी अव्यवस्थासे दूषित है ! जिनके हाथ
ारी आदर की वस्तु का रक्षण-भार है, जो समाज संस्थिति
र पदार्थ सतीत्व-धर्म को अक्षुण्ण रखनेके लिये सृजी गई
उनके चरित्र-गठन और उचित शिक्षा प्रदानकी ओर
यथेष्ट ध्यान नहीं दिया जाय,मगर उनको केवल पुरुषान्त
र्म-भावना-शून्य भावसे लोक-लोचनकी आड़में बन्द कर
ेही निश्चिन्त हो जायँ । इसमें कोई शक नहीं कि
प्रकार अन्त:पुर-निवास धर्म्म-रक्षाका प्रधान सहाय
न्तु उसके लिये इनसे भी अच्छे अनेक उपाय हैं । यदि
न्त:पुर-निवास के उपायके साथ वे उपाय भी काममें ला
वें, तो समाजका बहुतसा कल्याण हो सकता है । बचपन
लिकाके हृदयमें सुनीति-सञ्चार करनेका योग्य यत्न कर
, चरित्र-गठनके लिये जैसी शिक्षाओं की आवश्यकता
पहलेसे ही किशोरीके हृदयमें बद्ध-मूल कर देनी चाहिये
रण कि—त्याग, धर्म्मानुष्ठान और न्यायपरता आदि
ज उसी कोमल क्षेत्रमें अङ्कुरित होनेसे भविष्यमें हृद
बल बढ़ा करता है, अतः अति तुच्छ कारण या अति क्षु

करके और अनुराग पाकर वह लावण्य की भाँति आनन
ल बिताती ; पर अब तो ऐसी कल्पनाएँ वृथा हैं। प्रानि
इतना सुख, इतना सन्तोष देखकर चित्तको दृढ़ रखन
को साध्यसे बाहर हो गया। अब उसे अपनी वर्त्तमान
अवस्थामें ही नेत्रों का जल पोंछते-पोंछते जीवन व्यतीत करन
ा—यह सोचकर मनको बहुत समझाया, पर वह किसी
ह भी नहीं माना। मनकी गति ऐसी ही होती है; जि
य वह बुरी चिन्ता वा कुमार्ग-पर दौड़ने लगता है, तो
साधारण क्षमता न होने पर उस समय उसकी गति रोकन
ा मुश्किल होता है। नवीना का मन बड़ा दुर्दान्त है
किसी प्रकार नहीं मानना चाहता। कुचिन्ता और कुप्रवृ
दूर करने का एकमात्र यही उपाय है कि, उनकी ज
उखाड़ कर फेंकदी जाय। बाद को उनका रूप महाभयङ्कर
जाता है। नवीना की कुचिन्ताएँ बहुत शीघ्र बढ़ गयीं
तने खूब समझ कर देख लिया कि, उसकी तुलना
कुत्सामयी कुत्सित रूपमें परिगणित होने योग्य है। वास्तव
वण्यके रूपमें कुछ भी विशेषत्व नहीं। केवल अनुराग
तोष, अवस्था की निष्कलताजनित निश्चिन्तता और हृद
सरलता ने ही उसे परम शोभामयी बना दिया है।

सुन्दरी ठहराया। एक बात और है कि वह लिखी-पढ़ी भी है, लावण्यके अभिभूत उसकी बुद्धि, विद्या, और हृदय का तेज बहुत ज़ियादा है ; फिर विधाताने ऐसा अन्याय क्यों किया ? लावण्य क्यों अनायास ही ज्ञानेन्द्रनाथ जैसे देवता को अपना दास बनाकर परमानन्दके साथ समय व्यतीत करती है।

चिन्ता-वृक्ष फल-फूलोंसे युक्त होकर अतिशय सतेज होगया ; अब नवीनामें इतनी क्षमता नहीं, जो उसको उखाड़ कर दूर फेंक सके। उस समय अभागिनी उसी चिन्ताकी सुशीतल छायामें बैठकर अपने तईं सर्व-सुखी समझने लगी। अब चिन्ताका आश्रय त्याग करना, उसे बुरा मालूम होने लगा। हृदय का पूरे तौर से अधःपतन हुआ, लेकिन उसे बाहर का एक आदमी भी नहीं जान सका। किस तरह आशा की सफलता हो—बस एकमात्र यही उसका कर्त्तव्य होगया। वह कल्पनासे अपनेको लावण्यके स्थान पर बैठा समझ कर, जाग्रत अवस्थामें ही सुखका स्वप्न देखने लगी।

ज्ञानेन्द्रनाथने इस सती ब्राह्मण-कन्या पर आनेवाली आपत्तियों के दूर करनेके लिये बहुतसी सुव्यवस्थाएँ करदी हैं। मकानके चारों ओर दीवार चुनने के लिये ईंटें आगयी हैं और राज-मज़दूर काम भी करने लगे हैं।

ज्ञानेन्द्रका दर्शन भी ...

र काम भी कर देती है। अब नवीना को घरसे बाह
नहीं रखना पड़ता।

यही नहीं ; स्वयं ज्ञानेन्द्रनाथ भी दो दिन बराबर साँझ
ाथ लोचन दादाके साथ घूमते-घूमते नवीनाके घर तक
थे। उनके भाव और बातचीत सुनकर पड़ोसियों
समझ लिया कि, नवीनाके साथ सभी को अच्छा व्यवहा
ना चाहिये। यदि कोई आदमी उसके खिलाफ का
गा, तो गाँवके ज़मींदार खफ़ा हो जावेंगे। ज्ञानेन्द्रनाथ
दिन रघुनाथ चक्रवर्त्ती को भी बुलाया था एवं कौशल
थ अनेक प्रसङ्गोंके पचड़ोंसे समझा दिया कि, गाँवकी
ायोंको कुपथगामिनी होनेसे बचाना सभी का कर्त्तव्य है
कौशलमें नवीनाका नाम व किसी घटना विशेषका उल्ले
करने पर भी, इन साधारण उपदेशोंसे ही रघुनाथने खु
ाझ लिया कि, बिना किसी विशेष कौशल या चतुरतापू
ायों का आश्रय ग्रहण किये, नवीना को हस्तगत करने
छा करना विडम्बनामात्र है।

नवीना के ऊपर ज्ञानेन्द्रनाथने आशातीत अनुग्रह प्रकाशि
या है। उसका धर्म्म अक्षुण्ण रखने और उसे सब चिन्ताओं
मुक्त करने के लिये अब अनेक आयोजन होगये हैं।

संसार के मनुष्य बड़े ही निन्दाप्रिय होते हैं। जब-जबसे सुरेन्द्रने ज्ञानेन्द्रनाथके ब्राह्मण-कन्या की निश्चिन्तताके लिये उतनी व्यवस्थाएँ कीं, लोग उन्हें बुरा समझने लगे। बहुतों को तो यह खयाल हुआ कि, इस प्रस्फुटित पुष्प-सम शोभामयी युवती ने ज्ञानेन्द्रनाथ के समान विचारवान व्यक्तिको, मालूम होता है, अपने फन्देमें फाँस लिया। अनेक स्थानोंमें, बहुतसी छोटी-छोटी मजलिसों में, ज्ञानेन्द्रनाथ के चरित्रके सम्बन्धमें और अभिप्रायों को घोषणा होने लगी। किन्तु इन मेंसे किसी बातों में से एक भी ज्ञानेन्द्रनाथ को नहीं सुनाई दिया। कर्त्तव्य-पालन-जनित आनन्दमें पड़ोसी मनस्तुष्टि-साधनके निमित्त तत्परताके साथ प्रयत्न करने लगे।

नवीना उस दिनके अलावा एक और दिन भी ज्ञानेन्द्रके मकान पर गयी थी। लावण्यके साथ उसका साक्षात हुआ था, पर ज्ञानेन्द्र नहीं मिले। इससे उसका मन और मुख कुछ उदाससा होगया। पर लावण्यने समझा—ये सब चिह्न विचारो की दरिद्रावस्थाके हैं—उसे अपने सतीत्व की चिन्ता है। अच्छा है, विधवाओं को इसी प्रकार रहना चाहिये। मैं इस साध्वी का बहुतसा दुःख दूर करूँगी।

किन्तु लावण्य। ... कहना पड़ता है, यदि ...

वह अभागिनी तुम्हारी हिंसासेही जर्ज्जरित और विध्वस्त होरही है—वह तुम्हारे स्थान पर स्वयं अधिकार करनेके लिये भयात्मक कल्पनाओंसे मतवाली होरही है।

पाँचवाँ परिच्छेद ।

दो बार बन चुकी है, सब विषयों की सुव्यवस्था भी हो गयी है। नवीनाको खाने-पीने आदिकी अब कोई चिन्ता नहीं है। प्रायः लावण्य ज़रू-रत-बेज़रूरत सीधा भेज दिया करती है। उसमें सभी आवश्यकीय पदार्थ होते हैं। इस समय जो कपड़े आये हैं, उनसे साल भर अच्छी तरह बीत जायगा। किन्तु इतना होने पर भी पापीयसी नवीना ज़रा भी निश्चिन्त नहीं। जिस कालानलसे उसका हृदय पूर्ण है, उसकी मात्रा घटती नहीं, वरन् दिनोंदिन उन्नति ही कर रही है। पर किया क्या जाय? ऐसी भावनाओंके—ऐसी दुर्दमनीय प्रवृ-त्तियोंके—फन्दे में पड़ कर बचना बड़ा कठिन काम है।

सारी रात दारुण चिन्ता रहनेके कारण, अनिद्रासे थककर, सवेरा होजाने पर नवीनाने शय्या-त्याग की। आँगनमें एक [illegible]
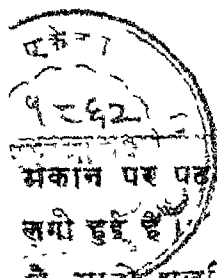
मकान पर पहुँचे गया है। उसकी मा घरके काम-धन्धोंमें लगी हुई है। इधरकी अड़में खड़ी नवीना ऐसी मालूम होती है, मानो अलसिता, आवेशमयी, निराभरणा और शुभ्र वस्त्र-धारिणी, किसी सुदक्ष शिल्पी-विरचित एक शोभामयी मूर्त्ति खड़ी है।

रास्ते की ओर से दर्वाज़े पर एक कोमल आघात हुआ। नवीना की निश्चल प्रतिमा कुछ हिली। धीमे स्वरसे पूछा—"कौन है?"

बाहरसे जवाब आया—"मैं हूँ।"

कण्ठ-स्वर सुनकर नवीना आगन्तुक को नहीं पहचान सकी, किन्तु यह समझ लिया कि, पुकारनेवाला मर्द नहीं, कोई औरत है। धीरे-धीरे दर्वाजे के पास आकर नवीना ने सांकल खोलदी। हँसती-हँसती एक प्रौढ़ाने मकानके अन्दर प्रवेश किया। उसके हाथमें नगदार जड़ाऊ चूड़ियाँ, कानमें पीतल की बालियाँ और एक सफेद धोतीसे तमाम शरीर ढका हुआ था।

नवीनाने पूछा—"चौधराइन, इतने सवेरे कैसे आई?"

चौधराइन एक नापित की बहू थी। उसने कहा,—तुम्हारे लिये सवेरा है। मालूम होता है, आजकल रात को नींद नहीं आती।

नापित-बहूने कहा,—"ऐसी सुन्दरियाँ यदि स्वयं न जागें तो लोग उन्हें ज़बर्दस्ती रात भर जगाये रखते हैं। जागने में बुराई क्या है ?"

नवीना की विरक्ति की मात्रा एकदम बढ़ गयी। बोली "तुम किस लिये आयी हो ? यदि मा से कुछ काम हो, तो जाओ वह रसोई-घरमें है।"

मुँह फेरकर नवीना वहाँसे कुछ हट गई। नापित-बहूने पास आकर कहा,—"गुस्सा क्यों करती हो ? सभीको ऐसे दिन नसीब नहीं होते, यह हम जानती हैं। हमारा भी एक दिन था—हम भी एक दिन तुम्हारी तरह हर एकसे बात करना पसन्द नहीं करती थीं ; पर समय जो चाहे सो करा लेता है !"

यह सुन नवीना कुछ सोचने लगी। एक विशेष घटना को लक्ष्य करके नापित-बहू ऐसा कह रही है। नवीना यह बात भली भाँति समझ गयी। पर वह क्या चाहती है—इन बातों से उसे क्या मतलब ? चौधराइनके उद्देश्यको नवीना स्थिर न कर सकी। उसने साफ़-साफ़ पूछना चाहा। बोली- ठीक है।"

नापित-बहूने कहा—"ठीक तो है ही ; लोग लोगोंके

[illegible]

नहीं, थोड़ी होशियारीकी भी ज़रूरत है। गोता लगाते वक्त, हाथमें सोप आयी या मोती—यह समझने वाला ही बहादुर है।"

नापित-बहू हो-हो करके हँस पड़ी। बोली—"यह ठीक है। तुममें ऐसीही बहादुरी है—तुमने हुनि-मन सोचा है। यह रूपका बाज़ार जिसके आगे खुलेगा, वही घर का रास्ता भूल जायगा।"

इतनी देरमें नवीना साफ तौरसे नहीं तो थोड़ा-बहुत समझ गयी। एकबार सोचा—इस पापिष्ठा कलङ्किनी नापित-बहू के साथ अधिक बातचीत करना ठीक नहीं। लेकिन बाद को यह बात ठहरी कि, चौधराइनने जितनी बातें कहीं है, उनसे साफ़ मालूम होता है कि, वह उन्हें लक्ष्य बनाकर ही एक भयङ्कर समाचार फैलाने वाली है। सम्वाद क्या है, उसे अच्छी तरह जान लेना आवश्यकीय है। बोली—"रूपका बाज़ार जल जाय, विधवा ब्राह्मण-कन्या की कैसी बहादुरी! तुमने क्या समझ कर ऐसी बात कही?"

नापित-बहूने कहा—"जिसे सब जानते हैं—समझते हैं, मैंने वही कहा है। चारों तरफ़ की दीवारें, नौकरानी की सेवा, दर्वान की हर वक्त की हाज़िरी और बाबूजी का

इस व्यापारमें पहले हम जैसोंकी शागिर्दी करनी पड़ती है। हम तुम्हें पक्का माँझी कर देंगी, नौका ख़ूब चलेगी।"

नवीनाने विचारा, इस काममें नापित-बहूकी सहायता ग्रहण करने से काम चलेगा। अच्छा है—आजही सुप्रभात है। बोली—"यहाँ पर खड़े-खड़े ठीक बातें नहीं होतीं; चलो, घरमें चलें।"

चौधराइनने सोचा, सुन्दरी उसकी मुट्ठीमें अब आनाही चाहती है, ज़रा और खिलाना चाहिये। बोली—"हमें घर बाहर एकसाही है। तुम पींजरे की पक्षी हो, इसीसे घर की तलाश है, चलो।"

सदर दर्वाज़े की कुण्डी लगाकर नवीना घर की तरफ़ चली। नापित-बहू उसके पीछे थी; घर के भीतर न जा, वे दर्वाज़े की चौखट पर ही बैठ गयीं। एक पीढ़े के ऊपर नापित-बहू बैठी, दूसरे पर नवीना बैठ गयी। चौधराइनने कहा,—"जो नाचने बैठी हो, तो घूँघट से क्या मतलब? पक्षी मारना चाहती हो, तो एक को क्या मारना? जितने हाथ आवें, सभीको मार देना चाहिये।"

नवीनाने कहा—"अभी तो एक भी हाथ नहीं लगा। जिसे

श्रलों से परिचय हुआ, चौधराइन से अपने मन की बा
ा किसी कपटसे कह डाली। नापित-बहूने उसका का
करने का बचन दिया। नवीना आशा की मधुरवा
कर निश्चिन्त हो गयी।

बहुत देर के बाद चौधराइनने प्रस्थान किया। फि
ने की हामी भरी। उसने रघुनाथ का काम पूरा करने क
र लिया था, पर अवस्था देखकर और ही व्यवस्था कर
ी। एक बात सोची। उसने जैसे चरित्र वाले के सा
तक बातें कीं, उससे उसे मालूम हो गया कि, स्त्री
सामर्थ्य है। वह चेष्टा करनेसे पुरुषको अध:पात क
ला दिया सकती है। मेनकाने विश्वामित्रको खूब मसृ
ाया था। ज्ञानेन्द्रनाथ खूब सावधान होने पर भ
ोंसे ज़ाहिर होता है, नवीना पर बेतरह आसक्त होगये हैं
ल लोक-लज्जाके भयसे ही देखभाल कर काम करते हैं
सङ्कोच त्याग देनेसे ही सब गोल मिट जायगा। लाभान्वि
ना ही तो मेरा उद्देश्य है। फिर दोनों ओर क्षमा क्यों
हूँ? रघुनाथके लिये नवीना और नवीनाके लिये ज्ञानेन्द्र
लजाने पर ही दोनोंसे ढेरों लाभ होगा। अच्छा है—बहु
छा है। एक मज़दूरी करने आयी थी—दूसरी अन

छठा परिच्छेद।

सायङ्कालके समय शचीन्द्रनाथ कभी-कभी घूमने जाया करते थे। आज भी उसी अभिप्रायसे बाहर आकर देखा कि, लोचन खड़े हुए हैं। बोले—"अच्छा हुआ दादा, मैं आपको पुकारनेके लिये मकान की ओर जाता था। चलो, ज़रा खेतों की तरफ़ घूम आवें, कोई काम तो नहीं करना?"

लोचनने कहा—"काम तो मुझे सारे दिन रहते हैं। तुम्हें आशीर्वाद देना और दिनमें एक बार परलोककी चिन्ता कर लेना, यही मेरे काम हैं।

शचीन्द्र हँस दिये और लोचन दादा का हाथ पकड़ कर मैदान की तरफ़ प्रस्थान किया। रास्तेमें चलते-चलते कहा—"दादा, बड़ी भूल हुई—ठकुराइनजी को घरमें बन्द करके छोड़ना ठीक नहीं, उन्हें भी साथ ले चलें।"

ठकुरादून लानेके तो दिन अब रहे नहीं; फिर ऐसा व्यस्त करने वाला कौनसा काम है?"

रामलोचन—मेरे दिन तो नहीं रहे, लेकिन कितने एक आदमियों का कथन है कि, जिनके दिन हैं वे सम्बन्ध-असम्बन्धका भी ख़याल नहीं करते—चारों ओर हाथ साफ करते हैं। उनका शासन करना मेरे लिये कठिन होगया है।

ज्ञानेन्द्रने कहा—"आपने कोई गुप्त बात सुनी है क्या?"

रामलोचन—हाँ, चन्द्रमामें कलङ्क लगने का अपवाद सुना है।"

ज्ञानेन्द्र—यदि चन्द्रमें कलङ्क न लगता, तो उसे पूर्ण कोई नहीं कहता। ख़ैर, बात खोल कर कहो।"

लोचन—लोग कहते हैं—तुम रक्षक होकर भक्षक बन गये हो—तुम नवीना को निरापद करने के यत्नमें लगकर स्वयं आपत्तिके गढे में जापड़े हो, उसे भी साथमें ले गिरे हो।

यह सुनकर ज्ञानेन्द्र कुछ देर चुपचाप खड़े रहे। नीचा [illegible] कर लिये एकबार अपने कृत-प्रयत्न की आलोचना की; [illegible]चा—"नवीनाके लिये जैसा यत्न किया गया है, उसीको [illegible]कर लोग मेरा कुभावपूर्ण चिन्तन समझ लेते हैं। —

विश्वास किया जा सकता है, पर तुम्हें सर्वथा
ा सुनकर कभी विश्वास नहीं करूँगा। कितने प
भागी ग्रामीण परनिन्दा करके ही दिन व्यतीत करते हैं
हारे समान निष्कलङ्क चन्द्रमें कलङ्क लगाना ही उनका
भीष्ट है। उन्हें बिना ऐसा किये चैन नहीं पड़ता। उन्
ोंने ऐसी अफ़वाह फैलायी है।"

ज्ञानेन्द्र—खैर, वे जो कुछ करते हैं, अच्छा ही कर
। पर मिथ्या अपवादके प्रवाह का बँधा पुल ठहरता नहीं—
ल्दी टूट जाता है। मेरे मनमें आजतक भी नवीना
े कोई कुभाव नहीं पैदा हुआ। मैं यह भी जानता हूँ कि
ीना सती है, सतीत्व-रक्षाके लिये वह सदैव व्याकु
ती है। जिन-जिन साहाय्यों के द्वारा दुःखिनी की सुविध
, मैंने उन्हीं सबको किया है। जिन्हें ज़रा भी कर्त्तव्य क
न है—जिनमें थोड़ीसी भी सामर्थ्य है, उन सबको नवीनाक
ी तरह सहायता करनी चाहिये। यदि ऐसा सदनुष्ठा
नेमें भी दोष है, तब तो मैं निरुपाय हूँ। इसका मैं
ा, कोई भी प्रतिकार नहीं कर सकता। मैं जो कुछ क
ा हूँ, उसे अनेकों विघ्नोंके उपस्थित होने पर भी कि

ा बदनाम कर देंगी, इसमें नुक़सान ही क्या है?" अब दो
मैदान की ओर न जाकर गाँवकी ही तरफ़ चल दि
संकीर्ण जङ्गलमय मार्ग को ते कर नवीना के मकान
जा पहुँचे। रामलोचनने द्वार खटखटाया। भीतर
ीना की माँ ने पूछा—"कौन?"

बाहर से रामलोचनने जवाब दिया—"मैं हूँ राम
चन, साथमें ज्ञानेन्द्र भी हैं।"

नवीना की माँ ने दर्वाज़ा खोल दिया। वृद्धको देखक
कुछ पीछे हट गयी। लोचन गाँव के रिश्ते से उस
सुर लगते थे। उम्रमें बड़ी होकर भी गाँव-गिराँव
यों में श्वसुर समान व्यक्तिको देखकर लज्जा करने
ति अब भी प्रचलित है। नवीना की माँ सिरका कप
ा नीचा करके दूर ही खड़ी रही। रामलोचनने घ
तर प्रवेश नहीं किया। ज्ञानेन्द्र आँगनमें जा पहुँचे
होंने नवीना की माँ को प्रणाम किया।

बहुतसे आशीर्वाद देकर नवीना की माताने कहा
कलसे ननी की तबीयत ख़राब है, उसे भूख नहीं
त को नींद नहीं आती, कभी-कभी बक उठती है। को
म नहीं कर सकती। क्या होगया, यह पूछने पर भी न

इसके बाद उसने अपेक्षाकृत ऊँचे स्वरसे नवीना क
ार कर कहा,—"नवो भैया आये हैं।"

नवीना आयी। ज्ञानेन्द्रके आनेकी बात जानकर उस
्के रक्तकी गति सहसा तेज हो गयी। अङ्ग-प्रत्यङ्ग उस
ारसे अवसन्न होगये। मुँह सूख पड़ गया। मतवालों के
ा रखती हुई नवीना को आती देखकर ज्ञानेन्द्र कुछ आ
। बोले—"वहीं रहो,—कष्ट मत करो, कहो क्या तक
फ़ है?"

कैसा मधुर शब्द है! ज्ञानेन्द्रके सदय और कोमल वाक्यों
ीनाके हृदयमें मानो अमृत-धारा बहा दी। क्या प्र
ा, नवीना उसका क्या उत्तर दे?—यह बात वह एकद
ल गई।"

ज्ञानेन्द्रने फिर पूछा—"बात क्यों नहीं बताती' नवीना
लनेसे क्या कष्ट होता है?"

नवीनाने ज्ञानेन्द्रके मुँह पर दृष्टि डाल कर देखा
ट सरलतापूर्ण थी—सहानुभूतिसे भरी थी। बोली,—तक
फ़! तकलीफ़ कुछ नहीं। न मालूम मन कैसा होगय
; कुछ, अच्छा ही नहीं लगता।"

भयानक यन्त्रणा नहीं पैदा हो गयी ?—इसीसे तो उसक
अच्छा नहीं ? कहती है, कुछ अच्छा नहीं लगता।"
इसी समय नवीना का छोटा भाई मकानके भीतर घुसा
समय उसे खाना खानेका अभ्यास था। ज्ञानेन्द्रने उस
एक मीठी-मीठी बातें कहीं। बालकने माँ से खा
गा। जननी पुत्र को भोजन देने चली गयी। ज्ञानेन्द्र
।—"क्यों नवीना, तुम्हारा मन अच्छा क्यों नहीं है ?"
बड़ी मीठी बात है—अतिशय आदर की बात है
ीना कुछ भी उत्तर न दे सकी। मुँह नीचा कर लिया
ज्ञानेन्द्रने फिर पूछा—"क्या डाक्टर भेजदूँ ?"
नवीनाने संक्षेप में जवाब दिया—"नहीं।"
ज्ञानेन्द्र—इलाजसे शरीर अच्छा हो सकता है, ध
न न देनेसे पीड़ा बढ़ जायगी, नुक़सान होगा।
नवीना बोली—"हो, जो शरीर किसीके भी काममें न
या, उसके नष्ट होनेसे नुक़सान ही क्या ?"
ज्ञानेन्द्र समझे—यह दारुण वैधव्य की कठिन वेद
ीत आक्षेपोक्ति है। बोले—"ऐसा मत समझो। शर
रक्षा करना ही धर्म है, शरीर खोने पर इस काल की

नवीनाने जवाब दिया—"नहीं गयी, बड़ी दीदी पाके कुछ समझाने लगीं, यही सोचकर, नहीं गई।"

ज्ञानेन्द्रने समझा—जो कलङ्क कहानी चारों ओर फैल रहा है, वही सम्भव है लावण्यमयीने भी सुनली हो—यह सोचकर ही नवीना उसके सामने जानेमें शंकित एवं लज्जित होती है। बोले—"यह क्या बात है! वह क्या कुछ समझेंगी? तुम कल ही वहाँ जाओ, इससे शरीर स्वस्थ होगा। तुमसे मुझे बहुतसी बातें करनी हैं, तुम्हारे न आनेसे ही मैं यहाँ आया हूँ। किन्तु यहां पर इस वक्त, सब बातें नहीं की जा सकतीं। अब जाता हूँ, इस समय तुम्हें किसी चीज़ की ज़रूरत तो नहीं?"

माँ बेटे का भोजन देकर लौट आई। नवीनाने जवाब दिया—"ज़रूरत! आपसे कितनी ज़रूरतें कहूँ? आप पुरुष हैं, सभी सुखोंके अधिकारी हैं, नारी-हृदयमें कितनी ज़रूरतें भरी पड़ी हैं, उन्हें किस प्रकार आपको समझाऊँ? यदि समय मिलेगा, सुयोग होगा, तो सभी ज़रूरतें जताऊँगी।"

यह कह कर नवीना जल्दीसे चली गयी। ज्ञानेन्द्र उसकी बातोंका कुछ भी मतलब न समझ सके। समझे—"नवीना का दिमाग़ बिगड़ गया है। यदि ऐसा हुआ तो इस कुल-[illegible]

पुरुष हो। नारी-हृदयकी आवश्यकताओं को नहीं समझ सकते।" बात बहुत ठीक है। लावण्यमयी इच्छा करने पर इस रहस्यको, सम्भव है, जान सके। सभी बातें उससे कहनी चाहियें। बिना उसकी सहायताके मैं कुछ स्थिर नहीं कर सकता।

नवीना की माँ को सावधान रहने और किसी समय नवीना को अपने मकानपर भेजने का अनुरोध करके, नवीनाके मनकी अस्थिरताके सम्बन्धमें आशंका प्रकाश करते हुए ज्ञानेन्द्र नाथने सब से विदा ली।"

सातवाँ परिच्छेद ।

भजहरि राय कुछ दिनोंसे ज्ञानेन्द्रनाथके ऊपर बेतरह चिढ़ उठे हैं। भजहरिका एक छोटा भाई था। नाम था रामदास। रामदास विदेशमें नौकरी करते थे। उनकी बड़े भाई पर अमानुषिक श्रद्धा थी। इसीसे वे अपने ख़र्च-पत्तरके लिये थोड़ासा रखकर, बाकी मासिक आमदनी भजहरिके पास भेज दिया करते थे। भजहरि उन रुपयोंसे अनेक व्यवसाय करते थे। थोड़ीसी ज़मीन भी ख़रीद ली थी। खेती-बारी का भी काम था।

कुटुम्बमें भजहरि की कन्या और स्त्री थीं। कन्या कभी ससुराल नहीं जाती थी। उसके एक लड़का हुआ था। इसके अलावा उनके भाई की बहू और उसके तीन पुत्र एकत्र रह कर भजहरिके कुटुम्बमें स्वच्छन्द दिन व्यतीत करते थे।

एक साल हुआ रामदास विदेशमें ही चल बसे। रामदास

थी। रामदास की स्त्री व पुत्र कोई भी अपनी धन-सम्पि
पता नहीं रखते थे। ज्येष्ठ भ्राता भजहरिके ऊपर ही र
सका सब कुछ निर्भर था। उनकी स्त्री-पुत्र सभी भज
रिके आज्ञाधीन थे।

बड़े सादे ढंग से रामदासका क्रिया-कर्म समाप्त होगया।
के बादसे कुटुम्बमें घोर अशान्तिका आविर्भाव हुआ।
हरि अब स्वत:परत: जताने लगे। कहने लगे कि, रामदा
छ भी नहीं छोड़ गया। उसकी स्त्री का भरण-पोषण
लन-पालन भजहरिकी भाँति दरिद्र व्यक्ति के लिये अ
म्भव है। यदि विधुभूषण पढ़ना छोड़ कर कुछ पैदा क
, तब तो संसार चले वरना और कोई उपाय नहीं।

प्रस्ताव क्रमश: भारी हो उठा छ: मासके बाद भज
रिने भ्रातृ वधू और अपने भतीजों को अलाहिदा कर दिय
समय विधुभूषण मकान पर ही था, बहुतसे लोगों
धुभूषण और उसकी माँ से कहा—"सभी सम्पत्ति रामदा
पैदा की हुई है। इसलिये वे न्यायत: निर्भय होकर अप
य सम्पत्ति ले सकते हैं। किन्तु ऐसी बातोंपर विधुभूष
उसकी माँ ने तनिक भी ध्यान नहीं दिया। अलग होने
ाव से वे व्याकुल हो उठे। घरके बड़े आदमियोंने जो कु

मुँह तक भजहरिके सामने बहुतसा दुःखड़ा रोया। विधु-भूषणने कातरता से भाके चरण पकड़ कर बहुत कुछ प्रार्थना की। उसके दोनों भाइयोंने भी अपना असफल होता देख ज्येष्ठ तातसे, पाँव पकड़ कर विनती की; पर फल कुछ न हुआ। उस दिन जैसा आर्त्तनाद मचा, सुनकर पाषाण भी गल जाता। उस हृदयभेदी दृश्यको देखकर, गाँव के सब आदमी व्याकुल हो उठे, किन्तु भजहरिका हृदय न पिघला। उन्होंने अपने दुःख दारिद्र्यकी अशेष कथायें कह कर, माँके साथ भाईके पुत्रोंको अलाहिदा करनेका संकल्प न छोड़ा।

अलाहिदा होना पड़ा! विधुभूषणके ऊपर कृपा करके भज-हरिने अपना खरीदा एक मकान देदिया। मकान बहुत छोटा था। दो खपरैल और तीन आमके पेड़ोंके सिवा उसमें और कुछ न था। भजहरिने यह बात साफ़ कहदी कि, यह सम्पत्ति उनके निजी धनसे खरीदी हुई होनेपर भी इस समय भाई की बहू और तीनों भतीजे कहाँ मारे-मारे फिरेंगे—विचार कर और अपने नुक़सान का कुछ भी ख़याल न कर उन्हें दे डाली है। कुछ टूटे-फूटे बर्त्तन भी इनायत किये। और कुछ नक़द भी दिया, सो नहीं। नक़द क्या उनका भाई छोड़ गया था।

गहने भी मेरे धनसे बने हैं। पर बिचारी को नंगी घोटाये फिरते देख लज्जा आवेगी—अतः उनके ऊपर भी थोड़ीसी कृपा की गयी। खैर, इतना ही सही। बेचारे भजहरि बड़े दयालु हैं।

विधुभूषणने पढ़ना-लिखना बन्द कर दिया। भजहरिकी ऐसी ही सम्मति थी। कारण कि, आपने फर्मा दिया था कि, विधुभूषणके कुटुम्ब की देख-रेख करनेके लिये मेरे पास वक्त नहीं। हारकर विधुभूषण कॉलिज छोड़ घरकी व्यवस्था में लगे। पर खाएँ क्या? बिना पैदा किये तो एक मुट्ठी अन्न भी अप्राप्य है! गाँव के दस बारह आदमी विधुभूषणको साथ लेकर ज्ञानेन्द्रनाथके पास आये। ज्ञानेन्द्रनाथने पहले से ही सब कुछ सुन रक्खा था—भजहरिकी ईमानदारीसे वे सोलहों आने वाकिफ थे। उन्होंने एक दिन खुद भजहरिसे साक्षात् किया। उन्हें अपना चाचा बताया, कौशलसे उनके अन्याय-आचरण की भी याद दिलायी। कहा गया कि, वे विधुभूषण की सहायता करें।

लेकिन भजहरिने सिवा अपनी दरिद्रताके दुखड़े रोनेके और कुछ नहीं कहा। बोले—"ज्ञानेन्द्र बाबू, आप तो सब कुछ जानते ही हैं, रामदासने मेरी आज तक किसी

काम की ...

ों—मैं अब हद होनेका आया। कैसे इतना बोझ
ाऊँ ?"

किसी प्रकार भी अपनी प्रार्थना सफल न होती देख
ाकर ज्ञानेन्द्र लौट आये। अनन्तर उन्होंने विधुव
ालत का आश्रय ग्रहण करने की सलाह दी। मुकद्दमे
ी अपने ऊपर लेनेका वचन दिया। इस प्रस्ताव की खब
भजहरिके कानों तक पहुँच गयी। लेकिन भजहरिव
मन न डिगा।

उधर विधुभूषण नालिश करने के प्रस्तावसे असम्मत हुअ
ने सोचा, जो होना था सो तो होगया। अब जितना सम
क जो के ऊपर मुकद्दमा चलानेमें खर्च होगा, उतने सम
ार पैसे की फ़िक्र करनी चाहिये। यही बात ठहरी।

नालिश करने की सलाह हुई है, यह सुनते ही भजह
घसे आगबबूला होगये। उन्होंने अब विधु और उस
नों भाइयों का संसारसे नामो-निशाँ मेटने की ठहरायी
र ज्ञानेन्द्र वगैरः जिन-जिन आदमियोंने विधुभूषण
हायता करनी चाही थी, उनपर भी वे अतीव क्रुद्ध
े। एकदम विधुका सर्वनाश करनेके अभिप्रायसे, उन्हों
री का इल्ज़ाम लगाकर विधुभूषण पर फ़ौजदारीमें मु

नेसे उसका एक बार भी व्यवहार न किया। चुपचाप ही
ह खरीदा गया था और चुपचाप ही अबतक उसकी रक्षा
ती चली आयी थी। अलाहिदा होने—साझा टूटने
मय, जब नक़द कुछ नहीं मिला और अन्न की चिन्ता हुई
दश रुपयेसे विधुभूषणने राघवपुरके एक आदमीके पास उसे
रवी रख दिया। इस खबरके भजहरिके कानोंमें जानेसे
नकी विरक्ति की सीमा न रही। विधुभूषण अक्सर सलाह
शवरे के लिये उनके पास जाया करता था। एक दिन ऐसे
समय हज़रत शालकी बात पूछ बैठे। विधुभूषण शाल
रीदने का कोई ज़बरदस्त प्रमाण न दे सका। भजहरिने
हा—"वह शाल मेरे जमाई का है, तुमने उसे चुरा लिया
।" विधुके पैर तले की मिट्टी निकल गयी, चुपचाप काँपता
ाँपता घर लौट आया। शाल खरीदने का वास्तवमें कोई
माण नहीं था। जिस आदमीसे वह लिया गया था, अनेक
न्धान करने पर भी उसका मिलना कठिन था। फिर शाल
रीदते या ओढ़ते भी उसे किसीने न देखा था। दुःखके
सारमें घोर चिन्ताका आविर्भाव हुआ। विधुके छोटे भाई
ौर माँ डरके मारे मुर्दा जैसे होगये।

बहुत शीघ्र विधु गिरफ़ार होगया। जिसके पास दुशाल

समझते थे, अतः वे समझ गये कि यह षड्यन्त्र भजहरिका है।

सहृदय ज्ञानेन्द्रने विधुभूषण की माँ और उसके भाइयोंको आश्वासन देकर शान्त किया और विधुके छुड़ानेमें जिस बातकी ज़रूरत होगी, उसे करनेके लिये वचन दिया। घरमें जिस चीज़की कमी थी, उसे पूरा करके भजहरिसे मिलने गये। भजहरि परम धार्मिककी भाँति हृदयकी बहुतसी कातरता जताकर समझाने लगे—"अपना लड़का और भाईका लड़का दो नहीं। उसे दागदार और चोर बना कर कोई भी पुलिसके हाथमें फँसाना पसन्द नहीं करेगा। विधुने चोरी की है, तोभी उसे क्षमा कर देना चाहिए, किन्तु दूसरे की चीज़ है—माल का मालिक जमाई है—मैं नहीं। जमाई बिना उसे पाप का दण्ड दिलाये नहीं मानेगा। मैं इसमें क्या करूँ? क्या जमाईसे बिगाड़ूँ? बिगाड़नेसे तो विपत्तिमें पड़ना पड़ेगा; लड़की सम्बन्ध छोड़ देगी; नाती नातासे वञ्चित रहेगा। इसलिये भय्या, मैं बड़ी हूँ।"

एक कहावत है,—"चोर न माने धरम-कहानी।" ज्ञानेन्द्रनाथने अनेक विनय की, पाँव तक पकड़े, पर भजहरि के कान पर जूँ भी न रेंगी। तब वे उनके जमाई के पास गये। जमाई उनसे भी ——

मुख्तार नियुक्त किये और जिन-जिन बातोंसे मुकद्दमा उसके खिलाफ़ न हो उनको व्यवस्था करदी। पहली पेशीके दिन ज्ञानेन्द्र स्वयं अदालतमें उपस्थित हुए। डिपटी मजिस्ट्रेटने विधुभूषण के इज़हार लेकर और आकार प्रकार देखकर मुकद्दमेमें कुछ सन्देह किया; वकीलने ज़मानत की प्रार्थना की। हाकिमने पूछा—ज़मानत कौन करेगा?"

उस समय ज्ञानेन्द्र अगाड़ी आ खड़े हुए। हाकिमने उन्हें देखकर कहा—"आप आसामी की ज़मानत करेंगे?"

ज्ञानेन्द्रने कहा—"हां, मेरा विश्वास है कि, यह व्यक्ति निरपराध है। इसलिये मैं निःसंकोच इस युवक के लिये ज़ामिन बनने को तैय्यार हूँ।" उसी वक्त ज़मानत मञ्जूर हुई। विधुभूषणको साथ लेकर ज्ञानेन्द्रनाथ राघवपुर लौट आये। ज्ञानेन्द्रके ऊपर भजहरि बहुत चिढ़ा, ऐसा होनेसे उसके द्वेष की मात्रा अत्यन्त बढ़ गयी। किन्तु धन-मान-ज्ञान और हरेक विषयमें ज्ञानेन्द्र अतुलनीय थे, इसलिये उनके खिलाफ़ कुछ न कर सकने के कारण वह बहुत कुढ़ा।

आठवाँ परिच्छेद ।

जमानत द्वारा छूटनेको विधु फिर अपने ताऊजी के पास गया। उसने सोचा, वास्तवमें मेरे द्वारा ताऊजी का कोई बड़ा भारी अपराध हो गया है, इसीसे वे क्रुद्ध हैं। लिहाज़ा वह निष्कपट होकर, उनके चरण पकड़ कर अपना अज्ञात अपराध क्षमा कराने लगा। भजहरिने अक्रोध भावसे विधुसे बातचीत की एवं उनके जमाईने जो एक तुच्छ कारणसे फौजदारी अदालतमें उसे घसिटवा मँगवाया—इसपर दुःख प्रकट किया। अन्तमें यह भी कहा कि, मैं अब मुक़द्दमा उठा लेनेके लिए उनसे प्रार्थना करूँगा। क़ायदे के माफ़िक़ गवाह और प्रमाण उपस्थित न कर, प्रमाणोंके अभावसे मुक़द्दमा डिसमिस हो जाय, उसकी व्यवस्था करूँगा।

गाँव के और दो एक आदमियोंने भजहरिसे ...

बहुत कुछ ...

का शिकार बनाना ही भजहरिका उद्देश्य है। जो आदमी उसीके प्रयत्नसे लिखा-पढ़ा, उसीके अन्नसे इतना बड़ा हुआ, अब वह उसीके विरुद्ध झूठी बातोंके सहारे दीवानीमें नालिश करने की कल्पना करता है! उसे रसातल भेजनाही अच्छा है।" अनेक प्रकारकी युक्तियाँ दिखायीं, न्यायकी बात कही, विधुके अपराध की बात भी स्वीकृत की गयी, किन्तु भजहरि न माना।

स्वयं ज्ञानेन्द्रनाथने भजहरिसे इस अन्याय-पथको छोड़ देने की प्रार्थना की। उत्तरमें भजहरिने बहुतसी मीठी बातोंसे शोक प्रकाश किया, आनुगत्य स्वीकृत किया एवं पेशीके दिन मुकद्दमा डिस्मिस हो जानेके उपाय भी ज्ञानेन्द्रनाथ को बताये। सच तो यह है, यदि जमाई का अनुरोध और सम्बन्ध न होता, तो ऐसा काण्ड कभी न होता। जो कुछ होगया, भजहरि उसके लिये दुःखित हैं। वे मुकद्दमा यकायक तो न उठा सकेंगे; पर हाँ, डिस्मिस् होजानेकी अवश्य कोशिश करेंगे।

लेकिन उपरोक्त बातें दिखाऊ मात्र हैं। ज्ञानेन्द्र, विधु एवं अन्यान्य आदमी समझ गये कि, मुकद्दमेमें शिथिलता करना दूर है, भजहरि आसामी को प्रचुर दण्ड दिलानेमें कुछ भी उठा रक्खेगा। मुकद्दमा झूठा है

उनकी माँ और भाइयों को विश्वास दिलाया कि, विधु छू
जायगा। फिर वे वकील मुख़्तारोंसे मिले। बहुतसे सलाह
मशवरे किये। इसके बाद उन्होंने आवश्यकतायोंसे दो दिनके
पहले कलकत्तेको प्रस्थान किया। उस समय पेशीमें तीन
दिन बाकी थे।

नियमित दिन यथासमय विधुभूषण अपनी सच्चरित्र
के बारे में साक्षी देनेवाले कई एक गवाह लेकर अदालत
पहुँचा। उसके पक्षमें अच्छे-अच्छे वकील थे। उन्होंने
विधुभूषण को सब प्रकार से आशा दिलायी। लेकिन उन्होंने
यह भी कह दिया कि, पुलिस की रिपोर्ट देखनेसे मालूम
होता है कि, वादीने मुक़द्दमा अच्छी तरह खड़ा किया है
और अदालतके सामने प्रमाण भी अच्छा देगा। ज़ौहरी
कहेगा—माल जमाई का है, जमाई उसे अपना खोया
बतायेगा और खोजानेका प्रमाण देगा। इसके बाद पुलिस और
अन्यान्य आदमी गवाही देंगे कि, यह माल विधुभूषणने
अपने रक्खा था। इसलिये वादी-पक्ष का प्रमाण मज़बूत
समझा जायगा, इसमें सन्देह नहीं।

लोभी आशा इस बात की है, कि, हाकिम दयालु है

ा क्षीण और दुर्बल सम्भावनाके ऊपर उसे कुछ विश्वास
ा । ज्ञानेन्द्रनाथने उसे ईश्वर पर विश्वास करनेका उपदे
ा था । विधुभूषण निष्कपट चित्तसे आपत्ति निवार
लिये विपन्न-बान्धव श्रीहरिकी चरण-चिन्ता करने लगा।
ज्ञानेन्द्र कह गये थे कि, जिस तरह होगा मुकद्दमेके दिन
ँ अवश्य उपस्थित रहेंगे, पर वे अभीतक नहीं आये
न-जिन ट्रेनोंसे कलकत्तेसे आकर समयपर अदालतमें पहु
ेकी सम्भावना थी, उन सबका समय बीत गया, तो
ष्ात् नहीं हुआ ! ऊपर भगवान् और सामने ज्ञानेन्द्र,—
ही विधुभूषणके अवलम्ब हैं । ज्ञानेन्द्रके आजानेपर बहु
र ढाढ़स बँध सकती है ; लेकिन उनका तो कहीं पता
ीं ।

भजहरिने मुँहसे कह दिया है कि, गवाह पेश करने
थिलता करूँगा और मुकद्दमा रद्द करनेकी भी कोशि
ा जायगी । लेकिन यहाँ तो कुछ और ही ढँग है । उस
ष बहुतसे गवाह हैं, बार-बार पुलिसके साथ सलाहें
ा हैं । उसके सम्प्रदायमें एक व्यक्ति हमारा परिचित है
;स रघुनाथ चक्रवर्ती को अभी नहीं भूले होंगे ।

विधुभूषण ग्रामके तीन आदमियोंके साथ एक ओर नीच

थक गये, अभी तक ज्ञानेन्द्र नहीं आये! उनके सामने पहुंचनेसे ही हमारा काम सिद्ध हो जाता।"

विधुभूषणने कहा—"न मालूम क्या हुआ? कोई विघ्न तो नहीं हो गया! बिना बीमार हुए वे रुकने वाले आदमी नहीं। यह सब मेरा भाग्य है! उन्होंने सब कुछ किया, वकील-मुख्तार किये, ढेरों रुपया उठाया, उन्हीं पर मेरी आशा है, वहीमेरे सम्बल हैं। मेरे भाग्यमें जो कुछ लिखा है, वह चाहे भलेही होकर रहे, पर उनका मङ्गल हो! बिना उनको देखे मैं चिन्ताहीन नहीं हो सकता।"

जिस रास्तेसे अदालतके मैदानमें गाड़ी आया करती थीं, विधुभूषण उसी ओर एकटक दृष्टिसे देखता रहा। बहुतसी गाड़ियाँ आयीं, विधुके हृदयमें आशा का सञ्चार भी हुआ; लेकिन ज्ञानेन्द्र किसी गाड़ीसे नहीं उतरे। अब कोई गाड़ीका पता, नहीं रहा। ज्ञानेन्द्रने वकीलोंसे भी कहा था कि, वे तीन दिनके बाद पेशीके रोज़ अवश्य अदालतमें आ पहुँचेंगे। लेकिन उनका कहीं भी पता नहीं—यह वास्तवमें चिन्ता का स्थल है।

हताश होकर कातर विधु मनही मन भव-भयहारी हरिका स्मरण करने लगा।

नवाँ परिच्छेद।

कुछ ही देर बाद हाकिमने इजलासमें प्रवेश किया। चारों ओरसे एक अस्फुट रवके उठनेसे कोलाहलकी सृष्टि हुई। पहरेवाले कोलाहल को दूर करने का प्रयत्न करके स्वयं द्वन्द मचाने लगे। बहुतों का हृदय भयसे काँप उठा। बहुतसे—शीघ्र ही शत्रुके दमनकी व्यवस्था होगी—विचार कर प्रसन्न हुए।

मुख्तार लोग अस्फुट स्वरसे वादी-प्रतिवादीके साथ बात-चीत करने लगे। किस ज़िरह का कैसा जवाब देना चाहिये, उसे सिखाने लगे। हाथ फैला-फैलाकर अपने-अपने पक्षसे फीस माँगने लगे। कोई वादी बड़ के पेड़की जड़में बैठा अपने गवाह के हाथमें पानका बीड़ा देकर कातर भावसे—"देखना दाई, रक्षा करना—"कहकर प्रार्थना करने लगा। किसीने 'पने गवाह से पुरानी रिश्तेदारी निकाल ली। कोई प्रति-ादी अपना काम सिद्ध होजाने पर काली के सामने बलि लेकी प्रतिज्ञा करने —

कि, उस समय वहां पर एक व्यग्रता और उद्वेग का ही साम्राज्य था।

विधुभूषणने अदालतमें आते ही कोर्ट-सब-इन्सपेक्टरके साथ मुलाकात करली थी एवं उन्हींके आदेशसे वह अब तक एक स्थान पर खड़ा हुआ था। इस समय एक पहरेवालेने आवाज लगायी। जिस वक्त वह पहरेवालेके साथ कोर्ट-सब-इन्सपेक्टरके पास आरहा था, उस समय अमरेन्द्रने एक-बार रोषपूरित नेत्रोंसे उसके ऊपर दृष्टिपात किया और रघु-नाथ ने कुछ धीमे स्वरमे कहा—"आपके बड़े लाल महाशयको आफतमें डालने की चेष्टा करनेसे ही आज विधुभूषण, तुम्हें बड़े घर जाना पड़ेगा।"

उस समय जवाब देनेका मौका नहीं था, इसीलिये विधु-भूषण चुपचाप अपने काम पर चला गया। मुकद्दमेमें बहुत-सी आश्चर्यजनक घटनाओंका समावेश था। जमींदारने साले को चोर बता कर पकड़वाया है। प्रिटीन चोर के लाल मुकद्दमेके प्रधान गवाह और मददगार बताये जाते हैं। चोर बी० ए० पास और सच्चरित्र मनुष्य है। अतः ऐसे रहस्यमूलक मुकद्दमे का रहस्य प्रकट होगा, देखनेके लिये मनमें कौतूहल पैदा होना आश्चर्य नहीं। फलतः, आज आदमियों की भीड़ ...

मुक़द्दमेके सिवा और कोई बड़ा मुक़द्दमा हाथमें नहीं था जो छोटे-मोटे दो एक थे, उन्हें समाप्त करकेही—विचारकने इस गुरुतर व्यापारको हाथमें लेनेका विचार किया। वकीलों की भी यही इच्छा थी। यह अच्छा हुआ। जब तक ज्ञानेन्द्र नाथ न आजायँ, तब तक इसमें विलम्ब होना ही भला है।

अन्तत: डेढ़ घण्टा और बीत गया। डेढ़ बजेके समय मजिस्ट्रेटने इस मुक़द्दमेमें हाथ डाला। पहरेवालों से घिरा हुआ विधुभूषण पहले से ही कोर्ट-सब-इन्स्पेक्टर के साथ निरूपित स्थानपर खड़ा था। विचारक ने पूछा—"इस आसामीके लिये रायपुर के ज़मींदार ज्ञानेन्द्र बाबू ही तो ज़ामिन थे?"

कोर्ट-सब-इन्सपेक्टर ने 'हाँ हुज़ूर' कह कर प्रश्नका उत्तर दिया। नियमित प्रणाली से विचार आरम्भ हुआ। सारे अभियोग अच्छी तरह से प्रमाणित हुए। पुलिस-रिपोर्ट के साथ वादी-पक्ष का पूरा-पूरा मिलान था। चोरी का माल भजहरि के जामाता की सामग्री है, यह निःसंशयित रूपसे प्रमाणित हुआ। भजहरि ने गवाही देनेके समय कौशल से अ-[illegible]जे की इस दुर्बुद्धि पर दुःख प्रकट किया और कहा जमाई [illegible] क्रुद्ध हो जाने के भयसे उसे इस मामले में फँसना पड़ा—

हमें कहा—"एक मास पहले विधु ने उसके मकान में ए
दी का हुक्का भी चुरा लिया था। अगले दिन वह उसी
कान पर मिला, लेकिन निशानी साफ़ नदारद थी।"

हाकिम और स्वयं वकीलों ने भी इन गवाहों पर अने
कारकी बहस की, किन्तु रघुनाथ किसी तरह भी विचलि
हुआ। विचारक ने दया-पूर्ण दृष्टि से एकबार विधु
पर नज़र डाली। समझा, इस मुकद्दमे में बिना दण्ड पा
ासामी को छुटकारा नहीं मिलेगा

विधुभूषण ने कहा—"वह गाना मैंने कलकत्ते में ख़रीद
।" किन्तु इस बारे में वह कोई ज़ोरदार प्रमाण न
का। विचारक ने बहुतसे प्रश्न किये; किन्तु विधुभूषण
मर्थन के सिवा और कोई अच्छा उत्तर न मिल सका
धुभूषण के पक्षमें रामलोचन और अन्य एक व्यक्तिने गवा
कि—"असामी एक सच्चरित्र पुरुष है, वह ऐसा काम कभ
हीं कर सकता।" लेकिन आईन की दृष्टि से विधु पूरा-पूर
पराधी है। उसकी पूर्व-सच्चरित्रता—अच्छा चालचल
निर्विवाद रूप से प्रमाणित होने पर भी मौजूदा वाक़्ये
सका चौर्यापराध पूरे तौर से साबित कर दिया है। ऐ
वस्था में, उसे जेलमें आईनमु राजपुरुष को सामा

ता है, शिक्षित और सच्चरित्र है। ऐसे व्यक्ति को बहुत दिनोंके लिये कलङ्कित कर उसकी भावी आशाओंको नष्ट करना ठीक नहीं। लेकिन स्पष्ट देखते हैं कि, आसामी विधुभूषण का अपराध अच्छी तरह साबित होगया है। इस-लिये ऐसी अवस्था में इस युवक को दण्ड देना ही पड़ता है।

अदालतमें जितने आदमी थे प्रायः सभीने समझ लिया कि, हाकिमके मुँह से जो आज्ञा निकलने वाली है वह इस नवीन युवक के भविष्यजीवन को अपनी कुत्सित गोदसे कल-ङ्कित कर देगी। यह देख हृदयमें वेदना हुई, बहुतों के दिलोंमें विधुके लिये सहानुभूति प्रकट हुई। भजहरि प्रसन्न हुआ।

विचारकने फिर कहा—"आसामी कहता है कि, यह शालका जोड़ा उसने कलकत्ते में खरीदा था; किन्तु इस बात का उसके पास कोई प्रमाण नहीं। मैं समझ गया कि, आसामी के पास उसका अभाव भी है। यदि कुछ दिनों बाद भी वह कोई प्रमाण देनेकी संभावना दिखाता, तो मैं मुकदमे को और मुल्तवी रखता। किन्तु उसकी आशा नहीं, अतएव—"

अदालत के सामने—दूरपर एक घोड़ागाड़ी भागी आ

ध्वनि बाहर भाग रही है। हाकिम 'अतएव' तक प्रकट कर, इस उत्कट शब्दके सुननेके लिये कुछ देरको चुप होगये। एकत्रित लोगों ने समझा—इस 'अतएव' के उपसंहार में विधुभूषणका सर्वनाश घोषित होगा। गाड़ीके अद्भुत खट खट-शब्द ने विधुके हृदय में भारी आशाका सञ्चार किया। रामलोचन व्यस्त भावसे बाहर के बरामदेमें दौड़ आये। बहुतसे आदमी दर्वाजेसे बाहरकी ओर देखने लगे। कुछ ही देरमें भाड़े की गाड़ीके अश्वापन्न दोनों घोड़ोंने अदालतके मैदानमें प्रवेश किया। उस वेगवान गाड़ीके यथास्थान खड़े होनेके पहले ही उसमें से धूलि-धूसरित-काय एक युवा पुरुष कूद पड़ा और दौड़ कर अदालतमें आ घुसा। युवा ज्ञानेन्द्रनाथ है।

विचारकने वाक्यका उपसंहार न कर पूछा—"आप भी क्या इस मुकद्दमे के गवाह हैं?

ज्ञानेन्द्र ने कहा—'नहीं, मैं सविनय निवेदन करता हूँ कि, और तीन आदमी इस मुकद्दमें में गवाही देनेके लिये आये हैं। आपकी कृपा होने पर वे गवाही देंगे।"

मैजिस्ट्रेट ने कहा—"शालका जोड़ा विधुभूषणने खरीदा था—इसका यदि कोई प्रमाण हो, तब तो गवाही ली जासकती है ——"

तब हाकिम के हुक्मके अनुसार तीन भद्रवेशी धूलसे सने पुरुषोंने अदालत में प्रवेश किया। दर्शक आनन्दित हुए। उन तीनोंको देखते ही विधुभूषण पहचान गया। उन्होंमें से एक आदमी से शाल खरीदा गया था। इस व्यक्ति के लिये विधुने बहुतेरा अनुसन्धान किया था, लेकिन कुछ पता न लगा। ज्ञानेन्द्र बाबूने किस कौशल से इन व्यक्तियोंका पता लगाकर, इस कुसमय में, अदालतमें लाकर खड़ा कर दिया? विधुके छुटकारे के सम्बन्धमें अब सभीको आशा हुई। भजहरि और उसके साथके लोग अतीव दुःखित और चिन्तित हुए। विधुभूषण ने समझा—जब विधुभूषणका भाग्य सामने है, तब तो आशा और विश्वास को मूर्त्तिमान् सामने खड़ा समझना चाहिये।

आये हुए नये व्यक्तियों की गवाही ली गयी। वे तीनों आदमी श्रेष्ठ, लब्ध और धनशाली थे। विड्म्बनामें पड़कर हठात् एक दरिद्र बालकके उपकारके लिये यह शालका जोड़ा उनमेसे एक व्यक्तिने विधुभूषणके के हाथ बेचा था। बाकीके दोनों आदमी इस खरीद-फरोख्त के व्यापारके समय वहाँ मौजूद थे। इस बारेमें विधुभूषणने बने वाले के पास दो पत्र भी डाले थे, वे दोनों पत्र खास रथके हाथके हैं—

लेख और हस्ताक्षर विधुके ही हाथके हैं, इसमें कोई सन्देह न रहा। इस प्रकारके अकाट्य प्रमाणोंके ऊपर और भी एक ज़बरदस्त प्रमाण पेश हुआ। शशिभूषणनाथके उपदेशानुसार मजहरके जमाईसे पूछा गया कि, यह शाल जब उसका है तब वह अवश्य कह सकता है कि, उसकी कोई न कोई पहचान भी होगी।"

अदालतने कहा—"यह प्रश्न अनावश्यक है। कारण—वादी-पक्षने पहले ही कह दिया था कि, शाल नया और उसपर किसी प्रकार का कोई चिह्न नहीं है।"

मजहरके जमाईने भी इसीका समर्थन किया। तब शाल बेचने वालेने कहा—"इसके एक छोर पर, हाशिये की तरफ़—कोनेके पास—एक बे-मालूम रफ़ू है। और एक पल्ले के भीतर की तरफ़, नीली पेन्सिलसे उसके नामके आदिके अक्षर एल० बी० लिखे हुए हैं। तत्काल सबके सामने पुलिसके आदेशसे शाल खोल दिया गया। गवाहके स्थान बता देने पर विचारक, सब-इन्सपेक्टर और वादी-पक्षके वकील सभी समझ गये कि, वास्तवमें वहाँ पर बे-मालूम रफ़ू है; और शालको खोल कर देखने से यह भी मालूम हुआ कि, स्पष्ट अक्षरोंमें बारीकीसे एल० बी० लिखा हुआ है।

तत्काल वज्र-गम्भीरस्वरसे विचारकने कह दिया—"भजहरि, उसके जमाई और वादी-पक्षके सभी गवाहोंने झूँठी गवाही दी है। इसलिये उन्हें उपयुक्त दण्ड मिलना चाहिये। अतः मैं आज्ञा देता हूँ कि, ये सब क्यों न फौजदारी सिपुर्द किये जायँ। इस बारेमें अब उनपर नोटिस जारी होगा।"

दर्शकोंने फिर मैजिष्ट्रेटकी जय बोली। अदालत खाली हुई, लोग बाहर आगये। उस समय विधुभूषणने धीरे-धीरे ताऊके पास आकर उनकी चरण-धूलि ली और ज्ञानेन्द्रने उसे छातीसे लगा लिया।

दसवाँ परिच्छेद।

इन्द्रनाथ रायके ऊपर अब रघुनाथ चक्रवर्ती का भी कोप हुआ। नवीना को शैलेन्द्र यदि कृपा-दृष्टिसे न देखते, तो रघुनाथ अनायास ही उसे हस्तगत कर लेता। एक दिनमें न होता, दस दिनमें--एक महीनेमें निरन्तर चेष्टासे तो मनोरथ सिद्ध हो ही जाता, किन्तु हतभाग्य शैलेन्द्रने तो सभी रास्ते बन्द कर दिये। केवल एक दिन दर्शन हुए थे, मनकी बात थोड़ीसी ही जतायी थी—फिर वह भी उसकी तरफसे नहीं। सुयोग मिलने पर बारम्बार ऐसी बातें करनेसे नारी का हृदय पसीज ही जाता।

अब नवीना बाहर नहीं आती। उसके घर का आंगन दीवारों से घिर गया। अब दृष्टि भी उसे नहीं भेद सकती। पानी दासी ला देती है, यह बहाना भी गया। पानी लाते वक्त, तो मिल जाया करती थी। इसके ऊपर फिर शैलेन्द्र का आदमी मोटीसी लाठी लेकर हर समय मकान की खबर लेता रहता है।

रघुनाथकी वासना-सिद्धिके लिए अब कोई उपाय नहीं रहा। ज्ञानेन्द्र ही इस अनिष्टके कारण हैं। इसलिये ज्ञानेन्द्र-नाथके ऊपर रघुनाथका बेहद क्रोध है। लेकिन उस जैसे गरीब आदमीके क्रोधित होनेसे ज्ञानेन्द्र जैसे धनवानका हो ही क्या सकता है। इसीसे रघुनाथ भजहरि का दोस्त बन बैठा। भज-हरिने अनेक कारणोंसे ज्ञानेन्द्र को अपना शत्रु बनाया। विधु-भूषण ज्ञानेन्द्रका आश्रित है। ज्ञानेन्द्रनाथके सहायक न होनेसे विधुभूषणको आज बड़े घरमें जाना ही पड़ता। ज्ञानेन्द्र समझ गये—भजहरिके आचरण निन्दनीय हैं। ज्ञानेन्द्रनाथने बार-म्बार भजहरिसे विधुभूषणके पक्षमें होनेको कहा था। यह एक ज्ञानेन्द्रका असह्य अपराध है। रघुनाथ और भजहरि मिल गये। अच्छा है, दोनोंका उद्देश्य एक होगया। दोनोंने ही समझ लिया कि, जिस तरह हो इस ज्ञानेन्द्रनाथको लाञ्छित करो। इसके सम्बन्धमें उन्होंने जो कुछ सलाहें कीं, उसके अनुकूल सब व्यवस्थाएँ आपाततः स्थगित करनी पड़ीं। कारण, इस समय भजहरि आफतमें हैं। इस आफतसे छुटकारा मिल जाने पर, ज्ञानेन्द्र की पूरे तौर से खबर ली जायगी। लेकिन इस समय तो बिना ज्ञानेन्द्रनाथ की कृपा-दृष्टि हुए छुटकारा भी मुश्किल है।

भजहरि और [illegible]

विपत्ति भारी है। अदालतके विवरण-पत्र पर कुलई उनके खिलाफ बातें लिखी हैं, ऐसी सूरत हालतमें जेलमें जाना ही पड़ेगा।

यथार्थ—असाध्य साधन द्वारा, ज्ञानेन्द्रनाथ जाल रसीदके का प्रमाण अदालतमें लायेंगे, यह कोई स्वप्नमें भी नहीं जानता था। इन सब अपराधोंके लिये ज्ञानेन्द्रको विशेषरूपसे कष्ट देना और उनको नस-नसको इसका फल भुगवाना चाहिये। गरज़ पड़ने पर कुम्हार गधे को खुशामद करता है। रघुनाथ और भजहरिने आपातत: ज्ञानेन्द्रनाथका शरणागत होनाही आवश्यकीय समझा। भजहरिने विधुभूषण से सब बातें कहीं, अन्तमें अपने बचावके लिये उनसे प्रार्थना भी की। विधुभूषणने भी उन्हें ज्ञानेन्द्रके पास जानेका उपदेश दिया। सुबह आठ बजे के वक्त, ज्ञानेन्द्र अपनी बैठकमें बैठा करते हैं। उनके पास उस समय बहुतसे आदमी आते हैं। कोई प्रार्थना करने आता है, कोई अपने उद्देश्य-सिद्धिकी कामनासे आता है। किसी की कन्या का विवाह है, उसमें ज्ञानेन्द्र अवश्य सहायता देंगे। कोई ज़मीन खरीदनेके लिये रुपया उधार लेने आता है। किसीका लड़का स्कूलमें पढ़ता है, पर उसके पास फ़ीसका खर्च नहीं, ज्ञानेन्द्र उसे पूरा करेंगे। बहुतसे तो
बस उनकी [illegible]

कुछ गोलमाल नहीं है । धीरे-धीरे ज्ञानेन्द्र सबकी बातें सुनते हैं एवं एक-एक करके सबकी प्रार्थनाओंके सम्बन्धमें यथासाध्य व्यवस्था करते हैं । दूर बैठे रामलोचन ज्ञानेन्द्र की बुद्धि और शरणवत्सलता की प्रशंसा कर रहे हैं ।

ऐसेही समय एक साथ तीन आदमियोंने वहाँ प्रवेश किया । ज्ञानेन्द्रने आदरके साथ कहा—"आइये भजहरि चाचा, रघुनाथ आप तो कभी इस घरको अपनी चरण-रजसे पवित्र ही नहीं करते । आइये आइये ! विधु भैया, बैठो ।"

भजहरिने कहा—"बेटा, तुम्हीं इस गाँवकी शोभाहो, तुम्हीं हमारे अवलम्ब हो, तुम्हें हमारी रक्षा करनी उचित है ।

उपस्थित आदमियोंसेसे एकने कहा—"ऐसी मत कहो, विधुके मुक़द्दमेमें बाबू तुम्हारे पास कई दफ़ा गये थे, लेकिन तुमने एक बात भी नहीं सुनी ।"

भजहरिने क्रोध-पूर्ण दृष्टिसे उस आदमीको देखा और बोले—"ज्ञानेन्द्र की बात हम कभी अमान्य नहीं कर सकते। और यह तो सभी जानते हैं कि, घरमें कभी-कभी आपसमें झगड़ा भी हो जाती है, बाहरके लोग समझते हैं उनको त अपमान होगयी, अनादर किया गया । जो हृदयकी वस्त

जानते हैं। शान्ति बाबू यदि थोड़ा सा, सब
या है, किन्तु आत्ममाहात्म्यसे, इस समय मालूम होत
इस गाँवके बहुतसे आदमी अनायास शान्तिके अभाव
र्जना साहस कर रहे हैं।"

भजहरिने इस बार करुण-दृष्टिसे बच्चोंकी तरफ देखा।
न्तिने कहा—"क्या बात है चाचा, आप कैसी रक्षा चाह
कहिये, मैं उसका प्रतिकार सोचूँगा।"

विधुभूषण एक तरफ नीचा मुँह किये लाज और अन्धार
तोंका प्रश्नोत्तर सुन रहा था। इस समय वह शान्तिनाथ
चाचों के पास जा बैठा और दोनों हाथोंसे उनके चरण पक
र बोला—"भैया, इस बार हमारी प्रार्थना न मानने प
पको मेरे प्राणोंसे धोखा खाना पड़ेगा। यदि ताजमीर
ह मिलेगा, यदि मेरे बहनोई को सज़ा हो जायगी, तो
ह दिखाने लायक भी न रहूँगा। ऐसा होने पर मुझे दे
ड़ना पड़ेगा या आत्महत्या करनी होगी। अतः आप
ी रक्षा करनी चाहिये।

उपस्थित सब लोग अवाक् रह गये। जिसको अव
ह नष्ट करनेके लिये भजहरिने निःसङ्कोच कोई बात उठा

हुए। समझे, जो दूसरोंके अत्याचारों को अनायास भूल सकता है, जो किसी कारणसे भी अपने कर्त्तव्यको नहीं भूल सकता है, इस समय संसारमें ऐसा महापुरुष केवल विधु ही है। पीछेसे रामलोचनने कहा—"मनुआ, संसार की ऐसी ही गति है। दिनकी होते हुए रात की कोई परवा नहीं करता। ज्ञानेन्द्रनाथ ने बहुत बार तुम्हारी खुशामदें कीं और यह विधुभूषण भी तुम्हारे पैर पकड़कर रोया-धोया, उस समय तुमने नहीं विचारा कि, एक दिन ऐसा आवेगा, जब तुम ज्ञानेन्द्र के पाँव पड़ोगे और इस विधुको भी तुम्हारे लिये रोना पड़ेगा।"

मनोहरने कहा—"यह बात ठीक है, पर समझने को भूल सभी करते हैं। जो कुछ होगया, उसे जाने दो; इस समय मेरी रक्षा का उपाय करो।"

रामलोचनने कहा—"भाई रघु, तुम क्या सोचकर आये? तुम तो भाई दुनियाके मालिक हो? ज्ञानेन्द्र तो तुम्हारे सामने कुछ नहीं, फिर आनेका क्या सबब? ज्ञानेन्द्रनाथमें जो दोष हैं, उनके गुण भी तुम्हारी समझमें अवगुण हैं, फिर यह कैसा विचार?"

रघुनाथने कहा—"यह क्या कहते हो दादा? ज्ञानेन्द्रनाथ

है जो ...

थामें आते हैं, हम भी उसीके लिये आये हैं। क्या ज्ञाने
ारे ही हैं? नहीं नहीं, वे सभीके बन्धु हैं।"

ज्ञानेन्द्रने कहा—"खैर, इन बातों की कोई आवश्यक
ीं। भजहरि चाचा, रघु भैय्या दोनों ही इस सम
फ़तमें हैं, चाचा साहब का जमाई भी श्वसुर की बुद्धि
से बिना कारण आफतमें पड़ा है। इन सबको र
ना हमारा धर्म है। पहले किसने क्या किया, उसे दुह
से कोई फल नहीं। दादा, किसीके निन्दा करनेसे हम
ीरमें कोई घाव नहीं हो जावेंगे। अतएव किसीकि बा
कुछ परवा न कर काम करो।

भजहरि और रघुनाथ का चिन्ताकुल मुख कुछ प्रस
ा। उपस्थित लोग भी ज्ञानेन्द्रके इस असामयिक भाव
ाकर विस्मित हुए। ज्ञानेन्द्रने फिर कहा—"जो कुछ होग
से मतलब नहीं। हाँ, तो जिस अपराधसे इनके ज
टस जारी हुआ है, उसे देखकर प्रतिकार की आ
ीं होती। हाकिमने कुल हालात अपने नेत्रोंसे देखक
ऐसा हुक्म दिया है। व्यापार का पता विवरण-पत्रमें स्प
वसे लिखा हुआ है। फिर मैं उसमें क्या कर सकता हूँ? कु
मझमें नहीं आता। यदि मुकद्दमा मेरे हाथमें आजाय तो क

ज्ञानेन्द्रनाथने कहा—"लेकिन एक बात है। भविष्यत्
मधुभूषणको कोई कष्ट न हो, इसका विचार अभी क
ना चाहिये। हम सभी जानते हैं कि, भजहरि चाचा
धुके साथ अन्याय किया है। यदि वे उसको प्राप्य सम्पत्ति
दें, तबही मैं उसमें कोशिश कर सकता हूँ, वरना सभ
आवश्यक है। ऐसा न होनेसे दश दिन बाद विधुको दीवानी
दालतमें नालिश रुजू करनी पड़ेगी। फिर मैं चाचा साह
ो कुछ भी मदद न कर सकूँगा।"

भजहरिने कहा—"यह ठीक है। पहिले इस मामलेको
पटाओ, फिर जैसा कहोगे कर दूँगा। और उसकोई
ों, यदि तुम सभी कुछ देनेकी सलाह दोगी, लोगो मैं पीछे
हीं हटूँगा।"

ज्ञानेन्द्रने कहा—"अच्छा, विचार देखिये, मेरी बात
न्याय तो नहीं है?"

भजहरिने कहा—"मैं सबके सामने कहता हूँ, कि
त ठीक है। मैं खिलाफ़ कुछ भी नहीं करूँगा।"

ज्ञानेन्द्रने कहा—"ठीक है। और रघुनाथ भैय्या, तुमसे भी
ा एक बात कहनी है। तुम्हें चाहिये कि, गाँव की लड़कियों
मा बहन की दृष्टिसे देखो। हमने तुम्हारी दो एक शिकायतें

रघुनाथ—"मैं प्रतिज्ञा करता हूँ, यदि आप आगेको ऐसी कोई शिकायत सुनेंगे तो मैं गाँवसे निकल जाऊँगा। आप यह सच ही जानिये।"

ज्ञानेन्द्रने कहा—"ठीक है, आज बहुत देर होगयी। आप शरणागत हुए हैं, आपको अभय दिया। रघुनाथ, अब मत डरो।

भजहरिने कहा—"सारांश मालूम हुआ बेटा! तुमने अभय दिया, अब हम निश्चिन्त हैं। तुम्हारा भला हो! अब हम बिना तुम्हें आशीर्वाद दिये भोजन भी नहीं किया करेंगे; लेकिन अब तुम किसी की मत सुनना। हमसे अधिक अपना और किसीको मत समझना। अब जाते हैं।

ज्ञानेन्द्रनाथने प्रणाम किया। एक-एक करके सब चले गये।
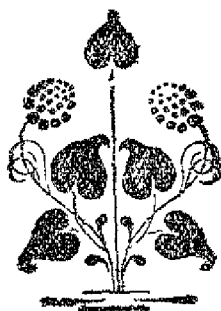
ग्यारहवाँ परिच्छेद ।

दि न बीतते जाते हैं, पर आशा नहीं मिटती
नवीना का शुष्क हृदय और सूखने लगा। जि
प्रेमके अमृतमें वह अवगाहन करना विचार क
लसी होगई थी, वह तो पूरा हुआ ही नहीं। चौधराइ
ती है, बातचीत करती है, आशाके सैकड़ों द्वार खोलती हैं
ड़े ही अच्छे—मनोमुग्धकारी चित्र खींचती है, पर स
ा ! हाथमें कुछ नहीं आता, हृदय की तृप्ति नहीं होती
स-विचारमें ही दिन बीतते जाते हैं।

ज्ञानेन्द्रनाथके साथ अब साक्षात् नहीं होता। उनक
वस्था और यत्नमें भी कुछ शिथिलता नहीं, लेकिन
ाँखोंको तो उस दिनकी भाँति नहीं थपथपाते। उन्हें देखने
ड़ा सुख मिलता था, वह क्यों बन्द होगया? क
री और की निन्दा सुनकर ही ऐसा हुआ? यदि ऐस
तो समझना चाहिये कि वे नवीना को नहीं चाहते,

नवीनाने बहुत कुछ सोचा। एक दिन उसने स्वयं ज्ञानेन्द्रके घर जाकर दया-प्रार्थना की थी, लेकिन अब वह उस दयाकी भिखारिणी नहीं है और न वह उसके लिये राज़ी है। इस समय तो वह प्रणयके अवश्य प्राप्य अधिकार-लाभमें व्याकुल है।

बहुतसी इच्छाएँ हैं, लेकिन उनके पूर्ण होनेका कोई भी रास्ता नहीं। नापितबहूने विश्वास दिलाया था, विश्वास दिला कर स्वर्ग-सुखका अनुभव कराया था, लेकिन काममें कुछ भी परिणत नहीं हुआ। अब इस तरह वक्त काटना असम्भव है। अतः इच्छापूर्त्तिके लिये कुछ न कुछ उपाय करनाही होगा।

बहुत कुछ सोचनेके बाद एक बात स्थिर हुई। उसने समझा—लावण्यमयी ही उसकी वासना-सिद्धिके मार्गमें एक-मात्र कण्टक है। लावण्यमयीके प्रेममें ज्ञानेन्द्र हर समय डूबे रहते हैं। इस प्रकार निश्चेष्ट बैठे रहनेसे तो अब ज्ञानेन्द्रके हृदयमें नवीना को स्थान-प्राप्तिकी कोई आशा नहीं। जिस तरह भी हो, इस लावण्य को ज्ञानेन्द्रनाथका नेत्र-शूल बनानेसे ही मनोरथ-सिद्धि होगी।

कई दिनके बाद ४ बजेके समय नवीना ज्ञानेन्द्रबाबूके मकान पर गई। ——

आयी देख, लावण्य बड़ीही प्रसन्न हुई और बोली—"भाईका व्याह होजानेपर ननदों को भावज विष जैसी मालूम होने लगती है, क्योंकि फिर तो उन्हें भाईके दर्शन मुश्किलसे ही होते हैं। यही बात है न बहन? लेकिन सुना है, बाबू अवश्य तुम्हारे घर ही आते हैं, शायद इसीसे तुमने यहाँ आना बन्द कर दिया। अच्छा हो, यदि मुझ कण्टक को दूर कर तुम सदा के लिये उन्हें घर रखलो।

नवीना मनही मन बोली—"हाय! यदि वे घर जाते होते, तो इस तरह क्यों तरसना पड़ता? वाकई लावण्य मेरी परम शत्रु है—उसे देखते ही मैं पाँवसे लेकर सिर तक जल उठती हूँ। वह दिन कब आवेगा, जिस दिन इसे मैं ज्ञानेन्द्रकी नेत्रों का काँटा बना सकूँगी?" प्रकाश्यमें कहा—"ऐसी बातें क्यों करती हो बहिन? भाई केवल पहलेही दो एक दिन गये थे, अब तो कतई दर्शन नहीं होते। तुमने भी ग़रीबों पर कृपा करना छोड़ दिया! एक बार बुलवाया भी नहीं। तब मुझसे नहीं रहा गया, तब स्वयं ज़बरदस्ती तुम्हें देखनेके लिये चली आयी।

लावण्यने कहा—"तुम्हारे भाई यदि बहिनका मन बहलाने

मैं दासी हूँ, उसीको जब तुमने बाँध लिया, तब मैं किधर रही?

नगीना फिर मनही मन बोली—"बहन, जो कुछ मज़ाकमें कह रही हो, यदि उसे वास्तवमें सत्य करदूँ, तब तो मेरा जन्म सार्थक है। क्या ऐसा दिन नहीं होगा?" प्रकटमें कहा—"मैं ग़रीब हूँ। तुम्हारी आश्रिता हूँ। तुम जब कृपा करके खाना देती हो, पहननेको कपड़ा देती हो, तभी मैं खाती और पहनती हूँ। तुमने मेरी इज्ज़त-आबरू रक्खी है। अगर तुम्हारी दया-दृष्टि न होती, तो अब तक कभी का मेरा नाश हो चुका होता। मज़ाकमें चाहे जो कहो, पर तुम्हारे गुण निःसीम हैं। मुझ जैसे आश्रितोंको जब आशा हो, आ सकती हूँ।"

लावण्य बोली—"ठीक है। तुम्हारी यह रूपकी दूकान ढकी न जाती, तो अबतक कभीका देश रसातल पहुँच जाता। तुम्हारी यदि इच्छा हो, तो गाँव भरके आदमियोंको पागल बना सकती हो। तुम्हें पींजरेमें बन्द करके भाइने देशको बचा लिया। ऐसा न होने पर, न मालूम कितने तुम्हारे इस रूप-स्रोतमें बहकर ग़ोते खाते। बहुतसे आदमी इसी-लिये तुम्हारे भाईको आशीर्वाद देते हैं। उन्हें देखकर जलने

लेकिन् ऐसा नहीं हुआ । इससे उसका मन दुख होगया, उसः अब तुम्हारे भाई को शाप दिया है । जो होना था, होगया

नवीना मनही मन बोली—"ऐसा रूप जल जाय ! जिः रूपके लिये ज्ञानेन्द्रनाथका मन न डिगा, जिस रूपमें आत्मविस र्जन करनेके लिए ज्ञानेन्द्रनाथ पतङ्गवत न हुए, जिस रूपके लिः केवल एक मालीका छोड़ा गुन्-गुन् करता है, उस रूपके सिरमें आग !"

लावण्यमयी फिर बोली—"तुम्हें बुलवाया नहीं—यह ाभाई अन्याय हुआ । लेकिन ऐसा क्यों हुआ, जानती हो ? तुम्हारे भाईने कह दिया था कि, नवीनाके जबतक आने की कुछ आवश्यकता नहीं । तुम्हारा मकानसे निकलना वे अच्छा ाहीं समझते । विशेष आवश्यकता होने पर वे तुम्हें पालकीमें लाना अच्छा समझते हैं । यही सोचकरही,—तुम्हारे भाई ा ऐसा भाव जानकर ही—मैंने तुम्हें वे जरूरत नहीं बुलाया।

नवीनाने कहा—"अच्छा किया । भैय्या की यदि ऐसी च्छा मुझे मालूम हो जाती, तो मैं कभी मकानसे नहीं आती । ब गलती हुई । लो जाती हूँ । यह भी अच्छा हुआ, जो य्या इस वक्त, मकान पर नहीं है । यदि वे देखते तो बड़े राज़ होते । लेकिन दिलमें एक बात थी, जिसके कहने

रुको, बाबू अब मकानमें आनेहो वाले हैं। उसी समय एकान्तमें उनके गलेसे लगकर मनकी बात कहना! लावण्यने कुछ मुँह भारी कर लिया, ज़रा बनावटी अभिमानका अभिनय दिखाया। नवीना बोली,—"बुरा न मानना जीजी! यदि वह बात भाईसे कही जाती, तो ज़रा तमाशा होता। बात तुमसे ही कहने की है, किन्तु यकायक कह देनेको मन नहीं चाहता।"

लावण्य दूसरी ओर मुँह करके बोली—"यदि नहीं कहना चाहती थीं, तो उसकी सूचनाही क्यों दी? समझ लिया बहन, मैं तुम्हारे लिये अब भी गैर हूँ। समझ लिया, इसीसे मनकी बात छिपाती हो। समझ लिया, तुम्हारे मुँह पर जैसे भाव हैं, मनमें वैसे नहीं। सो वह तो मैं बहुत दिनोंसे जानती हूँ कि, ननदों को भावजें अच्छी नहीं लगतीं। अच्छा है भाई! तुम खुश रहो, मनकी बात बताने की ज़रूरत नहीं।"

लावण्यने अपना मुँह और भी भारी बना लिया—दूसरी ओर मुँह कर लिया और हाथके काममें तन्मय हो चुप बैठ गयी। नवीनाने कहा—"ख़फ़ा मत हो; अच्छा बताओ तो, नाराज़ तो नहीं हो? छि:! मेरी कैसी बुद्धि है, सीना आदमी ...हीं चाँ...

जिस पर इतना अविश्वास है, उसे बात बतलाना पाप है। मैं कल सासजीको प्रणाम करने जाऊँगी। आपके भैय्याने कई दिनोंसे मुझसे कह रक्खा है कि, एक दिन मैं जाकर वहाँकी सब हालत देखूँ। मैं जाना-जाना करके भी अभी तक न जासकी। देखो, कल भी जाना होता है या नहीं। मैं सासजीसे सब बातें कहूँगी, उनकी सुनूँगी। और जो मुझे ग़ैर समझता है, उसकी अब खुशामद करना ठीक नहीं।"

नवीना बोली—"बस बस। जब तुमने स्वयं ऐसा विचार कर लिया है, तब तो मैं निर्भय हूँ। मैं भी कुछ और नहीं कहना चाहती थी। इसीलिये आयी थी कि, किसी तरह तुम मेरे घर चल कर अपनी चरण-रज दो—उसे अपने आगमनसे पवित्र करो। लेकिन डरती थी, शायद तुम इस बातको स्वीकार न करो। मेरी, और साथमें माकी भी, यही इच्छा है कि, जिनकी कृपासे हमने इतनी इज्ज़त पायी है, उन्हें अपने घर बुलाकर थोड़ी सेवा करें।

लावण्य बोली—"छि:! छि:! इस ज़रासी बात के लिये, तना सङ्कोच! मैं तो स्वयं सासजीकी चरण-धूलि लेने जाती, फ़र उसके लिये बुलावा कैसा?

इसी समय ज्ञानेन्द्रनाथने घरमें प्रवेश किया। पैरोंकी

नवीनाका मुँह लाल होगया। आज फिर ज्ञानेन्द्रके साथ साक्षात् होगा। कई एक दिनके बाद आज फिर ज्ञानेन्द्र की मोहन मूर्त्ति दिखायी देगी। कहना तो कुछ नहीं है, लेकिन तोभी मिलनेकी इच्छा अवश्य है। लावण्यसे कहा—"अच्छा चलती हूँ।" यह कह लावण्यके पीछे-पीछे नवीना भी चल दी। नवीना बहुत देर तक उस स्थानपर रही। ज्ञानेन्द्र से बहुतसी बातें भी हुईं। दोनोंकी ओर संकेत करके लावण्यने अनेक विद्रूपपूर्ण वाक्य भी उसे सुनाही दिये। अच्छा, उससे ज्ञानेन्द्रने कोई प्रेम-परिचायक बात भी कही? नहीं। अनुग्रहका तो परिचय मिला,—जिस तरह की कृपा बहुतसे आदमी उनसे निरन्तर पाते रहते हैं, नवीनाको भी उसी कृपा का आभास मिला। लेकिन उसकी जो इच्छा थी, उसका कुछ भी पता नहीं। मनकी यातना और भी बढ़ गयी। बढ़नेका एक कारण था। स्वामीके साथ लावण्यका निःसङ्कोच व्यवहार है, हरएक बातमें—हरएक काममें अपार्थिव प्रणयका परिचय है एवं दोनोंका हास्य और आनन्द खूब सुखकर है। उनके सुख और सन्तोष का पूर्ण विकाश देखकर नवीना का हृदय फटने लगा। जो हो, उसको ज्ञानेन्द्रको अपना बनाने की वासना प्रबल हो उठी। इसलिये कर्त्तव्य और

पड़े, यदि विश्व संसारको जलाकर भस्म करना पड़े, यदि कल्पनातीत असाध्य काण्ड भी करना पड़े, तो उनके लिये नवीना हर समय तय्यार है। ध्यानेन्द्र उन्नत हो जायँ, लावण्यका सत्यानाश हो, यही नवीना का शुभ संकल्प है।

बहुत देरके बाद लालसा-प्रदीप्त-नेत्रोंसे दीर्घ निःश्वास छोड़कर नवीना वहांसे चलदी।
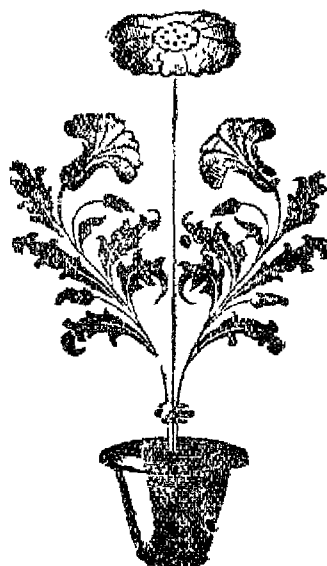
बारहवाँ परिच्छेद ।

दो पहरके दो बजे हैं। नवीना अपने मकानके उसी आमके पेड़के नीचे अकेली बैठी है। लज्जा और संकोच का कोई कारण न होनेसे देहके वस्त्र इधर-उधर हैं। दोपहरको भोजनके बाद वह कुछ सो गयी थी, लेकिन अच्छी तरह नींद न आसकी। इसीसे नेत्रोंमें थोड़ा आलस्य है। किन्तु देखनेमें उसकी वह भाव-भङ्गी बड़ी शोभामयी मालूम होती है।

सूर्य्यदेव मध्याकाश त्यागकर पश्चिम की तरफ चल दिये। आम्र-वृक्षकी प्रकाण्ड छायाने आँगन का बहुतसा हिस्सा घेर लिया। उसी छायामें नवीना ज़मीन पर बैठी। सूर्य्यकी किरणोंकी उज्ज्वलित हुआवलीमें सुन्दरी नवीना शीतल छायामें बैठकर सूर्य्यकी किरणोंके साथ अपने देहके लावण्य का साम्य प्रदर्शन कर रही है। सूर्य्यमें गर्मी है, ज्वाला है; नवीनाके रूपमें वह नहीं। नवीनाके सौन्दर्य्यमें चन्द्रमा की स्निग्धता है, बालसूर्य्यकी प्रातःकालीन ...

किरणोंकी अपेक्षा भी प्रचण्ड हैं। सूर्य्य-किरण देहको उत्तप्त करती हैं, किन्तु नवीना की आवेशमयी दृष्टि तो पुरुष का अन्तःस्थल विदीर्ण कर, हृदय को व्यथित और उत्पीड़ित करना चाहती है।

नवीना आलुलायितकुन्तला है; अति विशृङ्खल भावसे कृष्ण केशदाम सुन्दरीके कन्धों और पीठ पर गिरकर जमीन को चूम रहे हैं। कैसी सुन्दर कुन्तलश्रेणी है! चित्र अङ्कित करनेके लिये चित्रकारने मानो कृष्ण पट प्रस्तुत किया है, इस क्षेत्र पर—उस पटके ऊपर अभिप्रेत प्रतिकृति—वाञ्छित छवि अङ्कित करनेके लिये शिल्पी की सुनिपुण तूलिका इच्छानुसार भावोंका विकाश कर रही है। इस स्थान पर—विधातृ-विरचित उस कृष्ण आलुलायित घनी केशराशि रूप मनोहर पटके ऊपर—नवीना की प्रतिमा बड़े मनोहर भावसे शोभाका प्रकाश कर रही है।

शोभामयी नवीना सोचती है कि, उपायोंका अभाव है। आशा क्या थामकर और कितना समय काटूँ? जिस प्रेम-समुद्रमें ज्ञानेन्द्र डूबे हुए हैं, उसके सूखनेकी तो आशा नहीं। लोग कहते हैं नवीना अप्सरा है; और कोई कहता है नवीना का रूप मेरे पैरके नाखूनके बराबर भी नहीं। लेकिन वही

नवीना ने फिर विचारा,—चौधराइन ने कहा था कि, आज दोपहरके समय आऊँगी। लेकिन यदि लावण्यमयी नहीं आयी तो वह भी नहीं आवेगी। नापित-बहू समझती है, लावण्यके दो तीन दिन बराबर आने-जानेसे कार्य्य-सिद्धिमें बहुतसी सुविधा होगी। पर उसने यह नहीं बताया कि, वह ढँग कौनसा है ?"

दर्वाज़े पर कोमल आघात हुआ। नवीना व्यस्तताके साथ उठ खड़ी हुई। समझी चौधराइन आगयी। फिर भी पूछा—"तुम कौन हो ?"

मकानके बाहर से जवाब आया—"किस तरह बताऊँ कि मैं कौन हूँ ? जब रोज़-रोज़ भूल जाती हो, तब परिचय देनेसे ही किस प्रकार पहचानोगी ?"

नवीनाने देहका कपड़ा कुछ सम्हाला। इसके बाद व्यस्ततासे दर्वाज़े पर जा कुण्डी खोलदी। उस वक्त, हमारी इस पूर्वपरिचिता चौधराइन ने किवाड़ खोलकर भीतर प्रवेश किया। दर्वाज़ा बन्द होगया।

उसको देखकर नवीनाने कहा—"चौधराइन, तुम यह बात जल्द सुनोगी कि, नवीना अब इस संसारमें नहीं है।

चौधराइन [illegible]

उचित है। वे सब तुम्हें आशीर्वाद देंगी। बहुतों के कल्याणसे तुम स्थिरयौवना हो जाओगी।"

नवीना बोली—"जल जाय यह जीवन। मुझे बहुतों की ज़रूरत नहीं—मैं एक को ही चाहती थी, सो जान लिया वह एक भी नहीं मिलेगा, इसलिये अब मरकके शहरमें जानाही अच्छा है।"

नापितबङ्गने कहा—"यदि ऐसा होगा, तो नरकके पापियोंको यन्त्रणा-भोगनेमें सुविधा होगी। वे अपनी तकलीफ़ों को भूल जावेंगे और यमराज का भी दिमाग़ दूसरा ही काम करने लगेगा। मालूम होता है, अब लोगों को आत्म-हत्या का पाप नहीं सतायेगा। अन्यान्य सभी कामोंमें भूल होजाया करेगी। अतः हे सुन्दरी! तुम चाहे जैसा काम क्यों न करो, दुनिया के आदमियों का अनिष्ट कभी नहीं होगा।"

नवीनाने कहा—"तो क्या तुम भीमेरा मर जाना ही अच्छा समझती हो? मेरी आशा पूर्ण होनेका क्या अब कोई भी उपाय नहीं रहा?"

नापितबङ्ग—"उपाय एक नहीं, सैकड़ों हज़ारों उपाय हैं। यदि ज्ञानेन्द्र रूपी आकाशका चाँद तुम्हारे पाँवोंमें हीं लोटा, तो चौधराइन फिर चौधराइन ही क्या? तुम्हारा [illegible]

मनो? तुम्हारे मरनेसे तो विधाता की सृष्टि बेकार हो जायगी!"

नवीना—विधाता की सृष्टि केवल मुझे यन्त्रणा देनेके लिये ही है। मैं अब उस यन्त्रणा की समाप्ति करूँगी। ज्ञानेन्द्रनाथने मेरे लिये जन्म नहीं लिया, वे लावण्यमयीके लिये पैदा हुए हैं। मैं अब दूर खड़ी-खड़ी उनका सुख नहीं देख सकती। इस रूपकी बात तुम बार-बार मत कहो। मैं समझ गयी, मेरे रूपमें किसी प्रकार की भी मादकता नहीं है, मेरी इस देहमें किसी प्रकार की भी उज्ज्वलता नहीं है। यदि होती, तो आज मुझे इस तरह रो-धोट कर समय न बिताना पड़ता।

कविवर मिल्टन के काव्यमें वर्णित शैतान ईडनके बाग़के भीतर आदम और हव्वाको परस्पर प्रेमालिङ्गन करते देख, मनमें सोचा था कि यह बाग़ जलने लायक है। उधर आदम और हव्वा स्वर्गीय जीवन को तुच्छ समझ कर मानव जीवन के सार रूप प्रेमको ही तृप्तिदायक समझ रहे थे। इन्हें देखकर, शैतान दूर खड़ा हुआ युगुल नर-नारीके प्रेमको देखकर, मनहीमन विद्वेष-विषसे जर्जरित होरहा था। यह दृष्टान्त यहाँ पूरे तौरसे [प्र]तिफलित है। ईडन है नवीना; और आदम तथा हव्वा हैं,—[ह]मारे ज्ञानेन्द्र और लावण्य। पाठक इन दोनों ओरके व्यक्तियों[क]ी समता की ...

सेनापति हव्वासे वञ्चित रख आदमको बहुत दिनों तक नन्दन कानन के आनन्द-भोगसे वरी रक्खा था। नवीना भी उसी प्रकार लावण्यमयीको भुलाकर ज्ञानेन्द्रके चिरानन्द का पथ रोकना चाहती है। उसने ज्ञानेन्द्र और लावण्यके प्रेम-सुधाको जड़में हलाहल डालने और उनकी अलौकिक आनन्द-लतिका को समूल उखाड़ डालनेका संकल्प कर लिया है।

नापितबङ्गने कहा—"घबराओ मत नवी! सब्र का फल मीठा होता है। तुम जैसी सुन्दरी स्त्री एक पुरुषको अपने फन्देमें फँसाने की चेष्टामें हताश होती है, यह मेरी दृष्टिमें, पहलाही मौका देखनेमें आया है। तुम कहती थीं कि, आज यहाँ पर लावण्यमयी आवेगी, सो क्या हुआ?

नवीनाने दीर्घ निःश्वास छोड़कर कहा—"आनेका वादा तो था—और अब भी आसकती है, लेकिन निश्चय नहीं। फिर उससे क्या? यदि आवेही, तो हमें क्या लाभ?"

नापितबङ्गने कहा—"क्या लाभ, यह भगवान् जानता है। पानीमें जाल फैलानेसे मछली फँसती है। हमने भी जाल फेंका है। मछली के फँसने की आशा ही है। अच्छा, मेरी यह बात मानली?"

नवीनाने जवाब दिया—"आज दिन भर उसी बात पर विचार होता रहा है।"

नवीनाने पूछा—"लेकिन तीर्थ-दर्शनके लिये जानेसे क्या फल ?—यह तो तुमने बताया ही नहीं। यदि वे स्वयं न जाकर रुपया और आदमीही साथ करदें, तो हमारा काम किस तरह होगा।?"

नापितबहूने कहा—"यह बात तो तुम्हारे कौशल पर निर्भर है। नाक छूनेके बाद ही तो सिर छूने का नम्बर आता है। तुम तो अङ्गन्यास जानती हो। यदि लावण्यमयीको राज़ी कर लोगी, तो ज्ञानेन्द्रनाथ भी हाथमें आ जावेंगे। फिर यह मुँहजली नाइन भी साथ हो लेगी। फिर जो कुछ होगा, वह मेरे ज़िम्मे।"

उस समय नवीनाने आँखोंमें आँसू भर कर चौधराइन के कन्धे पर अपना सिर रख दिया। कहा—"ऐसा दिन कब होगा ? मैं सभी कुछ करने को तय्यार हूँ, बुरा काम भी कर डालूँ, पर आशा तो पूरी हो।"

बाहर बड़े ज़ोरसे द्वारपर धक्का लगा। साथ ही किसीने ऊँचे स्वरसे दर्वाज़ा खोलनेको कहा। नवीना और चौधराइन व्यस्तताके साथ किवाड़ोंकी तरफ़ दौड़ीं। नवीना कुछ दूर खड़ी होगयी। नाइनने दर्वाज़ा खोल दिया। दर्वाज़ा खोलनेके लिये आवाज़ देनेवाले रसोइया महाराज कुछ हट गये। दर्वाज़ेके [illegible]

लावण्यने घरमें प्रवेश किया। साथकी दासीने किवाड़ बन्द कर दिये। नवीना लावण्यको बड़े आदरसे हाथ पकड़ कर भीतर ले गयी।

लावण्यमयीने कहा—"सासजी कहाँ हैं जीजी? मैं उन्हींकी चरण-धूलि लेने आयी हूँ। तुम मुझे ग़ैर समझती हो, मैं ग़ैर से बातें करना पसन्द नहीं करती।"

नवीनाने कहा—"घरकी लड़कियाँ सदासे ग़ैर समझी जाती हैं। दूसरे के मकान पर जातेही वे उन्हें अपना बना लेती हैं। तुम भी दूसरे की लड़की थीं। लेकिन अब अपनी हो। मैं लड़की हूँ, इसलिये मै ग़ैर हूँ।

लावण्यने कहा—"खूब मीलान किया! जो ग़ैरके साथ इस तरह मीलान करे, आजकल वही तो चतुर कहाता है। तुम सबसे बढ़कर हो। तुमने 'घर' और 'पर' दोनोंको समान कर दिया। क्यों न हो, तभी तो तुम भाई और स्वामीको बराबर समझती हो। अच्छा ख़ैर, इन बातों को छोड़ो। मैं इस पेड़के नीचे खड़ी होनेके लिये नहीं आयी, घरमें चलो।"

नवीनाने कहा—"इस बातको कहनेके लिये मेरा साहस नहीं होता। कारण कि, आज भाग्य-लक्ष्मीने एक कूड़े घर पर कृपा की है। यह लक्ष्मी की इच्छा है कि, वह जहाँ जाना चाहे. जावे।"

ी आयी हूँ ? जहाँ तुम रहती हो, तुम्हारी माँ रहती
(तुम्हारे भाई आते-जाते हैं, वह मेरे लिये कूड़ा-घर है
मैं वहाँ जाने लायक नहीं हूँ ? अफसोस ! जिस राजा व
ण-सेवा करने का मैंने सौभाग्य प्राप्त किया है, यदि व
बात को सुन पावे, तो क्या कहेगा ? तुम्हारी ऐसी बात
मुझे दुःख है !"

नवीना—भूल हुई जीजी ! यह बात तुम भैय्यासे म
हना । मैं बड़ी खुश हूँ। तुम जैसे सुखी लोगोंको घर प
या देख, वास्तवमें मेरे आनन्दकी सीमा नहीं ।"

लावण्य—मुझे लज्जित क्यों करती हो ? क्या मैं का
ले नहीं आयी ? जहाँ मुझे रोज़-रोज़ आना चाहिये
ाँ आज मैं पहले ही आयी हूँ। क्या इस अपराधके बदलें
ा तिरस्कार करती हो ? मेरा अपराध हुआ। तुम नन
, उसके बदलेमें दो चार बातें कह सकती हो। लेकि
यजी मुझे अवश्य क्षमा करेंगे। मैं उन्होंके पास जा
। क्यों री चौधराइन अच्छी तो है ? तू तो कभी दिखा
नहीं पड़ती ।

चौधराइनने गलेमें कपड़ा डालकर, हाथ जोड़कर कहा-

आठवाँ परिच्छेद

नाका हाथ पकड़ कर लावण्यमयी ने द
नापितवाला दर्वाज़ा खोल कर चली गयी ला
नि फिर किवाड़ बन्द कर लिये।

तेरहवाँ परिच्छेद।

उसी दिन सन्ध्या के बाद अपने विशाल अन्तःपुरके निर्दिष्ट कमरेमें ज्ञानेन्द्रनाथ भोजन करने बैठे हैं। दूर पर स्थित अत्युज्ज्वल प्रकाश घरके सब स्थानों पर प्रायः दिनके प्रकाशकी भाँति उजाला कर रहा है। अति उत्तम आसन पर बैठे हुए ज्ञानेन्द्रनाथ भोजन कर रहे थे। सामने, उनकी सन्तोष रूपा लावण्यमयी बैठी हुई थी। ज्ञानेन्द्र के भोजनका काम धीरे-धीरे चल रहा था। क्योंकि लावण्यमयी का शोभायुक्त मुख अवलोकन करनेमें भी कुछ देर लगती थी, अलावा इसके उसके कण्ठसे निकले वीणा-मुरली-विनिन्दित मधुरतर वाक्य सुनते-सुनते ज्ञानेन्द्रके प्रायः सभी अङ्ग अपना काम भूले जाते थे। फिर लावण्यके प्रश्नोंका योग्य उत्तर देनेमें ज्ञानेन्द्र को आवश्यकतासे जियादा समय खर्च करना पड़ता था, इसलिये कितना समय होगया या बीत रहा है, इसका उन्हें कुछ भी पता नहीं था। वे क्षण-क्षणमें बहुत ही भूलें भी करने ...

बार लज्जित ज्ञानेन्द्रनाथने इसके बाद सावधान होक
त्रको भोजन कर डालने का संकल्प किया, किन्तु फिर
हीं न हुआ।

बहुत देरके बाद भोजन का काम समाप्त हुआ। उठने
ाय ज्ञानेन्द्रने कहा—"बात बुरी नहीं। एकबार मेरी
क्छा देशपर्य्यटन करने की है। लेकिन कामोंसे तो फुर्स
नहीं। सब कामों को बिना योग्य व्यवस्था किये, दो चा
स के लिये कहीं जाना असम्भव है।

लावण्यने कहा—"मैं तुम्हें पाँच दिनका समय दे सकत
। यदि इतने समयमें अपने सब कामोंकी योग्य व्यवस्था क
ो तब तो अच्छा है, वरना तुम्हें इसी प्रकार सब कामों
ड़कर चलना पड़ेगा।

ज्ञानेन्द्रने कहा—"तुम्हारा हुक्म तामील करनेके लिये
र हूँ। लेकिन पाँच दिनके भीतरही सब कामों व
स्था नहीं हो सकती। मै चेष्टा करूँगा कि, पाँचही दिन
कामोंमे निपट जाऊँ। अच्छा, साथमें कौन-कौन चलेगा?

लावण्य बोली—"आसनसे उठो, कुल्ला करो, इसके बा
थ चलनेवाले व्यक्तियोंके बारेमें सलाह होगी।"

ज्ञानेन्द्र उठे। लावण्यने हाथ धोनेके लिये पानी दिया

जीजी, साथ और उनका लड़का तो आवेगा ही, अलावा इनके और कौन-कौनको जाना चाहिये, यह आप बताइये।"

ज्ञानेन्द्रने कहा—"और यह बात सुनकर लोचनदादा और उनकी स्त्री नाराज़ हो जावेंगे। उन्हें भी तो ले चलना चाहिये।"

लावण्य—यह अच्छी बात है। लेकिन आदमी ज़ियादा होजानेमे असुविधा जो होगी?

ज्ञानेन्द्र—मैं यही सोच रहा हूँ। मेरी समझमें अधिक आदमियों की कोई ज़रूरत नहीं। अच्छा, दास-दासियोंके बारेमें तुम्हें ही सोचना चाहिये।

लावण्य—इसके लिये अधिक सोच-विचारकी कुछ आवश्यकता नहीं; आवश्यकता आपके सब कामोंसे निपट जानेकी है। विलम्ब होनेसे मैं नाराज़ हो जाऊँगी।

ज्ञानेन्द्रने पूछा—"यदि किसी कारणवश विलम्ब हो जाय तो क्या सज़ा मिलेगी, यह तो जान लेना ज़रूरी है।"

लावण्य—मैं आपको यहीं छोड़ कर दादाजीके साथ चली जाऊँगी।

ज्ञानेन्द्र—यह तो कोई भयानक सज़ा नहीं हुई। समझा था—यदि देर हो जाय तो मेरे लिये एक प्रकारसे अच्छा ही है। क्योंकि यदि लोचन [illegible]

आऊँगी। लेकिन तुम्हारी सेवाके समय उपस्थित रहनेके सिवा फिर आपको मुँह भी नहीं दिखाऊँगी।

ज्ञानेन्द्र बोले—"बेशक, यह कथा बड़ी भला है। यदि ऐसा होगा, तो मैं मकानमें आनाही बन्द कर दूँगा।"

लावण्य—यह क्यों? तो क्या नवीना को लेकर बाहरमें ही गृहस्थी बनानेका इरादा है? यदि ऐसा इरादा है, तो लो मैं अभी कहीं चली जाती हूँ, आप यहीं अपनी इच्छा-पूर्ति करें।

ज्ञानेन्द्र—तुम बड़ी बेशर्म होगयी हो। मैं तुम्हारी इस करतूत का—चापलताका—अच्छी तरह दण्ड देता, लेकिन तुम अबोध हो—बालिका हो, दया करके छोड़ दिया। अब ऐसा कभी मत कहना।

मुँहमें कपड़ा देकर लावण्य हँसने लगी। बोली—"स्वामी की इस दयासे मैं चिर-बाधित हुई। धर्मावतार तो मुझे इसीपासे दासी समझ कर क्षमा करते आये हैं। किन्तु हे दयामय, आपने जो मुझे अबोध बालिका बताया, उससे तो आपकी बुद्धि-विद्याका कोई विशेष परिचय नहीं मिला। प्रभु री अपेक्षा बेशक कईवर्ष बड़े हैं, किन्तु इस असामान्य पार्थ- से आपने जो बालिका कहकर अग्राह्य करना सीखा, इसमें

[illegible]

उस प्रसन्नाननाके गाल पर एक कोमलसा थप्पड़ लगाक
—"शरारत करनेसे इस प्रकार मार खानी पड़ती है।"
लावण्यने कहा—"और मैं भी जानती हूँ कि, जो अपनी
मर्यादा भूलकर हठात् दीन-दुनियाके मालिक बनने
हते हैं, उनकी इसी तरह मूछ मूँड़ी जाती हैं, जैसी कि
पकी मुँड़ी हुई हैं।"

साथही साथ लावण्यमयी की कमलनाल-सदृश दोन
ाएँ ज्ञानेन्द्रकी नाकके नीचेके स्थानपर पहुँचीं। तब ज्ञाने
कहा—"मैं भी तुम्हारे बाल इसी प्रकार ख़राब कर देत
किन मैं दयालु हूँ, तुम्हें क्षमा करूँगा। इन बातोंसे को
लब नहीं। झगड़े का अन्त करनाही अच्छा है। अच्छ
निश्चित हुआ कि, हम सब पश्चिम जावेंगे। कह
हाँ जावेंगे, यह बात फिर सोची जावेगी। साथमें कौन
न जावेगा, इसकी व्यवस्था इस मकान की एक अबो
लिका करेगी। मैं आजसे दश दिनमें अपने सब काम पू
लूँगा। क्यों और कोई बात रह गयी?"

लावण्य—नहीं; तुम्हारी जय जयकार हो! मैं इसक
अबोध-बालिकाके अपवादको स्वीकार करती हूँ। लेकि
ख़बरदार, आगे ऐसी बात आपकी ज़बाँ शरीफ़से न निकले

ावेश किया। उनके आनेके बहुत पहलेसे हमारे परिचि
लोचन हुक्का पीरहे थे। उन्हें देखते ही ज्ञानेन्द्रने कहा—
च्छी क़िस्मत है! आजतो दादा हमसे पहले ही आगये।

रामलोचन बोले—"घबराओ मत बच्चा! तुम्हें तकलीफ़
ीं दूँगा, एक जरूरिकी बात कहनी है। अभी ज़रा देर
ईं बहुतसे आदमी घेर लेंगे, उस समय बात कहने क
ोता नहीं होगा।"

ज्ञानेन्द्रने कहा—"बहुत अच्छा। पहले मेरी बात सु
जिये। हम काशी जावेंगे, यह आपको जान लेना चाहिये
ी पीछेसे कुछ कहो।"

लोचनने कहा—"यह क्यों? क्या नात-बहूको वैरा
ाया, जो आप तीर्थ-वासी होते हैं?"

ज्ञानेन्द्र—"जी, यह सब नानी महाशया ठकुराइनजी क
ा है। उन्होंने कहा था कि, मेरे साथ गाँठ जोड़ क
-राम पाप हुआ—न मेरे साथ एक जोड़ रहकर विश्वे
दर्शन न करनेसे परकालमें गति नहीं होगी। यह उसीक
ारी है।"

लोचन—"अच्छा सम्बाद है। तो क्या तुम दोही ज
ओगे? सुना है, नवीना और उसकी माँ भी तो जावेगी

का उदय हुआ। वे समझ गये कि नवीनाने किसी तरह मावण्यकी बुद्धि फेर कर यह सलाह दी है। नवीना-सम्बन्धिनी ज्ञानेन्द्रनाथके विषयमें अमूलक अफ़वाह रामलोचनके कानोंमें बारम्बार सुनायी देने लगी। इसके बाद अभी दो एक दिन की बातें सुनकर नवीनाके ऊपर इन प्रवीण व्यक्ति लोचन को बहुत सन्देह हुआ। इसीसे ज्ञानेन्द्र की यह यात्रा उन्हें अच्छी नहीं लगी। लेकिन उन्होंने सोचा—यदि ज्ञानेन्द्रने इस बातका प्रण कर लिया है तो अन्यथा नहीं हो सकेगा। फिर ज्ञानेन्द्र इन झूठी अफ़वाहों पर कुछ ध्यान भी नहीं देते हैं। कारण कि, वे एक चरित्र-बल सम्पन्न देवसदृश पुरुष हैं। बाहर की अमूलक अफ़वाह उन्हें कर्त्तव्य-च्युत कभी नहीं कर सकेगी। बोले—"अच्छा है, लेकिन यदि मुझे यहीं छोड़ जाओ तो बहुतही अच्छी बात हो। क्योंकि—मैं इस समय कहीं भी जाना नहीं चाहता।"

ज्ञानेन्द्रने कहा—"यह क्यों? आपको ऐसा कौनसा काम है? इस वृद्ध वयसमें भी तीर्थयात्रा अच्छी नहीं लगती?"

लोचन—यदि तुम अकेले जाते तब तो जा भी सकता था। पर कई जनोंके साथ जाना मुझे पसन्द नहीं।

ज्ञानेन्द्रने पूछा—"तो क्यों दादा कई आदमी आपका क्या

प भी जानते हैं और मैं भी। इसके अलावा क्या और को
पत्ति है ?

लोचन कहने लगे—"मेरा सारा समय केवल तु
आशीर्वाद देनेमें ही बीतता है। पर जबतक मका
रहता हूँ, वह समय भी मुझे असह्यसा मालू
ता है। वहीं मैं तुम्हारे साथ काशी जाऊँ—पवि
र्थों में भ्रमण करूँ, इसकी अपेक्षा और क्या अच्छा होगा
किन मैं भाई, तुमसे स्पष्ट कहे देता हूँ कि, यदि नवीन
साथ न लेजाओ तो बहुत अच्छा है। समझते हो
ीने नात-बहूको तीर्थ-यात्राके लिये भड़काया है। यदि
ें वहांके लिये मना करूँगा, तो वह रूठ जायगी, मैं उ
ाज़ करना नहीं चाहता। तुम रुपया खर्च करो, दो चा
दमियों को साथ भेजकर उन्हें तीर्थ यात्रा कराओ, मुझ
ई आपत्ति नहीं। लेकिन इतनी भीड़भाड़के साथ तुम्हा
ना मैं पसन्द नहीं करता।"

ज्ञानेन्द्रने कहा—"यह बात मेरी समझमें नहीं आयी
आपकी नात-बहू होगी, ठकुराइन जी होंगी, आप होंगे
ेक दास-दासी होंगे, साथमें नवीना आदि भी जावेंगी त
में आपत्तिकी बात ही क्या है ? आप इन बातों पर कुछ भ

उनका मन तब भी वैसाही अप्रसन्न रहा। यदि आज कई दिन पहले नवीनाके बारेमें कोई बुरी अफ़वाह न सुन चुके होते, तो बड़ी खुशीसे ज्ञानेन्द्रके साथ तीर्थ-यात्रा करनेके लिये तैयार हो जाते। आज उन्हें एक शङ्काकुल हृदयसे यह प्रस्ताव सुनना पड़ा।

बहुत देरके तक लोचन चुपही रहे। भजहरिके बारेमें जो कुछ कहना-सुनना था, वह भी अच्छी तरह से नहीं कहा। कहा क्या, कहने ही नहीं पाये। लोगोंका जमाव होने लगा। बहुतसे आदमियोंने बहुतसी बातें कहीं। धीरे-धीरे दोपहर हो चला। ज्ञानेन्द्रने दोपहरके भोजन के लिये सभा समाप्त करदी। लोग चले गये। रामलोचनने भी प्रस्थान किया। लेकिन आज उनका चेहरा बहुतही मुर्झाया हुआ था।

चौदहवाँ परिच्छेद ।

ः मलोचन चक्रवर्त्ती बड़ी चिन्ताकुल अवस्था
रा घर लौटे। जिस तरह हो, ज्ञानेन्द्रके साथ नवीन
की तीर्थ-यात्रा रोकनेके लिये वे व्याकुल हो उठे
किन रोकें किस तरह ? रोकनेकी कोई तरकीब नहीं। इस
रेमें ज्ञानेन्द्र के साथ तर्क-वितर्क करना भी वृथा है। जि
होंने अच्छा समझ लिया है, उसमें कोई विशेष कारण, कि
लायुक्त कारण बिना दिखाये वे मानने वाले नहीं। केवल लो
न्दा का भय दिखाने से तो काम नहीं चलेगा। वे लो
परवा नहीं करते। आखिर वृद्धको ऐसा कोई निश्
कारण नहीं मिला, जिसे दिखाकर ज्ञानेन्द्रको रो
तें। वृद्ध का हृदय यह खूब जानता है कि, या
स्कर नहीं। बार-बार दफ़ा आग्रह भी होती
, सम्भव है उसका परिणाम भयङ्कर हो। लेकि

वीना ने ही किसी तरह लावण्य को यात्राके लिये तैय्यार किर
। और लावण्य का आदमाही एक प्रकारसे ज्ञानेन्द्र व
हुआ है। वे उसको इच्छाके खिलाफ एक काम भी नहीं क
रते। ऐसी अवस्थामें यदि किसी प्रकार लावण्यमयीव
। फिरादी जाय, तो सम्भव है यात्रा रुक जाय। इस उपा
पूर्त्ति करने का भार उन्होंने अपनी स्त्री को दिया। ठ
इनजी लावण्यके पास जायँ और उसे इस कामसे रोकें
हना बाहुल्य है कि, वृद्धने अपनी स्त्री को जिन-जिन बातों
वण्य अपने विचारको स्थगित कर सकती है, वे सब
सिखादीं। ठाकुराइनजी गयीं, बहुत सी बातें कहीं
एक बात का भी असर न हुआ, तब उन्होंने एक भयान
म सुनायी। ज्ञानेन्द्र और नवीनाके बारेमें जितनी अफवा
रमें फैल रही थीं, उनमेंसे लावण्य एक को भी नहीं सु
ी थी। आज ठकुराइनजीने वे ही बातें लावण्यके साम
: सुनायीं और लावण्यको आगेको सावधान होनेका पर
दिया। और कहा,—"ऐसा करो कि जिससे इन अप
हीं की मात्रा ज़ियादा न बढ़े।" यह ठीक है कि, उन्हों
रोक्त अफवाहोंको अमूलक और अविश्वास-योग्य बताया, कि
थ-ही यह भी कहा कि, नवीना की भाँति एक सुन्द

बहुत देरकी बातचीतोंके बाद ठकुराइनजीने प्रस्था
या। वे खूब समझ गयीं कि, लावण्यके हृदयमें मे
तोंने तनिक भी असर नहीं किया। अतः नवीना को छोड़
र स्वयँ तीर्थ-यात्रा को जाना ज्ञानेन्द्र या लावण्यके लिये अस
न है। बड़ी भक्ति और विनय दिखाते हुए लावण्यने उन
दा किया। विदा होते समय ठकुराइनजी कह गयीं कि
र तुम दोनों मर्द-लुगाई साथ-साथ रहोगी, तब तो किसी
ार की भी आशङ्का वृथा है।"

ठकुराइनजी चली गयीं। लावण्यमयी विगत बातोंक
ार कर मनही मन हँसी। उसने सोचा—"किसीके उप
ा-दृष्टि दिखानेसे आजकलके लोग उसका कैसा उलटा मतल
ाल लेते हैं। जो धर्म है, लोग उसे पाप समझते हैं
ेन्द्रनाथ देवता हैं, उनका पदस्खलन तबही सकता है, ज
ित्र-बलकी कुछ सामर्थ्य ही नहीं समझी जाय। इसलि
अफवाहों पर अधिक सोचना-विचारना बेकार है। लेकि
ो करनेके लिये अच्छी सामग्री है। उससे खूब तमाश
ा। वे अब आतेही होंगे, घरमें घुसतेही इन बातों
ाशा करूँगी। आनेदो।"

यह सोचकर लावण्यने अब जलपान का सामान सँजो

नहीं। बात ठीक है। किन्तु ज्ञानेन्द्रनाथ जैसे संयमी पुरुष तो संसारमें दुर्लभ हैं, उनके बारेमें यह सोचना कि वे अपने कर्त्तव्यसे गिर जावेंगे—एक भूल है। क्या अभागिनी ब्राह्मण-कन्या कभी ऐसा कर सकती है? न, वह तो विचारी खुद विधवा है, उसके ऊपर ऐसा लाञ्छन लगाना उसे सताना है। अपने चित्तको संयत रखना ही उसका धर्म है, और वही उसका कर्त्तव्य है। वह यदि पवित्र धर्म-पालनमें अपनेको असमर्थ करदे, तो उसे मरकर नरक का कीड़ा बनना पड़ेगा। लेकिन ऐसी कुचिन्ताओं से उसका सरोकार ही क्या? वह इन अमूलक आशङ्काओंसे डर कर क्यों तीर्थ-दर्शन छोड़े? वह कभी ऐसा न करेगी।

ज्ञानेन्द्रनाथने घरमें प्रवेश किया। उनकी खड़ाऊओंकी आवाज़के कोमल होने पर भी लावण्यने उसे सुन लिया और शीघ्रतासे स्वामीके पास जाकर हँसती हुई बोली—"बड़ी अच्छी ख़बर है! लेकिन यह तो बताइये, आपने इस दासी से उसे क्यों छिपाया?"

ज्ञानेन्द्रनाथ वाक्य का ज़रा भी मतलब न समझे। उन्होंने इस बात पर कर्णपात न करके कहा—"सुनाथा कि, आज कुराइनजी आयीं थीं। वे कहाँ हैं?"

लावण्यने उत्तेजक ...

लावण्य—छिः ! भूल हुई। ठकुराइनजी आयी थीं, उन्होंने आज मुझे आपकी अनेक लीलाओंका परिचय दिया। वे अब तुमसे नहीं बोलना चाहतीं, इसीसे बिना तुमसे मिले चली गयीं।

ज्ञानेन्द्रनाथने कहा—"चली गयीं ? तुमने उनके आनेकी ख़बर मुझे क्यों नहीं दी ?"

लावण्य बोली—विषम विरोधके उत्पन्न होजानेकी आशङ्का से। आप जानते ही हैं कि, यहाँकी ठकुराइनजी जैसी बुढ़ियासे लेकर नवीना जैसी रसमयी युवतियाँ तक आपके लिये उन्मादिनीसी हो रही हैं। किन्तु उस उन्मादसे केवल नवीनाने ही लाभ उठाया है।"

ज्ञानेन्द्रने कहा—"तुम्हारी ये पहेलियाँ मेरी समझमें कतई नहीं आतीं। बात क्या है, साफ़ कहो।"

लावण्य बोली—"बात छोटीसी है। नवीनाके साथ वाली आपकी प्रेमलीलाको अब गाँव भरके प्रायः सभी लोग जान गये हैं। यदि तुम उसे मुझसे नहीं छिपाते, तो मैं साफ़ बता देती। अब मैं आपकी बहिन को सबके सामने इस घरकी स्वामिनी बनाऊँगी। आप घबराइये न ?"

ज्ञानेन्द्रनाथने बनावटी विरक्तिके साथ कहा—"क्यों बेकार बातें करती हो • ———

था है, उसके सम्बन्धमें दूसरेका हस्तक्षेप वास्तवमें वृथा है
ी कहा न, यदि काम किसीसे न छिपा कर ज़ाहि
नमें किया जाय, तो फिर किसी प्रकारकी निन्दाकी
नी पड़े।"

ज्ञानेन्द्रनाथने कहा—"यदि इस प्रकारकी बेहूदा हरक
गी, तो मैं अभी चला जाऊँगा। कामकी बात कहो।"

लावण्यने व्यस्तता के साथ ज्ञानेन्द्रका हाथ पकड़ लिया
ली—"नाराज़ मत हो। मैं सब कुछ छिपालूँगी
ें उसके लिये कुछ भी कष्ट न उठाना होगा। इसलि
ठकुराइनजीने कहा था कि,—"नवीनाके साथ तीर्थ-या
ना ठीक नहीं।"

ज्ञानेन्द्रने कहा—"लोचनदादा की भी यही इच्छा है
ने क्या कह दिया ?

लावण्य बोली,—"मैंने कह दिया कि, जब इस प्रक
दय का अविच्छेद्य सम्बन्ध है, तब वे ठकुराइनजी को छो
ा करने नहीं जावेंगे। इसलिये सभीका जाना
वेगा। अतः आप उन्हें अवश्य साथ ले चलिये।"

ज्ञानेन्द्रनाथने कहा—"तुम्हारी बातें यदि मज़ाकभ
समझता, तो मैं तुम्हारे साथ कभी यात्रा करने न जाता

उसी दिन मुझे हृदयके सब संकल्प छोड़ देने पड़ेंगे। तुम्हार मुँह बताता है कि, ये सब बातें झूँठ हैं—महज मज़ाकके लिये—हँसीके लिये—कही जारही है। वह देखो, तुम्हारे होठों पर हँसी है। सब झूँठ। इससे मैं तनिक भी नहीं डरता कि, बाहरके लोग मुझे किसी प्रकारका लाञ्छन लगा रहे हैं। लेकिन जिस दिन तुम मुझपर अविश्वास कर लोगी, समझूँगा यही ग़लती है—यहीं से सर्व्वनाशका सूत्रपात है।"

लावण्य हँसकर कहने लगी—"मुझे इस बातका एकदम ख़्याल नहीं था कि, मेरे ओठ और मुँह इतने अविश्वासी होंगे। जो हो, जब उन्होंने मेरे मनकी बात मुझसे बिना पूछे ही कह डाली, तब मेरे ढके रखनेसे क्या होता है? प्यारे! चन्द्रमें कलङ्क है, पर तुम निष्कलङ्क कलाधर हो। जिस दिन तुम्हारे चरित्रमें कलङ्क का धब्बा लगेगा, उसी दिन संसार भर की व्यवस्थाओंमें खलबली मच जावेगी। जिसे आँखोंसे देखकर भी विश्वास नहीं होगा—जिस दिन उस लोक-निन्दित अफवाह पर इस दासीका विश्वास होगा, उस दिन समझ लीजिये नरक के सभी पाप मुझे अपना आश्रय बना लेंगे और समझ लीजिये उस दिन मेरा सभी तेज नष्ट हो जायगा।"

* * * * *

येन और उनकोंमें ध्यान दिया गया। बहुतसे प्रयोजनीय अस-बाब का संग्रह होने लगा। बहुतसी दास-दासियां साथ जाने के लोमसे काममें बेढब तत्परता दिखाने लगीं। बहुतसे लोग अनेक प्रकारसे व्यस्त हो उठे।

स्वयं ज्ञानेन्द्रनाथ हाथका काम समाप्त करने की कोशिश करने लगे। अर्थी-प्रत्यर्थी सभी की सुव्यवस्था की गयी। लेन-देनके व्यापारोंका यथोचित प्रबन्ध होगया। और पीछे जो जो काम अवश्य होने योग्य थे, उनकी भी सम्भवमत व्यवस्था कर दी गयी।

भजहरि, उसके जमाई और रघुनाथने नोटिसके चुङ्गलसे छुटकारा पालिया। उन्हें आफ़तसे बचाना केवल ज्ञानेन्द्रनाथ का ही काम था। उन्होंने इन धूर्तोंको समझा और सतर्क करके झगड़े से छुटकारा दिलाया। साथ में उन्होंने विधु-भूषणकी प्राप्य सम्पत्ति की भी बात उठायी थी, लेकिन भज-हरिने मुँहसे किसी प्रकार की भी आपत्ति ज़ाहिर न कर, चार पाँच दिनकी मुहलत माँगली; पर काम कुछ न हुआ। केवल अनर्थक उज्र बहुत कुछ पेश हुए। तब ज्ञानेन्द्रने दरता होकर उसकी साफ़-साफ़ इच्छा जाननी चाही।

भजहरि स्पष्ट उत्तर देनेवाला आदमी नहीं था। लेकिन

उनके लिये जिन-जिन बातोंकी आवश्यकता थी, सबकी पूर्त्ति कर दी। बहुतसे लोग भजहरिके इस कपट-व्यवहारसे मनही मन दुःखी हुए। शान्त ज्ञानेन्द्रनाथ को भी उस पर बड़ा क्रोध हुआ।

अब ज्ञानेन्द्र सब बातोंसे निवृत्त हो चुके हैं। अब उनकी आशा निर्विघ्न होगी, इसमें कोई संशय नहीं।

पन्द्रहवाँ परिच्छेद ।
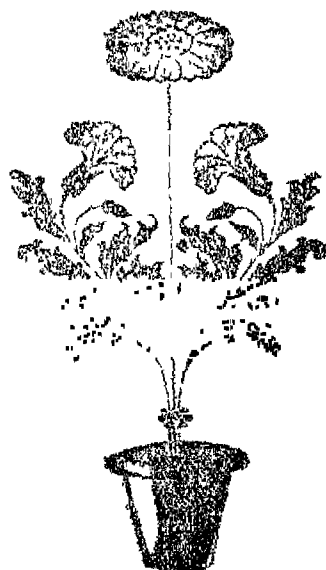
व्यापार बढ़ गया। नवीना और लावण्य, रामलोचन और ज्ञानेन्द्रनाथ, रामलोचनकी पत्नी और नवीना की मा, दास-दासी आदि सबकी आवश्यकता और अनावश्यकता में हर वक्त देख-भाल बात-चीत होने लगी। नवीना हर समय आवश्यकतानुसार वा इच्छानुसार ज्ञानेन्द्रके सामने आने लगी, और केवल सामने आकर ही शान्त नहीं हुई, वरन् थोड़े-थोड़े हाव-भाव भी दिखाने लगी। साथ-साथ लज्जाशीलता का अभिनय दिखानेके मिस लज्जाजनक लज्जाहीनता का पार्ट दिखाया जाने लगा। लेकिन् इन विभिन्न भाव-भङ्गियोंको देखकर ज्ञानेन्द्रनाथके सुदृढ़ चित्तमें ज़रा भी फर्क न हुआ। वरन् वे बार बार नवीना के सामने पड़ने के कारण अपने को ही असावधानता करनेका दोषी समझने लगे।

क्रमशः बातचीत का स्वर भी कुछ कुछ बदलने लगा।

न का ज़िक्र है। जब ज्ञानेन्द्र मार्ग में पड़ने वाले समस्त
र्थों की यात्रा करके प्रयागराजमें पहुँचे, तो एक घटना
योग से उनके हृदयमें बड़ी चोट लगी। ज्ञानेन्द्रकी आदत
कि, वे नित्यप्रति साँझके वक्त टहलने जाया करते
उस दिन भी वे भ्रमण से निवृत्त हो घर पर लौटे।
, डेरा वेणीघाटके पास था। जिस स्थानपर गङ्गा-यमुनाका
एवं सम्मेलन हरिहरके सम्मिलन की भाँति शोभा पा रहा था
स स्थान पर सरस्वती गुप्त-भाव से प्रवाहित होती थी—
स स्थान पर निकटवर्त्तिनी यमुनाके ऊपर का रेलवे-पुल
दरीके कण्ठमें मोहनमाला की भाँति शोभा दे रहा था
स स्थानकी धूलि-राशि में एक दिन रामचन्द्र, सीता और
क्ष्मण के चरण अङ्कित हुए थे, जिस स्थानके पास ही अक्षय
वृक्ष की जड़में पथश्रम-क्लिष्टा वल्कलवसना जनक
न्दिनी की क्लान्ति दूर करनेके लिये दोनों दशरथ-पुत्रों
प्रतीक्षा की थी और जिस अक्षय वटने इस समय प्रबल-प्रता
न्वित अङ्गरेजोंके दुर्गका एक हिस्सा अपने अधिकारमें क
या है, उसी पवित्रता-पूर्ण क्षेत्रके निकट ज्ञानेन्द्रनाथका
सस्थान था। ज्ञानेन्द्रनाथने लौटकर धीरे-धीरे डेरे में प्रवे
या। वे धीरे धीरे ही ऊपर गये। लेकिन् जो लायब

उस समय सन्ध्या होगयी थी। सारी मनुष्यता सायं कालीन लाल वर्ण के अधिकारमें आचुकी थी। घरकी सभी खिड़कियाँ बन्द नहीं थीं; जिधर से साधारण मार्ग स्पष्ट दीख पड़ता था, उसी ओरके द्वार बन्द थे। उन खुली हुई खिड़कियों से आये प्रकाशमें ज्ञानेन्द्रने स्पष्ट रूपसे देखा कि, 'उनकी शय्यापर कोई सो रहा है।' ज्ञानेन्द्रकी शय्या पर सिवाय लावण्यकी और कोई भी नहीं सो सकता—यह सोचकर वे पलँग के पास चले गये। लेकिन हृदय में बड़ी बुरी आशङ्का हुई। आज लावण्य बेवक्त क्यों सो रही है? क्या तबीयत खराब होगयी?

चलचित्त ज्ञानेन्द्रनाथ शय्यापर धीरे से जाकर सो गये एवं शनैः शनैः सोई हुई स्त्री की पीठ पर हाथ रख कर बोले,—"लावण्य! क्यों आज तबीयत कैसी है?"

स्त्री चुप रही, किन्तु कुछ हिली। साथ-साथ ज्ञानेन्द्र भी उठ कर खड़े होगये। उस समय उनकी वही हालत हुई जैसी कि एक आदमी की सहसा साँप देख कर होती है। डर कर बोले—"यह कौन है? लावण्य तो नहीं है। यह मेरी शय्या पर क्यों सोई?"

यह सुनकर सोई हुई स्त्री उठ बैठी। स्त्री और कोई नहीं, नवीना थी। बोली "—

ई आगयी। आप नाराज़ न हों, मैं अभी चली जा
।"

ज्ञानेन्द्रनाथने कहा—"मैंने तुम्हारा अनजान में बड़ा अप
किया है, इसलिये मैं उस अपराध की क्षमा चाहता हूँ
ी इस बेखबरीसे शायद पीछे तुम नाराज़ हो जाओ, इसी
ा था, कि तुम कौन हो?" कुछ और न समझना
ई आलस्य आ रहा है, तो तुम शौक़ से सोती रहो, लौ
जाता हूँ।"

नवीना बोली—"आप क्षमा क्यों चाहते हैं? मैं न
झी कि, आपने मेरा कौनसा अपराध किया है। अ
नेकी कोई ज़रूरत नहीं। आप अभी क्यों जाते हैं
मैं तुम्हारी कोई नहीं लगती?"

ज्ञानेन्द्रनाथ समझे,—अपराधभारी होगया। देखे या बि
े, ज्ञानसे या अज्ञानसे परनारी का स्पर्श करना ही महापा
इसीसे शायद नवीना मुझे अग्राह्य समझ रही है। मैं इ
प का प्रायश्चित्त भावजसे पूछकर करूँगा। नवी
हती है—"भाभी के न होनेसे ही आप जाते हैं।" ठीक
ही बात है। उन्होंने कहा—"हाँ नवीना, इस वक्त मैं य
ीं ठहर सकता। क्योंकि आजकलका ज़माना ख़राब है

ते हैं, उन्हें भीतरी पवित्रताकी पापकी पोशाक पहना
tक भी देर नहीं लगती। अतएव सावधान रहनाही ठी
केवल हृदय को सावधान रखने से ही काम नहीं चलत
हर की सावधानता भी चाहिये। तुम अपराधकी बा
कहती हो, वह ठीक ही है। वास्तव में, मैंने भारी अ
। किया है। मैंने तुम्हें लावण्य समझा था। अच्छा, तो
। जाता हूँ।"

नवीना बोली—"इसमें भारी अपराध क्या हुआ?
पकी प्रतिपालिता हूँ—आपकी आश्रिता हूँ, सङ्गि
। इस अवस्थामें भ्रमसे ही क्यों, यदि इच्छापूर्वक
। स्पर्श करें, तो यह मेरे सौभाग्यके सिवा और क्या हो सका
? जब यह देह ही आपका है, तब ज्ञान वा अज्ञानमें, चा
स तरह कुछ ही क्यों न करें, मालिक हो। यदि उ
प अपराध समझेंगे तब तो मुझे पाप लगेगा। मैं आपकी हू
प मुझे ग़ैर न समझें। अब जो आप बारम्बार अपने व
राधी कहेंगे, तो वह आपकी ज़ियादती मात्र होगी।"

ज्ञानेन्द्रनाथके नेत्रोंमें संसारका चिरपरिचित आकार मा
ल गया। वे एक कल्पनातीत काण्डकी सूचना का अ
। करने लगे। समझे,—नवीना की बातों का भाव वह

पालकोंका परस्पर सम्बन्ध हो, उनमें नवीना की बातकी कभी परिणति नहीं हो सकती। नवीनाका सतीत्व कोई बिक्री की सामग्री नहीं है। राजाका ऐश्वर्य, देवताका अमरत्व, किसी के भी बदलेमें नहीं खरीदा जा सकता। नवीना विधवा ब्राह्मण-कन्या है। विधवा-धर्मके तत्त्वको वह खूब जानती है। लेकिन जब वह जानती हुई भी उसकी विरोधिनी बनती है, तब समझना चाहिये कि अब उसकी मृत्यु समीप है। मैं आज ही लावण्यसे इन बातों को कहूँगा, उसे सावधानताके साथ नवीनाके भाव जाननेकी आज्ञा दूँगा। इसके बाद यदि लावण्य भी मेरे सन्देहका समर्थन करेगी, तो नवीना को स्पष्ट रूपसे सचेत करूँगा। अनन्तर कहने लगे—"नवीना, तुमने जो कुछ कहा, उसे सुनकर मेरे हृदयमें अजीब खलबली मच उठी है। तुम से बहुत कुछ कहना है। इस समय जाता हूँ, समयानुसार ही हृदय की बात कही जाती है।" यह कह ज्ञानेन्द्रनाथ ज़ियादा देर न रुककर तुर्त चले गये।

नवीना शय्या छोड़ कर खड़ी हो गयी। खड़े-खड़े बहुत कुछ सोचा, सोचकर एक बात स्थिर की। सोचा,—आजकी घटनासे बहुत कुछ मतलब सिद्ध हुआ! ज्ञानेन्द्रनाथने

यी थी,वह एक प्रकारकी परीक्षा थी। उन्होंने कहा न कि
यानुसार हृदयकी बात कहूँगा। अतः निश्चय ही वे अ
ते चाहते हैं।

जिसके हृदयमें पाप का वास है, वह संसारके प्रायः सभ
इमियों को आप जैसा समझने लगता है। अलावा इसके
समस्त व्यापारोंको भी पाप-साधन के अनुकूल मान
ता है। उपरोक्त बातोंको सोचकर नवीनाको बड़ा आनन्
ा। वह तत्काल चौधराइनकी खोजमें चली।

कारण क्या है? उसका जिक्र इस यात्रामें अभी तक
नहीं आया? पाठक धैर्य धरें। इस समय—यहाँ प
उसीके प्रसंगमें दो चार बातें कहेंगे। बात यह थी कि-
वह की एक दासी, जो इस यात्रामें उसके साथही आ
, किसी कठिन रोगसे पीड़ित होगयी। आश्चर्यवश
वह पति-सेवा छोड़ आज-कल उसीकी सेवामें व्य
ती है। यही कारण है कि, वह पतिदेवके आनेकी बा
नकर भी उनके पास नहीं आई। ज्ञानेन्द्र वहीं पहुँचे
कर रोगिणी के रोग का सम्वाद पा, उन्होंने तत्काल ए
दमी को डाक्टर बुलाने के लिये भेजा। पीड़िता व
स्था अधिक शोचनीय न होने पर भी उसे बड़ा कष्ट था

उसे सुनकर पाषाणहृदयी को भी एकबार द्र
ना पड़ता था। उसकी हालत देखलावण्य हर समय बेचे
ती थी। इसीसे प्रायः दिन भर उसे रोगिणीके पा
ना पड़ता था। यहाँ तक कि, अब उसके आहार-विहार
बाधा पड़ने लगी। पीड़िता को देखकर वह दिन बदि
ल और पीली पड़ती जाती थी। लेकिन कर्त्तव्य-पालन
कारभी शिथिलता नहीं आयी। इसीसे ज्ञानेन्द्रने उससे इ
वित्र कर्त्तव्यके छोड़नेका अनुरोध नहीं किया।

प्रायः अनेक बार अनेक कारणवश नवीनाके साथ ज्ञाने
का साक्षात् होने लगा। समय-समय पर लावण्यके बद
थमित खाद्यादि लेकर नवीना ही दिखायी देने लगी
ाँ तक कि, बाज़-बाज़ दफ़ा तो परस्परमें सांसारिक घ
ओं पर भी बातचीत हो जाया करती थी। आज क्या है
नहीं है? क्या करना चाहिये? क्या न करना चाहिये
ादि अनेक प्रयोजनीय बातें नवीना ज्ञानेन्द्र से कहने भी
ने लगी। निरन्तर समीप रहने की आवश्यकता भी प्राय
ने लगती थी। चार आँखोंका परस्पर सम्मेलन भी अनिवार्
ाया था। सारांश यह कि, उपरोक्त घटनाओंसे ज्ञानेन्द्रक
यवह संशय ठीक होने लगा। नवीनाके मुख पर, नवीना

एँ अति प्रबल होकर अपना प्रत्यक्ष रूप दिखाने लगती हैं
स समय ज्ञानेन्द्रनाथको नवीनाके ऊपर किसी प्रकार
देह नहीं हुआ था, सम्भव है नवीना के उस समय भी ऐ
भाव हों। किन्तु ज्ञानेन्द्रनाथ की नज़रमें उनका का
विर्भाव नहीं हुआ। जो हो, इस समय लावण्य व्यस्त
से इस वक्त किसी बारेमें सलाह मशवरा करनेसे कर्त्तव
लनमें बाधा होगी। बिना उसके स्थिर हुए, केवल अप
देहके ऊपर ही ज्ञानेन्द्रनाथ नवीनाके सम्बन्धमें कि
ार की व्यवस्था करेंगे?

पीड़िता का कष्ट और भी बढ़ने लगा। अब लावण्य
यका पूर्ण अभाव है। वह उसके पाससे हिलना तक
ीं चाहती। यह देख ज्ञानेन्द्रको उसके स्वास्थ्य पर भी
ा हुई। इसी समय एक दिन लोचन दादाने देह में
आलिंग्न करते हुए कहा—"भगवान्, जिस पर सहायता
ष्ट रखता है, उसका सब समय मङ्गल है।"

ज्ञानेन्द्रने पूछा—"क्यों दादा, यह बात किसको ल
के कही?"

रामलोचनने कहा—"तुम्हीं ऐसे भाग्यवान् हो। यह बा
हारे लिये ही है।"

थप्रति आप जैसे आत्मीयोंके साथ परम-पवित्र धर्मस्थानों
न मिलते हैं और सबसे ज़ियादा, स्वर्गमें भी दुर्लभ, लावण
ी देवबाला साथ रहती है, फिर मुझसे अधिक भाग्यवा
र कौन होगा ?

लोचनने कहा—"पर भाई, जब भाग्य ज़ोर करता है, त
को फूटते भी देर नहीं लगती। हम तो अभागी ठहरे
ारे पास तो भाग्य ही नहीं जो फूटेगा; लेकिन तुम असा
ण भाग्यवान् हो। समय बदलता रहता है। अतः अ
दिन तुम कष्टमें थे, तब आज तुम्हारा भाग्य उन्नतिमें बुल
रहा है।"

ज्ञानेन्द्र बोले—"इसमें क्या शक है ? पर यह सब विधात
कृपा है। मैं उसका चिरकृतज्ञ हूँ।"

रामलोचनने कहा—"भैया अभी क्या है ? कृतज्ञता
ता और भी बढ़ानी पड़ेगी। कारण कि, वह बड़ा दया
; इसीसे तो उसने हठात् एक दासीको बीमार क
वण्यको उसकी फिक्रमें फंसा, तुम्हें एक नवीना गृहिण
ान करदी। इस समय नवीना ही तो लावण्य है। देख
विधाताकी कैसी कृपा है !

ज्ञानेन्द्रने मनही मन गूढ़कृत रहस्यका मर्म पा लिया

ामलोचनने कहा—"काण्डोंकी आशङ्का तो मैंने तुम्हें पहले
ो जनाई थी। भगवान् मेरे इस सोनेके चाँदको कलंक से
चावे। अभी और क्या-क्या होना है—यह कुछ मालूम
हीं।"

ज्ञानेन्द्रने पूछा—"क्या होनेकी आशङ्का पर भी आप
विश्वास करते हैं?"

लोचनने कहा,—"राम कहो बेटा, भला मैं ऐसा सोच
सकता हूँ? मेरा फ़र्ज़ सिर्फ तुम्हें सावधान करनेका है।
ज़रा सोच-समझ कर काम करना।"

ज्ञानेन्द्र भी इस वाक्यकी सार्थकता का पता पा गये। उन्हें
भी अपने बद्धमूल सन्देह का बहुत कुछ ख़याल है। अतः
मामला और न बढ़ाया। बोले—"सुना है, भजहरिने मुक़-
द्दमेमें सूखा जवाब दे दिया। उसने साफ़ कह दिया कि,
मेरे पास विधुभूषणकी एक पाई भी प्राप्य नहीं।

रामलोचनने कहा—"यह बात कुछ नयी नहीं है।
मैं यह पहलेसे ही जानता था कि, भजहरि उसके लिये साफ़
इन्कार कर जायगा। लेकिन अब किया क्या जाय?"

ज्ञानेन्द्र बोले—"किया क्या जाय? मैंने विधुभूषण और
वकीलोंको पत्र लिखे हैं। अब मुक़द्दमा उल्टा चलाना पड़ेगा।

सोलहवाँ परिच्छेद

प वित्र गङ्गा-यमुनाके संगम-क्षेत्रमें प्राणत्याग करके
स्वर्ग प्राप्त करना पीड़िता अभागिनी दासी
भाग्यमें नहीं बदा था। बहुतसे डाक्टरों, अनेक
द्योंके परस्पर परामर्श करने पर भी रुग्णा परिचारिका
ीवन का अन्त नहीं हुआ। वह पशु-योनि त्याग क
न्धर्व-जन्म लाभ नहीं कर सकी। पहले की भाँ
पने जीवनके अवशिष्ट भोग भोगने लगी। लेकि
ारोग्य तो हुई, पर यन्त्रणामुक्त न हो सकी। दूस
ब्दोंमें रोगवृद्धि होनेपर भी मृत्यु-मिलन नहीं हुआ
न ययौ न तस्थौ" की कहावत ही चरितार्थ हुई। लाव
समयोंने उस परिचारिका की निष्कृतिके लिए वास्त
बहुतसे प्राण-व्यापी यत्न किये थे। सन्तानके लिये जन
ास प्रकार यत्न किया करती है, जिस प्रकार स्त्री स्वामी
ये परिश्रम स्वीकार करती है, लावण्यने उसी प्रकार उ

म हैं,वे दूसरेको उससे अधिक निन्दित वा प्रशंसित आच
का अनुरागी देखनेपर अत्यन्त विरक्त हो जाते हैं,और यही
ीं वरन् वैसे अनुष्ठानके निन्दावादसे देशको प्रतिध्वनि
देते हैं। जो आदमी सारे दिन दश चिलम सुलफा फूँक
वह दूसरे को पचीस चिलम सुलफा पीते देख, आँखें
ड़ कर विज्ञ विद्वान् की भाँति कहता है—"हाय-हाय, य
ना सुल्फा पीकर जीवेगा वा मरेगा?" जो प्रतिदिन एक
को अफीम खाता है, वह दूसरे को एक आनेके हिसाब
फीम खाते देख विस्मयसे कहने लगता है,—"भाई इतन
फीम खाकर क्या पागल बनोगे?" ऐसे भाव सभी जगह हैं
लावण्यमयीने उस परिचारिकाकी निष्कृतिके लिये वास्तव
व उपाय किये। पर वह पशु-योनि त्यागकर गन्धर्व-ज
भ नहीं कर सकी। पहलेकी भाँति ही अपने जीवनके अवशि
ग भोगने लगी। लेकिन आरोग्य हुई, पर यन्त्रणामु
हो सकी। दूसरे शब्दोंमें रोगवृद्धि होनेपर भी मृत्यु-मिल
हीं हुआ। "न ययौ न तस्थौ" की कहावत ही चरितार्थ हुई
लावण्यमयी की यह निःस्वार्थ सेवा,अभूत आश्रित-वात्सल
र परदुःख-कातरता विशेष प्रशंसनीय होनेपर भी, दुर्भाग्य
। उसके साथियोंको पसन्द न आयी। बहुतोंने उसे लावण्य

जाने पर, इसबारेमें चुपचाप फुस-फुस किया करती थीं
तों को आँखोंमें अपनी स्वामिनी का यह काम बेतर
क्षा। लेकिन वहाँ ऐसे भी आदमी थे, जिन्हें वह अन
ष्टसे दीखा। कोई समझा,—लावण्य वास्तवमें स्वर्गकी सुन्द
। जो सौन्दर्य्यमयी, विपुल धनशालिनी, स्वामी-प्रेमनिरत
तो समस्त सुखोंका विसर्जनकर—आश्रिता, फिर भि
तोया दासीके लिये खाना-सोना छोड़ सकती है, आत्म-सुख
को परोपकार के मन्दिरमें अनायासही बलि कर सकत
अपने आपको परिचारिकाकी अपेक्षा किसी प्रकार उन्न
समझकर, महामहिम-मय महेश्वर द्वारा सृष्ट जीवोंको अप
मान जीव समझती है, वह वास्तवमें मनुष्य-रूपमें देवता है
पत्नीके ऐसे उदार स्वभाव और भावोंको ज्ञानेन्द्रनाथ ख़
नते थे। इसीसे उन्होंने अपने को सर्वतोभावसे उस देव
शासनाधीन बना लिया था। एवं किसी प्रकारकी आलोचन
कर, पत्नीके अनुष्ठित कार्य्योंको देख ज्ञानोन्नति अव्या
रनेका अभ्यास डाल लिया था। अपनी असुविधाओंको कु
मा नहीं। जो प्रेममयी उनकी नित्य की सङ्गिनी है, अ
उसे कभी-कदाच देख लेते हैं। जिसके बिना सलाह
वरी के काम पूरा हो न हो सकता था, उससे अब बा

वे जाते थे अपनी प्रेयसी को देखने, हर समय रोगिणीके दुःखसे दुःखी रहनेवाली दीनवत्सलाको देखने। और समझते थे कि,—मैं तुच्छ तो इस देवीकी पद-रेणु छूने योग्य भी नहीं। मुझ जैसे नीच, स्वार्थपर व्यक्तिको यह स्वर्ग की देवी कैसे मिल गयी? इतना होने पर भी उन्होंने उसके व्रतको कभी भङ्ग करनेकी कोशिश नहीं की। शब्दों और व्यवहार द्वारा उन्होंने पत्नीके इस महान् कार्य्यका सादा अनुमोदन ही किया। वे प्रशंसाके नेत्रोंसे, गौरव की दृष्टिसे ही उस देवीके कार्य्यों को देखा करते थे। हाँ, यदि कुछ कहते थे, तो उससे स्वास्थ्य का खयाल रखने को अवश्य कहते थे। एक दिन इसी विषय पर पति-पत्नीमें बातचीत होरही थी। लावण्यने कहा—"मेरा स्वास्थ्य क्यों नष्ट होगा? मुझे विशेष परिश्रम तो करनाही नहीं पड़ता, केवल उसके पास बैठीही रहती हूँ। पर यह बात ठीक है कि, इस दासी की सेवासे आप आजकल अवश्य वञ्चित रहते हैं। इसका मुझे भी दुःख है। लेकिन करूँ क्या? आपसेही तो मैंने पर-सेवा की शिक्षा प्राप्त की है। तो क्या उसके लिये आप इतना भी कष्ट स्वीकार न करेंगे?

ज्ञानेन्द्रनाथने कहा—"एक नहीं सौ क्लेश सहन कर सकता हूँ। लेकिन ...

रही है; यह ठीक है कि उनकी सेवा आपको पसन्
हीं; लेकिन सोच देखो. उस बेचारी का यहाँ कौन है
ने हमारे लिये देश त्यागा, अनेकों कष्ट स्वीकार कर
थी, तब धर्मकी दृष्टिसे हमको उसके दुःखके लिये दायी हैं
जो आन्तरिक प्रशंसा ज्ञानेन्द्रके हृदयमें सदैव पैदा होत
ती थी, स्त्रीके वाक्य सुनकर वह बेहद बढ़ गयी। वे भी
छ न कहकर वहाँसे चल दिये। ज्ञानेन्द्रनाथ के जानेसे पह
दूसरे द्वारसे नवीना वहाँ आचुकी थी। उसे देखक
नेन्द्र रुक गये। नवीना व्यस्त है, कुछ एक अस्थिर भी है
ीलिये उसके वस्त्र ज़रा इधर-उधर हैं। ज्ञानेन्द्रनाथ
चा—"वास्तवमें नवीना बड़ी सुन्दरी है!"

लावण्यने कहा—"ननदी, तुम्हारे साथ इस यात्रामें आने
ा बड़ा उपकार हुआ है; तुम्हारे भाई जो मेरे खुश
लेने पर भी सानन्द हैं, यह सब तुम्हारी ही दया है। तु
वश, हर तरहसे उनकी सेवा करती रहती हो। क्या य
ा मुझसे कभी चुकाया जा सकता है?"

नवीना मनही मन कहने लगी—"सो क्या तुम्हारे अनु
हसे? जिस दिन तुम जैसे कण्टक को दूर कर, उस स्था
अपने आपको बिठाकर उनकी सेवा कर सकूँगी—उ

सम्भ्रम किया करती थी। संसारके सभी काम ज्यों-त्यों करके चले आते हैं, पर इस दुःखिनी का जीवन बीत जाने पर फिर नहीं आनेका। इसलिये तुम किसी प्रकारकी चिन्ता न करो। यह मेरा फ़र्ज़ है।"

इस कथोपकथनने ज्ञानेन्द्रनाथके कानोंमें प्रवेश किया, नवीनाके उपरोक्त उदार वाक्य उन्हें बड़े मीठे लगे। क्यों? यह हम नहीं जानते।

दासी का व्याधिग्रस्त होना और लावण्यका उसकी सेवा में नियुक्त होना, एक आदमी को बहुतही बुरा लगा। वृद्ध रामलोचन इस व्यापारसे अनर्थ होजाने की सम्भावना करके और कब क्या हो, उसे जाननेके लिये अपने नेत्र और कानों को हमेशा तैय्यार रखने लगे।

उसी दिन दोपहरके समय नवीनाके साथ ज्ञानेन्द्रनाथ का साक्षात् हुआ। नवीनाने कहा—"तुम्हारे लिये जलपान तैय्यार है, क्या खाओगे?

ज्ञानेन्द्रनाथने कहा—"विशेष इच्छा नहीं है। आज तबी-यत कुछ ख़राब सी मालूम होती है।"

नवीनाने कहा—"तबीयत ख़राब है! यह बुरी सुनायी! तो फिर आज कहीं जाओ मत। पलँग बिछा हुआ है, चलकर

जानेको ठहरे। सिर्फ माथेमें दर्द है, गङ्गाजीके किनारे घूम फिरकर कुछ ताज़ा हवा खानेसे ही आराम हो जायगा।"

नवीनाने कहा—"अभी धूप है। बाहर जानेका कुछ काम नहीं। मैं कहीं न जाने दूँगी। मामीने कह दिया है कि, उन्हें किसी तरह की तकलीफ न मिले। आपके सुख-स्वाच्छन्द्यविधानका भार अब मेरे ऊपर है। तब क्या मेरी बात नहीं सुनी जायगी?"

ज्ञानेन्द्रनाथने कहा—"कौन कहता है कि, तुम्हारी बात नहीं सुनी जायगी? वह भार दे या न दे, तुम मेरे भले के लिये ही तो ऐसा कहती हो, तो फिर क्यों न सुनूँगा? मैं इस धूपमें कहीं नहीं जाऊँगा। बाहर लोचनदादा मेरी बाट जोह रहे हैं, उनसे कुछ बातें करनी हैं। इस समय मैं बैठक में जाता हूँ।"

रामलोचन के ऊपर नवीना पहलेसे ही नाराज़ थी। क्यों नाराज़ थी? इसका ठीक कारण खुद नवीनाको भी नहीं मालूम था, लेकिन यह वह अच्छी तरह जानती थी कि, [बु]ढ़ा मेरे सुखमें एक बड़ा जङ्गी काँटा है। उसने कहा—"उस [बु]ढ़े के पास तो तुम दिन भर ही रहते हो। क्या मैं ऐसी [बु]री हूँ, जो मेरे पास तनिक देर ठहरना भी भारी है? मैं [तो] तो तुम्हारा किन ———"

ज्ञानेन्द्रने कहा—"यदि तुम्हें मेरे जानेमें असन्तोष होता है, तो लो मैं कहीं नहीं जाऊँगा। अब बताओ, और क्या चाहती हो?"

नवीनाका मुँह यह सुनकर खुशीसे खिल उठा। बोली,—"आपने कहा था कि मुझसे आपको बहुतसी बातें करनी हैं, आज उन्हींके बारेमें कथोपकथन होना चाहिये।"

सुन्दरी नवीनाने अपने अपूर्व कटाक्ष और लालसा-जनित चञ्चल भाव-भङ्गीके द्वारा ज्ञानेन्द्रनाथसे भीतर की बातें सुनने के लिये बहुतसा अनुरोध किया। ज्ञानेन्द्रने देखा कि—"आज नवीना गुलाबकी यौवना है? उस नवोदित सरोजनीके वर्णके ऊपर नवोदित भास्कर का किरणपात-तुल्य अपूर्व अङ्गराग, विस्तृत मदन-निकेतन-सदृश नयन, अपूर्व ईषत् कुञ्चित भ्रू भङ्गी, हास्यरेखा-समाच्छन्न ओठ, और मराल-विनिन्दित ग्रीवा आदि सभीने ज्ञानेन्द्रनाथकी हृदयमें एक प्रकारका आघात पैदा कर दिया। उन्होंने समझा, यदि इस संसारमें कहीं रूप है, यदि किसीके पास निष्कलंक सौन्दर्य है, तो वह नवीनाके पास है।"

ज्ञानेन्द्रनाथ कुछ भी उत्तर न दे सके। बहुत देरतक मुग्ध-मानस की भाँति केवल नवीना के मुँहकी ओर देखते रहे।

सम प्याग ——

"नवीना ! तुम बड़ी सुन्दरी हो, वास्तवमें तुम्हारा रूप तुलना रहित है !"

ज्ञानेन्द्रनाथके वाक्य अर्द्धोच्चारित और अस्फुट थे, कण्ठ-स्वर कम्पित था। नवीनाने कहा—"तुम्हारी तरह संसारमें कौन सुन्दर है ? स्वर्गमें भी नहीं। अभागिनी नवीना तो तुम्हारी पदरेणु के भी योग्य नहीं है।"

बात समाप्त करनेके साथ-साथ नवीनाने कुछ हँसकर नेत्रोंके कटाक्ष मार ज्ञानेन्द्रके हृदयमें पतनकारी हलाहल भर दिया। फिर-आगे कहते लज्जा आती है—ज्ञानेन्द्रनाथके विशाल वक्षके ऊपर उसने अपना शोभामय मुख भी रख दिया। कामकी उत्तेजना होगयी। उस समय ज्ञानेन्द्र उन्मत्त थे, उस समय रूपकी आगने उनकी सारी पवित्रता को भस्म कर डाला था, अब उनका विवेक और धर्म पाप-धारामें बह चला ! पाशव आकांक्षाने उनकी समस्त सतर्कताका मूलोच्छेद कर दिया ! वे इस समय मूढ़, विचारहीन, काम-किङ्कर और घृणित पशु हैं !

ऐसीही हालतमें दोनो जने कमरेमें चले——

आगे क़लम नहीं चलती, उसे अपनेको कलंकित बनाते लज्जा आती है !

सत्रहवाँ परिच्छेद।

जिस श्रीभगवानने द्वापरके अन्तमें अर्जुनका सारथ्य ग्रहण कर, तत्त्वोपदेश द्वारा संसारको धन्य किया था, उसी भगवान्ने एक जगह कहा है कि,—"यततोह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः। इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः।" अर्थात् 'इन्द्रियोंके दमन करनेका प्रयत्न करनेवाले विद्वान्के भी मनको, हे कुन्तिपुत्र! ये बलवती इन्द्रियां बलात्कार से मनमानी ओर खींच लेती है।' इसी भावको भगवान मनुने अपने शब्दोंमें इस प्रकार कहा है कि—'बलवानिन्द्रियग्रामो विद्वांसमपि कर्षति।' इसीसे ज्ञानेन्द्रनाथ विद्वान्, बुद्धिमान, सर्वतत्त्वभाव और जितेन्द्रिय होने पर भी सांसारिक नियमको अतिक्रम न कर सके। जिस दुर्जय लोभका संवरण करना मनुष्यही क्यों देवताओंके लिये भी असंभव है, ज्ञानेन्द्रनाथ उसी पाप-पंकमें जा पड़े। अधःपतन पूरे तौरसे हुआ। जिस तरह हुआ, उसे हम नहीं लिखेंगे।

और उनकी स्त्री श्रीमती ठकुराइनजी बारम्बार सावधान रहनेका उपदेश देते रहते थे, किन्तु ज्ञानेन्द्रनाथने ऐसी आशङ्काओंको अज्ञजनका भ्रम समझकर उनपर कर्णपात नहीं किया। अपने चरित्रबलपर भरोसा कर, उन्होंने स्वप्नमें भी अपने अधःपतनके चित्रको नहीं देखा। अभिमान चूर्ण हुआ। उनके आत्मनिर्भरत्वकी नींवपर खड़ी विश्वास-अट्टालिका ढह गयी।

अगले दिन ही पीड़िता दासीको बहुत कुछ आराम हो गया। उसके पास हर वक्त रहनेकी अब किसी को ज़रूरत नहीं रही। लावण्यमयी आज बहुत दिनों बाद अपने शयन-मन्दिरमें है, दीर्घकालके अनन्तर फिर निश्चिन्त मनसे ज्ञानेन्द्रनाथके साथ कथोपकथन करनेका सुयोग मिलनेकी आशासे वह बड़ी प्रसन्न हुई। कमरा संध्याके बाद उज्ज्वल प्रकाशसे ज्योतिर्मय हो रहा है, शय्या मालतीके फूलोंके ढेरकी भाँति श्वेत शोभाका विकीर्ण कर रही है। किन्तु ज्ञानेन्द्र वहाँ नहीं। दासीको भेजकर बैठक-खानेमें दिखवाया। दासी लौट आयी, वहाँ भी ज्ञानेन्द्रनाथ नहीं हैं। घबराकर लावण्य वहाँसे चली गयी। दूसरे कमरेमें जानेसे नवीना दिखायी दी। उसे देखकर आग्रहके साथ पूछा,—"ननदो, कुछ मालूम है तुम्हारे भैया कहाँ हैं? संध्याके बाद तक तो वे आजतक कभी बाहर रहे नहीं।"

ा। यदि लावण्य स्त्रीका मुख देखकर ही हृदयकी बा
न लेनेकी विद्या जानती होती, तो तत्काल जान लेती कि
ीना अब उसकी ननदी नहीं है। नवीनाकी सभी बातोंमें
रिवर्त्तन है। लावण्यने फिर पूछा यह ठीक है कि, मैं
ई दिनसे उनके दर्शन नहीं किये, और यह भी मालूम
वे कई रोज़से रात और दिन बाहरकी बैठकमें रहते थे
हुत रात जानेके बाद उन्हें यहाँ आनेकी फुर्सत मिलती थी
किन आज उनका कहीं पता नहीं। क्या इस बारेमें कुछ
ानती हो ?

नवीनाने कुछ कम्पित स्वरमें, सिर हिलाकर कहा—"कु
ह नहीं सकती। सदा तो आदमीके एकसे भाव नहीं
हते।"

उत्तर अच्छा नहीं लगा। क्योंकि लावण्यके हृदयमें ज्ञानेन्द्र
थके सम्बन्धमें किसी प्रकारके भावान्तरकी कल्पना नहीं
ा हुई थी। वह कुछ विरक्तिके साथ वहाँसे चली गयी
ामदेमें आनेपर एक दासीने कहा—"बहूजी, चक्रवर्ती
बूके बिस्तरेके नीचे एक पत्र पाया है। पत्र आपके लि
खा गया है।'

लावण्यने कहा—"वह पत्र कहाँ है ?"

"लावण्य,

"मैं अपराधी हूँ। इस समय तुम्हें अपना मुँह दिखाना मेरे साहससे बाहर है। यदि पापके अंक हृदयसे मिट जायँगे, तो फिर तुमसे साक्षात् होगा। मेरे पापका परिणाम बड़ा भयानक है। जब कभी हृदय निर्मल हो जायगा, तभी सारी बातें अपने मुँह से खोल कर कहूँगा। क्षमा माँगनेकी हिम्मत नहीं।

तुम्हारा फणीन्द्र।"

पत्रको हाथमें लिये कम्पित-काया लावण्य शय्याके ऊपर बैठ गयी। उस समय उसकी हालत बड़ी शोचनीय थी। देखनेमें वह पाषाण-गठित प्रतिमा थी, श्वासोच्छ्वासकी गति अवरुद्ध थी, हृदयमें मानो किसी तरहकी भी क्रिया नहीं थी, नयन निमेषहीन थे। बहुत देर उसी तरह बीत गयी। सहसा उसी दासीने फिर आकर कहा—"बहू, चक्रवर्त्तीजीने एक और पत्र दिया है।"

लावण्यकी नींद टूटी, बोली—"ला, कहाँ है?"

दासीने पत्र दिया और लावण्यके इशारेसे वहाँसे चली गयी। लावण्य वहीं बैठी-बैठी पत्रको पढ़ने लगी। पत्रमें लिखा था,—

"श्री चरणकमलेषु

है, समझ लें। मैं ब्रह्मचारी हूँ, ब्रह्मचारीका पतन छिपाई करता है, लेकिन इन बातोंसे कुछ मतलब नहीं।

"मैं कितने दिनों तक इस प्रकार रहूँगा, यह नहीं जानता। आपमें मैं हृदयसे भक्ति और विश्वास करता हूँ। मेरी स्त्री स्वर्ग की देवी है, आप उसको देख-रेख रक्खें, जिस तरह हो आप पति-पत्नी मेरी लावण्यको प्रसन्न रक्खें।

"मेरी धन-सम्पत्तिका ऐसा कोई भी काम नहीं, जो लावण्यको न मालूम हो। आप भी बहुत कुछ जानते हैं। मेरी स्त्री अन्तःपुर-निवासिनी है, उसे कोई ठगी नहीं। बरके सभी काम आपको करने पड़ेंगे। अब आप शीघ्रही स्वदेश लौट जायँ। इति—

प्रणत—ज्ञानेन्द्रनाथ राय।"

यह पत्र भी लावण्यने पढ़ डाला। इसबार उसकी आँखोंमें पानी भर आया। ज्ञानेन्द्रनाथके हाथोंसे लिखे हुए वे दोनों पत्र हृदयसे लगाकर लावण्य पलँग पर गिर पड़ी और बहुत देर तक नीचा मुँह किये रोती रही। वह सोचने लगी— "उन्होंने लिखा है कि मैं पापी हूँ, तो अब यह समझना चाहिये कि आजसे पुण्यका नाम पाप होगया। यदि ऐसा है, तो यह पापही देवताओंका अवलम्बनीय हो जायगा। जो झूठ बोलना नहीं जानते जो

सी सत्कार्य्यको करके उसे असत्कार्य्य समझ बैठे हों
सम्भव! कतई असम्भव है! यदि इन्द्र, चन्द्र, वा
र वरुण भी कहें कि, ज्ञानेन्द्र पापी हैं, तो मैं उन्हें
थ्यावादी कहूँगी। यदि सूर्य्य भगवान् भी साक्षी दें कि
नेन्द्र अधर्म-कलुषित हैं, तो मैं कहूँगी—तुम्हारे ध्यानभ्र
नेके दिन दूर नहीं।"

उन्मादिनी की भाँति लावण्यमयी अत्यन्त चञ्चलभावसे उ
ड़ी हुई एवं उसी कमरेमें बारम्बार घूमने लगी। रोदन
नित आरक्त नयना, मनके चाञ्चल्यवश विस्रस्तवसना, निरति
वेगजनित विशृङ्खल केशा, सुन्दरी-शिरोमणि लावण्यमयी
ाड़े ज़मीन पर लोटने लगी। इसी प्रकार घूमते-फिर
हसा लावण्यमयीकी दृष्टि एक छोटेसे फोटो पर जा पड़ी
वारमें सुनहरी-चौखटे (*Golden frame*) में जड़ा एक फोट
टका रहा था। उस फोटोमें ज्ञानेन्द्रनाथकी मूर्त्ति अङ्कि
। लावण्यने उस तस्वीरके पास जाकर बहुत देरतक एव
 दृष्टिसे उसका निरीक्षण किया और बोली—"यह पुण्यव
लाभूमि-तुल्य प्रशस्त ललाट, यह सरलताके निकेतन-तुल
स्त नयन और यह धर्म की जीवन्तीप्रतिमूर्त्तिके समा
त्र शरीर क्या पापी है? नहीं-नहीं, ज्ञानेन्द्रनाथ, तु

तो आपको पापी नहीं समझती। आप चाहे पापी बनें पुण्यशील बनें, उस विचारके लिये मेरा क्या अधिकार —आपको पद-सेवा करना धर्म है। यदि आप अपनेको पापी समझते हैं, तो मैं अपने धर्मसे क्यों वञ्चित रहूँ? देव, बिना आपको देखे बहुत दिन बीत गये हैं, चिरकालसे मन-भर कर आपको पद-सेवा भी नहीं की। फिर बताओ तो, यह दासी किस तरह जीवन धारण करेगी?"

फोटो हाथमें लेकर लावण्य फिर शय्या पर आकर बैठी। उस समय उसे अपने तनका तनिक भी खयाल नहीं था। एकदम बे-खबर थी। इतनेमें धीरे-धीरे एक युवतीने कमरेमें प्रवेश किया। लेकिन लावण्य इतनी अन्ध-मग्न थी कि, उपरोक्त युवती का आना उसे कतई नहीं मालूम हुआ। वह कहने लगी—"अच्छा, प्राणनाथ, इन कई एक दिनोंसे जो मैंने अपना कर्त्तव्य नहीं पाला, क्या इसीलिये नाराज़ होगये?—तो क्या इसी लिये मुझे दोषी न कह, अपनेको आप अपराधी बन गये? किन्तु देवता, पर-सेवा का व्रत तो आपने मुझे स्वयं सिखाया था, और इसीसे आपको प्रसन्न रखनेके लिये मैं उसका पालन करती रहती हूँ। फिर मेरा क्या दोष है? दयामय, आज क्षमा करो, अब मैं ऐसा कभी न

। नवीनाने लावण्यकी सभी बातें सुनलीं। उसके नेत्रों
सू देख, उसे हृदय-भेदी दुःख-प्रलाप करते सुन, नवीना क
ह खुशीसे खिल उठा। वह मनही मन सोचने लगी-
भी थोड़ीसी कमी है, भगवान् तुम्हें इसी तरह जन्म-भ
ाता रहे। लेकिन यह क्या हुआ? बाबू बिना किसी
ह-सुने कहाँ चले गये? मुझसे तो उन्होंने कुछ भ
ीं कहा। मालूम होता है—यह काण्ड इसीलि
ा है कि, आजही रातमें वे मुझे यहाँसे ले जायँ
ः आज रात भर तैयार रहना चाहिये।"

लावण्य फिर उठ खड़ी हुई। उठकर देखा कि, नवीन
मने ही खड़ी है। विस्मयके साथ पूछा—"कितनी देर
यी हुई हो?"

नवीनाने जवाब दिया—"अभी आयी हूँ। क्या हुअ
मी? तुम रो क्यों रही हो? क्या अभी तक भैय्या न
ये?"

लावण्यने हाथ के पत्र और फोटोको सन्दूकमें रख दि
र कहने लगी—"क्या बताऊँ अभीतक कुछ भी खबर नहीं
ली? हाँ, कई रोज़से तुम्हीं तो उनकी खोज-खबर रखत
। कुछ कह सकती हो, अभी तुमने उनको किस देख

खबर पानेके लिये हाथ पकड़े आते हैं, भगवान् की कृपा होने पर कुछ दिनों बाद पाँव पकड़नेका भी मौका पाजायगा। बोली—"किन्तु तो कई दफा देख पड़ी थी, और ऐसा हुआ ही करता है; उसके लिये तुम चिन्तितही क्यों होती हो?" उसने मनमें कहा,—"लेकिन यह बात ठीक है कि, जो स्त्री समझती है, कि स्वामी केवल मेराही है—उसे अन्तमें इसी प्रकारके कष्टोंका सामना करना पड़ता है।"

यह क्या! नवीना का यह कैसा असङ्गत उत्तर! लावण्यने फिर पूछा—"मालूम होता है, तुम इस बारेमें बहुत कुछ जानती हो? अच्छा, मुझे और किसी बातसे सरोकार नहीं, मैं तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ, यदि तुम जानती हो—तो मुझे केवल इतनाही बता दो कि,—वे इस समय कहाँ हैं?"

वास्तवमें लावण्यने उस समय नवीनाके चरण पकड़ लिये थे। नवीनाने कहा—"मुझे मालूम तो नहीं है। लेकिन जानने की चेष्टा करूँगी। चेष्टा करनेसे अवश्य ख़बर मिलेगी, तुम स्थिर होओ।"

लावण्य उठ खड़ी हुई। नवीना चेष्टा करेगी, नवीना ख़बर पाने की कोशिश करेगी, लेकिन किस तरह करेगी—उसका उपाय लावण्यको कुछ भी नहीं दीखा। मनमें बड़ा

अठारहवाँ परिच्छेद।

रा घवपुरके भजहरिरायकी बाहरकी बैठकमें एक कोई सी सभा बैठी हुई है। इस सभाका उद्देश्य किसी प्रकारका राजनीतिक आन्दोलन करने का नहीं है कोई सामाजिक वा साहित्यिक आलोचना भी नहीं क बयगी, पर-निन्दा और पर-चर्चाके लिये ही आज इ सभाका विशेष अधिवेशन हुआ है। सभामें अन्यान्य सभ ओंकी भाँति पान सिगरेट और हुक्का पीनेकी मनाही नह । यहाँका हरएक व्याख्याता और श्रोता बिना चिलम र लगाये कुछ कर ही नहीं सकता। व्याख्याता बड़े विक । एक आदमी की बात रोक, दूसरा आदमी व्याख्यान दे हुक्कासे चिल्ला रहा है। एक साथ दो तीन आदमियों तचीत होनेसे एक बेढब दन्दसा मच रहा है और कि ई भी बात कुछेक मुँहसे निकलते न निकलते और दूस

मान है। स्वयं सभापति श्रीमान् भजहरि राय एक चटाईके ऊपर पलथी मारे बैठे हुए हैं। उनके सिर पर एक छोटासा सूखा अँगोछा पड़ा हुआ है। उनके सामने उसी चटाई पर और एक ब्राह्मण बैठा हुआ है। पासही दूसरे आसन पर ताराचन्द कसेरा तम्बाकू आदिका सरञ्जाम लिये बैठा है। उसीके पास चन्द्रनाथ वसु ज़मीन पर ही विराजमान हैं। एक मल्लाह कुछही दूर ज़मीन पर हाथ टेके बैठा है।

चन्द्रवसुने कहा—"बात अब तक तो छिपी हुई सी थी।"

ताराचन्द कसेरा चिलममें तम्बाकू धरते-धरते बोला—"छिपी हुई थी तो क्या हुआ? हम तो पहलेसे ही जानते थे कि, मामला गड़बड़ है, लेकिन डरके मारे नहीं कहा। इस समय वह यात्रा का बहाना करके परदेश चला गया है। इसीसे तो इतना गोलमाल खड़ा किया गया है।"

जो ब्राह्मण श्रीमान् सभापतिजीके सामने बैठे हुआ था, उसने ज़मीन पर हाथ पटक कर कहा—"डर किसका था, रह तो बताया ही नहीं? हम साफ़ कहते हैं कि, ज्ञानेन्द्रने रब तक चूहड़ो-चमारों का ही काम करके दश रुपये पैदा किये, हम तो वैसा नहीं कर सकते। डर, डर, अरे डर किसका? र धर्मात्मा का होता है, पापियों से भी कहीं डर होता है? डर

जो उससे कम ...

याद रखना चाहिये—यह ब्राह्मण प्रायः हमेशा ही किसी न किसी कारणसे ज्ञानेन्द्रके पास आया करता था, उनके सामने बैठ मीठी-मीठी बातोंसे उनकी प्रशंसा किया करता था और महीनेमें पन्द्रह रोज़ इस पापीके उन्हींके अन्नसे कटते थे। ज्ञानेन्द्रनाथ के यात्राके लिये चले जानेसे ही इसे कुछ नहीं मिला, इससे क्रोधका द्वार खुल गया। जो हमभाग्य आश्रित लोगोंको परिणाम चिन्ता न कर कहीं विदेश चला जाय, वह अजस्र गालियोंका पात्र है—इसमें कोई सन्देह नहीं।

ब्राह्मणकी स्पीच समाप्त होनेके पहले ही भजहरिके देहमें मानो बिजली भर गयी। वे सम्हल कर बैठ गये और बोले—"सहायताके लोभसे लोचन जैसा आदमी ज्ञानेन्द्रनाथको देवता समझ सकता है, लेकिन हम उस जैसे पापिष्ठसे किसी प्रकार की भी सहायताके प्रत्याशी नहीं। उसकी छायाका दर्श करना भी हम तो पाप समझते हैं। आज तक ज्ञानेन्द्रने कोई [illegible]ण्य-कार्य्य नहीं किया। उसने नवीनाकोही बिगाड़ा है। [illegible]ाँवमें रहकर इस प्रकार के दुष्कर्म करना ज़रा टेढ़ी खीर थी, [illegible]ीसे वह नवीनाको—तीर्थ-यात्राके बहानेसे—लेकर भाग [illegible]या।"

परिवारको छोड़ ज्ञानेन्द्र बाबू मनोरमा को लेकर भा
।। लेकिन मैं यक़ीन नहीं करता। लोगोंके मनकी बा
मात्माही जाने।

चन्द्रवसुने कहा—"तुम तो बेटा, साफ़ ही करो। ज
। सब कुछ जानते हो, फिर कहने की क्या ज़रूरत
की बात पूरी होने न होतेही ब्रह्मदेव क्रोधसे पाग
कर कहने लगे—"हरामज़ादा, गँवार मालूम होता है
वह पापी अब भी रुपया भेजा करता है?"

भैजहरि बोले—"अबे! तेरी लुगाई भी जवान है, देख
ों ज्ञानेन्द्रकी नज़र न पड़ जाय, वरना लुगाईसे भी हा
बैठेगा।"

मल्लाहने नीचा मुँह कर लिया। ताराचन्द बोला-
ह! उस विचारे गँवार के मुँह क्यों लगते हो? यह
र है। हमें यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि, मुक़द्द
मारे ही मुआफ़िक़ है।"

ब्राह्मण बोला—"हाँ, हम यह ज़ोर देकर कहते हैं कि
(महाशयकी मुक़द्दमेमें ज़रा भी आंच नहीं आसकती
कि विधुने तो झूँठा दावा किया है; यह बात कौन नह
——"

जायदाद किसने खरीदी? इस गाड़ी भरे कुटुम्बका पालन-पोषण किसने किया? हरि महाशयने ही तो। ऐसी हालतमें चाचाके विरुद्ध एक बेवकूफ़के कहनेसे नालिश करना विधुको उचित था?"

ताराचन्द बोला—"छः! छिः! इन लोगोंको तनिक भी धर्म्मका ख़याल नहीं। घोर कलिकाल है न! हाँ, तो मुक़द्दमा किस तरह मुआफ़िक़ हुआ?"

ब्राह्मण बोला—"मुआफ़िक़ होनेकी बात अभी ठीक तौरसे नहीं कही जा सकती, लेकिन इतना ज़रूर मालूम हुआ है, मुक़द्दमेकी शुरुआत जो हुई है वह हरिमहाशयके लिये अच्छी है। और हाकिम की बातोंसे तो मालूम होता है कि, वह इसमें अन्याय करना चाहता है।

भजहरि बोले—"इस समय मामला हिसाब दिखानेपर आ रुका है। काग़ज़-पत्रोंसे ही काम ले लिया जायगा, और गवाहों की ज़ियादा ज़रूरत नहीं।

चन्द्रवसु बोले—"काग़ज़-पत्रोंके लिये कोई चिन्ता नहीं। हरि महाशय एक धर्म्मात्मा पुरुष हैं। रघुनाथने बड़े परिश्रमसे काग़ज़-पत्रोंका काम करना शुरू कर दिया है। काग़ज़

मैंने ये सब बातें रघुनाथको बतादी हैं। अब कुछ डर की बात नहीं।"

ऐसेही समय रघुनाथके दर्शन हुए। उसे देखतेही मजहरि बोल उठे—"आओ बेटा आओ, तुम बड़े भाग्यवान् पुरुष हो। अभी हम तुम्हारी ही बातें कर रहे थे, तुम्हारी बड़ी उम्र है।"

रघुनाथ योग्य स्थान पर बैठकर बोला—"नयी बात सुनी है काका? कुछ खबर है, बाबूजी नवीनाको लेकर लापता होगये? आज लोचन चक्रवर्ती सब आदमियोंके साथ घर लौट आये हैं।"

यह सुनकर सब आदमी एक स्वरसे बोल उठे—"कब लौट आये? कहां हैं?"

रघुनाथने कहा—"अभी-अभी आये हैं। गाड़ियोंसे असबाब उतर रहा है।"

मजहरि बोले—"लौट न आते तो करते क्या? उन्होंने समझ लिया कि, ज्ञानेन्द्र तो अब नवीनाको लेकर भागही गया. उसके लौटने की कुछ आशा नहीं। अच्छा, उस बूढ़ेसे और कुछ पूछताछ की?"

रघुनाथ बोला—"कुछ नहीं। बूढ़ा कुछ भी नहीं बताना चाहता।" ब्राह्मण बोला—"मैं जाकर ...

ान से मेरी खूब दोस्ती है, उसीसे सारा हाल पूछूँगा
। जाता हूँ ।"

वसु महाशय भी चल दिये। रघुनाथ एक लम्बा साँ
इकर अस्फुट स्वरसे बोला—"अब कुछ भी आशा नहीं ?
भजहरि बोले—"किसकी आशा नहीं ? नवीनाकी बा
ते हो ? उसकी चिन्ता मत करो। तुम्हारी इच्छा अवश्
होगी। तुम बड़े अच्छे लड़के हो।"

रघुनाथने कहा—"ये सब लल्लो-चप्पोंकी बातें हैं। ज
छोड़कर उसे लेकर वह पाजी भागही गया, तब य
शा किस तरह हो सकती है कि, नवीना मिल जायगी ?

भजहरि बोले—"दिन-दहाड़ेका किया पाप अधिक दि
ीं ढका रहता। इस तरह का अत्याचार गाँव वाले क
ीं सह सकते। यह ठीक है कि, जवानीमें थोड़ाब
ाद स्वयं पैदा हो जाता है, लेकिन ज्ञानेन्द्र की भाँति को
पाप नहीं करता। हम क्या कभी दोषी नहीं हुए ? ताराच
हमारे सब हालतसे वाकिफ़ हैं।"

ताराचन्द बोले—"शानी घोषनकेबारेमें कहते हो ? आ
की साथ तुम्हारे गुलछर्रे उड़ाने की बात कौन न
नता ?"

ताराचन्द बोले—"राधाकृष्ण कहो भाई, इतनी ज़ियादती कौन कर सकता है ? तुम अपने आपकोभी नहीं देखते ? जब अधिक-ज़ियादती होने लगी थी, तभी तो तुमने उसके घर आना-जाना छोड़ दिया था। तुमतो दिन-रात वहीं रहने लगे थे, वहीं खाते थे, वहीं सोते थे, घर का फ़िक्र कुछ भी नहीं था—इन सब बातोंको तो हम खूब जानते हैं।"

भजहरिने कहा—"भाई मान-इज़्ज़त का सभीको ख़याल होता है। अधिक बढ़ानेसे काम बिगड़ जाता है। हर एक काम सावधानीके साथ करना चाहिये।"

रघुनाथ बोला—"काका आप मुझे अभी तक भरोसेमें ही रखते आये हैं। इससे मालूम होता है, आप अपना काम सध जाने पर, काग़ज़-पत्तर का काम और मुक़द्दमा जीत जाने पर, मुझसे क़तई किनारा कर जावेंगे। काका, तब तो मैं आपका ख़रीदा दास रहा! आपने भरोसा देकर, अपना काम निकाल लेनेकी चाल चली न ?"

ताराचन्द बोला—"डरो मत बेटा, इस समय सबको एक बड़े जालमें फँस गयी है। कुछ दिनों आनन्दसे समय बितानेके बाद शिकार अपनाही समझना। मैंने ऐसी बहुत सी घटनाएँ देखी हैं।

मत छाड़ो। निश्चयही तुम्हारे मनोरथकी सिद्धि होगी। अच्छा, अब ज़रा रामलोचनके पास चलना चाहिये।"

रघुनाथ बोला—"अगर जानेकी इच्छा हो तो जाओ, लेकिन मेरा जाना ठीक नहीं, क्योंकि बूढ़ा मेरे सामने कुछ भी नहीं कहेगा।"

ताराचन्द बोला—"अच्छा, एकबार जाना तो चाहिये।"

यह कह, तीनों जने वहाँसे चल दिये।

उन्नीसवाँ परिच्छेद ।

विधुभूषण बड़ी आफतमें है। बहुत दिनोंसे ज्ञानेन्द्र-नाथने उसे एक भी पत्र नहीं भेजा। विधुभूषण उनके पास बारम्बार पत्र लिखता है, किन्तु किसीका भी जवाब नहीं मिलता। यद्यपि उन्होंने ही मुकद्दमेके बारेमें कुल इन्तज़ाम किये थे, तोभी बिना उनके छाया-छत्रके नीचे रहे विधुका किसी काममें भी आगेको पैर नहीं बढ़ता। उसका हृदय फटा जाता है। विशेष कर चारों तरफके आदमी बड़ी बुरी-बुरी खबरें सुनाते हैं। आजकल ज्ञानेन्द्रनाथके निन्दावादसे तमाम गाँव भरा रहता है। ज़ियादातर तो ताऊके ऊपर नालिश ठोकनेसे उसीकी बुराइयोंका बाज़ार गर्म रहता है।

विधुभूषण खूब जानता था कि, ज्ञानेन्द्रनाथ धार्मिक-सम्प्रदायमें अग्रगण्य हैं। उस देव-तुल्य महापुरुषकी अशेष

ानेन्द्रनाथको ढूँढ़ निकाल कर, इस व्यर्थके निन्दावाद
वाना चाहिये । मुझे भी शान्ति उसी समय मिलेगी ।
; इसी प्रकारके सोच-विचार करता हुआ, कष्ट सहित उ
ो दिन बिता रहा था कि, ज्ञानेन्द्रनाथ और नवीनाः
इ रामलोचन अन्यान्य साथियोंके साथ घर लौट आये
: सुन विधु रामलोचनसे मिला । मिलनेसे अनेक बहुा
लूम हुए । पर यह मालूम न हो सका कि, ज्ञानेन्द्र औ
ोना कहाँ चले गये । इतना होनेपर, भी उसे रामलोच
ओंसे यह विश्वास नहीं हुआ कि, ग्रामवासियोंकी का
इके अनुसार ज्ञानेन्द्र नवीनाको लेकर कहीं भाग गये होंगे
: बात खुद रामलोचन भी नहीं जानते । विधुभूषण
र किया कि ज्ञानेन्द्रनाथ, हो न हो, किसी आफतमें फँ
' हैं । ऐसी अवस्थामें उनकी सहायता करना विधुभूषा
परम धर्म है । जिस तरह भी हो, परोपकारी ज्ञानेन्द्रक
ा लगाना चाहिये ।

अगले दिन विधुभूषणको कुलीयलने महाभयङ्कर रू
ारण कर लिया । प्रातःकालसे ही उसका छोटा भाई विधु
ारीसे ग्रस्त है । दोपहरके समय रोग बेहद बढ़ गया

नाश करनेमें एक समय कुछ भी उठा नहीं रक्खा था, जो ता
का बीज नाश कर देने को ही चेष्टामें निरन्तर रहते थे
शुभूषण उन्हींको अपना सहायक मानता है। इसीसे इस
हुए विपत्तिकाल में उसे एकमात्र उन्हींका आश्रय दीख
ा ।

भजहरि उस समय रघुनाथके साथ अनेक काग़ज़-पत्र
देख-भाल कर रहे थे। पासही चन्द्रनाथ वसु बैठ
ा तम्बाकू पी रहा था। भजहरि कह रहे थे कि
क है, बेटा ठीक है, और दश पाँच तारीखोंका हिसा
ालो। फिर तो कुछ कहना ही नहीं, समझलो, पौ बार
ारी है।

रघुनाथ बोला—"कुछ चिन्ता नहीं काका, आप ख़ाति
ा रखिये, मैं उनको भी समाप्त कर दूँगा। इसके बा
ी इच्छा देशत्यागी बननेकी है।"

भजहरिने कहा—"ननीके लिये? कुछ चिन्ता न
ा! एकदिन उसे घरमेंही देखना। हमारा शरीर पा
ड़े ही है, जो देवता को दयासे वञ्चित रहेंगे।"

चन्द्रनाथ बोला—"लेकिन यार, मुझे तो सन्देह है

काम कर दूँ। लेकिन आपने सिर्फ सब्ज़बाग़ दिखाक
टाला! अच्छा, अब तो पीछा छोड़ो।

चन्द्रनाथ बोला—"यह नहीं हो सकता। मुक़द्दमेव
ग्रयीं ख़त्म न होने तक तुम्हें एक दिनके लिये भी नहं
ड़ा जा सकता। काग़ज़ोंकी तसदीक़ तुम्हें ही कर
गी। बिना तुम्हारे कुछ भी न होगा।"

भजहरि बोले—"कैसे आदमी हो! तुम्हें मेरे ज
ौन नहीं? सरोहन कह चुकाहूँ कि मबीना तुम्हारी ही है
तुम्हें दिलाई जा सके, इसकेलिये बहुतसी तरकीबें भी
गयी हैं। लेकिन सोचने की बात है, जब तुम मेरे लि
ने कष्ट स्वीकार कर रहे हो, तब मैं तुम्हारा एक छोटा
काम नहीं कर सकूँगा?"

इस समय एक बड़ा भारी गोलमाल मच उठा। विस्मय
थ सबने देखा कि, एक कङ्कालकाया, रूक्षकेशा, पागलिन
ल्लाती-चिल्लाती एकदम उनकी बैठकके सामने आ खड़ी हुई
चाना, कौन है? यह है रामी धोबन। कई एक दिन
ी धोबनका दिमाग़ बिगड़ गया है। यह बात गाँववाले भ
नते हैं। लेकिन वह रोगकी अधिकतासे प्रायः नङ्गी अ
में अब सरे आम फिरने लगी है, इसकी किसीको भी म

खाया करते? एक दिन तो वह था, जब बिना मुझे देखे तुम्हें चैन ही न पड़ता था, और आज इतनी लापरवाही!"

रामो हा हा करके हँसने लगी। चारों ओर खड़े हुए लोग कहने लगे—"पागल होगयी है तो क्या है, पर बात ठीक कह रही है।" मजहरि सोचने लगे—"यह बला इस समय कहाँसे आगयी! धमकी देकर इसे भगा देना चाहिये।" ऊँचे स्वरसे कहा—"क्योंरी पागल! यहाँ क्यों आयी है? जा, भागजा रांड कहींकी, यहाँ फसाद मचाने आयी है?"

रामोने फिर एक कहकहा लगाया। इसके बाद अपने शरीरको खूब अच्छी तरह निहार कर कहा—"रांड! अब मैं रांड हूँ, पगली हूँ, लेकिन क्या रामो हमेशासे रांड नहीं थी। कुछ याद है, जब मेरे पाँव पकड़कर मिन्नत किया करते थे? क्यों उस दिनकी बात याद नहीं आती, जब मेरी थालीमें एक साथ खाना खाया करते थे? मैं उस समय पगली नहीं थी? मैं जब कभी किसी दूसरेसे बोलती थी, तब तुम मर-जानेका डर दिखाया करते थे, लेकिन अब मैं रांड हूँ। अब मुझे तुम धक्का कर भगाना चाहते हो?"

बहुतसे आदमियोंके सामने अपने इस घृणित रहस्यको खुलता देख मजहरि बड़े लज्जित हुए। लोग हँस-हँसकर मजहरिको चिढ़ाने लगे।—

बड़ी बात ! जूतोंसे मार-मार कर मुँह लाल कर दूँगा दूर हो यहाँसे !"

यह सुन रानीने एक कुलाँच मारी और बैठकके भीतर जा भजहरिका गला पकड़ लिया। बोली,—"क्यों रे गधे ! प्रेम करनेका यही नतीजा है ! मुझे हरामजादी कहता है, हरामजादा तू तेरा बाप ! सुन, अब नहीं छोड़ूँगी, न जाऊँगी; जीती हुई तो नहीं, मरनेपर भी तुझे छातीसे अलहिदा नहीं करूँगी। तुझे मेरे ही साथ जाना पड़ेगा। क्यों बेटा, पसन्द है ? सुरगमें रहना पसन्द है ? अब एक साथ ही मरेंगे। बैठकके पासमें ही भजहरिकी स्त्री, कन्या, दौहित्र और पास-पड़ोसी खड़े थे, सामने की ओर भी प्रायः बीस-पचीस आदमी थे। इस बुढ़ी वयसमें इतने लोगोंके सामने इस प्रकार लाञ्छित होकर भजहरि किंकर्त्तव्य विमूढ़से होगये। अब उन्होंने रानीके बाहुपाश से अपनेको छुड़ानेके लिये प्राणपणसे चेष्टा करना शुरू किया। लेकिन उस समय पगलीकी देहमें आश्चर्य बल था। भजहरि किसी प्रकार भी अपनी चेष्टामें सफल न हुए। वह रुक्षकेशा, अस्थिचर्म्मावशिष्टा पगली भजहरिकी छातीमें अपना मुँह छिपाये चुपचाप बैठी रही। भजहरि व्याकुल हो उठे। अब किस तरह छुटकारा मिले ? उधर उनकी स्त्री पतिकी ओरसे मुँह फेर [illegible]

न हो ?" दीक्षितने सोचा,—"कहीं नाना साहबको छुड़ा
कर यह आफ़त मेरे सिर न पड़े।" पड़ोसी लोग यह काण्ड
देखकर बड़े प्रसन्न होते थे और कहते थे,—"अच्छा हुआ
'बड़ा बदमाश है! धोबनसे दोस्ती करनेका मज़ा तो चख
था।" इत्यादि वाक्योंकी चारों ओरसे वर्षा भी होने लगी
इसी समय सजलनयन विधुभूषणने लोगोंकी भीड़ चीर
बैठकमें प्रवेश किया। नाजकी हालत देखकर उसके
मनमें बड़ी ग्लानि हुई। वह धोबनके पास जाकर बोला
"मौसी, छोड़ दो, नाजको छोड़कर हट जाओ, वर्ना बड़ी बुरी
न होगी।"

धोबीने सिर उठाया। देखा सामने विधुभूषण खड़ा है
उसने भजहरिका गला छोड़ दिया। बोली—"बबुआ, क
हो? तुम मेरे सोनेके चाँद हो। तुम्हारे हुक्मसे मैं सब
कर सकती हूँ। तुम हमारे सपूत हो। यह बूढ़ा बड़ा बेईमा
है। इसने जैसा मेरे साथ किया, वैसाही तुम्हारे साथ भ
करता है। मैं सब जानती हूँ। एक दिन था, जब यह बूढ़ा
मेरे पाँवोंको धोवन पिया करता था, मीठी-मीठी बातें क
किया करता था। आज साहूकार बनता है, दूसरोंका मा
लूटकर अमीर बनना चाहता है, मैं ... र मुक़द्दमे

...ते हुए उसने वहाँसे प्रस्थान किया। साथ में तमा...
...म होतेही तमाशायी भी अपने-अपने घरको च...
...थे।

दङ्गा-फ़िसादके दूर होते ही विधुभूषणने कहा—"अ...
...फ़त आयी है। ताऊ, मालूम होता है शशि अब नह...
...गा, आज सवेरे से उसे क़य और दस्त होगये हैं। पा...
...पैसा भी नहीं, इलाज़ कैसे होगा? मैं तो दुःख...
...में आपको ही अपना अवलम्ब मानता हूँ।"

भजहरि बोले—"क़य और दस्त होगये! लेकिन् इसमें...
...क्या करूँ? तुम्हें किस बातकी कमी है! क्या को...
लेने आये हो? मालूम होता है, धोवन की भेज क...
तरह अपमान कराना तुम्हाराही काम है।" विधुभूष...
है! उसने ज्येष्ठतात के दोनों चरण पकड़ कर कहा—
...ऊजी, आप रक्षक हैं; लड़ाई हो, झगड़ा हो, मैं तो ह...
आपको ही प्रधान अवलम्ब समझता हूँ। मेरा चा...
...तना अपमान हो जाय, पर आपका अपमान यह नेत्र कभ...
...नहीं कर सकेंगे। ऐसी अवस्थामें क्या मैं ही आपक...
...मान कराऊँगा? ऐसी बात सुनने से भी पाप लगता है।

विधुभूषण रोता रोता कहने लगा—"ताऊजी, बड़ी भारी आफत है। सिवा आपके मेरा कोई भी उपकार नहीं कर सकता। आप मेरे अपराधों को क्षमा कीजिये। मेरी रक्षा कीजिये।"

भजहरि बोला—"अबे! मैं तेरी सब चालाकियों को समझता हूँ। झूठे मुकदमे में हार जानेके भयसे ही माफी माँगने आया है। मैं इस बनावटी प्रार्थना से रीझने वाला नहीं।"

विधुभूषणने कहा,—मुकदमा मैंने नहीं किया, शुरुआत आपने ही की है। अब हार हो या जीत, आप ताऊ से दूसरे नहीं होजावेंगे। इस समय इन बातों से क्या मतलब? अब तो जिस तरह हो अपने भाईको बचाओ।"

भजहरि बोले—"हाँ जी, अब इन बातों से क्या मतलब? नालिश ठोकते वक्त ये भाव नहीं थे। अबे! तुम जैसे कुलाङ्गारों को ले जाकर नरक आबाद करने में तो यमराज भी भय खाता है।"

भीतर से भजहरि की पत्नीने पुकारा—"विधु, यहाँ आओ बेटा!"

विधुभूषण चला गया। भजहरि बोले—"देखा रम-

चन्द्रनाथ बोले—"आप ख़ूब समझे। ज़रूर यही मतलब था।"
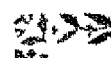
रघुनाथने कहा—"हाँ साहब, आजकल कलिकाल है न? तभी तो ऐसे ऐसे चालाक सीधेसच्चे कहाते हैं। अच्छा काका, इस समय काग़ज़-पत्रों को बन्द कर दो, आज यहीं ख़तम करो, बाक़ी काम कल किया जायगा।"

भजहरिने काग़ज़ पत्तर समेट कर एक सन्दूकचीके भीतर रख दिये। ऊपर से ताला डाल दिया गया। अब वे भीतर से विधुभूषणको भगानेके लिये चल दिये। उधर उनकी स्त्री तबतक उसे पाँच रुपया देकर कभी की विदा कर चुकी थी। इसी से भजहरिको विधुभूषण के फिर दर्शन न हुए।

बीसवाँ परिच्छेद ।

परिवर्त्तन-विलासी कालकी कैसी महीयसी शक्ति है! समयके अपरिमेय प्रतापसे संसार में कैसा अद्भुत परिवर्त्तन हुआ करता है! जो भारतवर्ष एक दिन ज्ञान-बल-सम्पन्न महापुरुषोंके मुखारविन्द से निकले सुपवित्र सामगान से मुखरित था, वह कालवश वेद-ज्ञान-शून्य धर्मतत्त्व-विवर्ज्जित मनुष्योंकी निवास-भूमि बन-गया। जो प्रदेश पहले सभ्यता, धर्म और सर्वगुण-सम्पन्न महात्माओंका लीलाक्षेत्र था, वह इस समय आलस्य-परतंत्र, कुकर्मरत, घृणित स्वभाव के पुरुषोंके अधिकार में आगया! जिस स्थान पर त्रेतायुग में भगवान्‌ने मानव-मूर्त्ति धारण कर दशरथ-गृह में रामचन्द्रादिके रूपमें अव-तार लिया था, वही पर्य्यन्त इस समय भ्रष्ट, मलिन

यण स्वार्थान्वेषी मानव कुल-कलङ्कोंका विचरण-स्थ
गया !

अयोध्या इस समय ओयूध (*Oudh*) है। जिस अशु
कारणके बलसे यशोहर जेसोर होगया, मेदिनीपुर मिडन
, वाराणसी बेनारेस, नवद्वीप नड़िया होगया, उसी अप
म-क्षमताशाली कालसूत्रसे अयोध्याने ओयुध की शोभा
न ली। एक दिन जिस स्थानपर रामचन्द्र के लघु भ्रात
टप्रेमके कल्पनातीत दृष्टान्त-स्वरूप, लक्ष्मण राज्य करते
उस समय लक्ष्मणावतीके नामसे विख्यात था।
नोंके भारतमें आनेसे वह पवित्र नाम लक्ष्मणोंके नाम
रवर्त्तित होगया। आजकल वह लुकमऊ कहलाता है
कनऊ यानी लखनौ बड़ा पुराना और समृद्धिशा
र है। लेकिन् इस समय वहाँ उसकी समृद्धिता
तक-स्वरूप एक भी चिह्न नहीं है। केवल क्षीणतो
मती नदी इस विशाल नगरके पाददेशको धोती हुई आ
लकी महिमा क्षीण स्वरसे गारही है।

लखनौ, कुछ थोड़ा ही समय बीता, स्वाधीन मु
ान शाहोंकी राजधानी थी। उनके अनेक कीर्त्ति-कलापों
रके बहुत से अंश घिरे हुए हैं। वहाँका सुरम्य नव

वा सिर किये जा रहे हैं। गोमतीके पुल पर खड़े हो
कारा नगर दीख जाता है। अजायबघर में जाकर वा
र की रक्खी पुरातत्त्व-सम्बन्धी वस्तुओंका अवलोकन करने
ातन समयका चित्र प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होने लगता है
खनऊ की पिक्चर गैलरी अपूर्व स्थान है। वहाँ
त्रोंका अवलोकन करनेसे संसारकी अनस्थिरता पर ध्या
ता है। जो शाह-शाहन्शाह सात महलोंके अन्दर रहा कर
जिनके दर्शन सामान्य पुरुषोंके लिये ही नहीं, विशे
षोंके लिये भी दुर्लभ थे, आज उनकी प्रतिमूर्त्तियाँ
य दर्शकोंसे घिरी रहती हैं। शाह बाग में जानेसे माल
ता है कि, यहाँ एक नहीं, अनेकों तहखाने ऐसे हैं, जिन
ुतसे आदमी सानन्द रहकर अपनी रक्षा कर सकते हैं
जकल वहाँ पुरानी तोपें और थोड़े से गोले इधर-उध
हैं। हमने उपरोक्त स्थानोंका अवलोकन विगत पद्म
न्दी-साहित्य सम्मेलन के अवसर पर किया था। आ
कुछ भी वहाँ दर्शनीय रूपसे रक्खा हुआ है, किसी सम
प्रत्यक्ष था। अस्तु।

लखनऊ रेलवे स्टेशन से कुछ दूर, उत्तरकी तरफ, ए
व है। गाँव में बहुतसे आदमी नहीं रहते, केव

ज कई रोज़ से एक बंगाली युवा रहता है
न लोगोंने लखनऊ शहरको अच्छी तरह देखा है
जानते होंगे कि वहाँ के मकानों की छतें और स्थानोंके
रोंसे विचित्र हैं। साधारणतः, छतें कड़ी औ
ह्तीओ बनायी जाती है; लेकिन यहाँ की छत
ाल तख़्तों की हो हैं। इस लिये उनपर चलने-फिरने
ख़ूब हिलती है। बंगाली युवा जिस मकान में रहता थ
की भी छत उसी तरह की थी। मकान भी कुछ टूट
ा हो सा था।

युवा हर वक्त घरके किवाड़ बन्द किये भीतर पड़ा रहत
। साथ में एक आदमी भी नहीं था। किसीने बाह
कलते भी उसे नहीं देखा। वह किस लिये यहाँ आया है
र क्यों इस तरह रहता है—यह भी किसी को नहीं मालू
। लेकिन और कोई जाने या न जाने, हमें जान लेे
ज़री है। हम उसे अच्छी तरह जानते है। पाठक भी पहचा
होंगे—युवा हमारे पूर्वपरिचित श्रीज्ञानेन्द्रनाथ हैं।

दोपहरके समय ज्ञानेन्द्रनाथ उसी जीर्ण मकान के ए
न्धकारमय घरमें एक चटाई पर बैठे हुए चिन्ता कर र
उनका अब पहिलासा रूप नहीं है, नेत्रोंको व

के बाल रूखे हैं। हजामत बे-तरह बढ़ रही है। दे
-वृक्ष सूख गयी है। आजकल वे जीवन धारण के लि
ल एक मुट्ठी अन्न खा लेते हैं। कपड़े बड़े मैले हो र
सोने के लिये शय्या नहीं, ओढ़ने-बिछाने और पहनने
के पास एक कपड़ा भी नहीं। आनन्द सोच रहे है
मेरे पाप धुल गये? क्या हृदय निर्मल होगया? नहीं
म्भव है। यदि पवित्र सलिला जाह्नवी की सारी जल मेरे हृ
यको धोया करे, यदि अगाध जलवाला सिन्धु भी उम
मेरे पापको धोता रहे, तोभी मेरे अपराध नष्ट हो
म्भव हैं, तोभी मेरे हृदय पर की कलङ्क-कालिमा छूट
म्भव है, तोभी इस जीवनमें उस देवीके सामने ख
नेका मेरा तनिक भी अधिकार नहीं। क्यों भगवन्
मने मेरे सुख-पूर्ण राज्यको क्यों नष्ट कर दिया
 नारायण! किस अपराधसे मुझे स्वर्ग से
या। नवीना,—नवीनाको मैं अब नहीं चाहता। छिः
रके पापी नामके एक वार लेनेमें भी पातक है। उसे या
रके लज्जा, घृणा और क्षोभसे आत्महत्या कर डालने की इच्
ती है। मैं कैसा मूर्ख हूँ। मुझे उसी समय आत
या कर डालना उचित था। लेकिन असमर्थ हूँ,

अत्यन्त कातर रोग-जर्ज्जरित व्यक्तिकी भाँति ज्ञानेन्
थ उसी चटाई पर लेट गये। बोले,—"हाय! अब कैसे दि
पाऊँ? जिसको बिना देखे तत्काल शरीरमें असह्य वेदन
ा हो जाती थी, आज उसके दर्शनोंसे एक दम वञ्चित हूँ
वन्! साहस दो, एक बार दूर पर किसी की आड़में खड़
कर ही दर्शन कर लूँ। अनुमति दो प्रभो, अब अधि
हीं सहा जाता।"

यह कहतेही ज्ञानेन्द्रनाथके नेत्रोंसे पानी भर आया,
लकों की भाँति रोने लगे। बहुत देर रोनेके बाद उ
र होश हुआ। फिर कहने लगे—"लावण्य देवी है, व
े अवश्य क्षमा कर देगी, मेरा अपराध क्षमाके योग
होने पर भी, वह करुणामयी उसे अवश्य क्षमा करेगी
किन् मैं उसे किस सूरत से ग्रहण करूँगा? इतने अप
ोंके बाद, उस क्षमाके आवरणमें अतीत की स्मृति कि
ह छिप सकेगी? अब क्या होगा, क्या इसी तरह रहूँ
अज्ञातवासमें, इस अपरिचित देशमें, बिना किसीको सूर
लाये धीरे-धीरे मृत्यु का आलिङ्गन करूँ? तो क
ानेसे पहले एक बारके लिये भी लावण्यकी सूरत देखनेक
हीं मिलेगी?"

ई सूरत भी नहीं। जिस स्थान पर लावण्य रहती है, क
पुण्यतीर्थ पर एक बार जाऊँ? नहीं, लज्जासे रास्ते
मर जाऊँगा। छि:! ऐसी शंका करना बेकार है। य
जाऊँ। दर्शन न होनेका सबब ही क्या?"
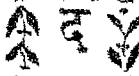
सहसा दर्वाज़े पर खड़खड़ाहटकी आवाज़ हुई। ज्ञाने
क उठे। इस अपरिचित देशमें ऐसा कौन है, जो उन
लना चाहता है? ज्ञानेन्द्र चुपचाप दुबारा शब्द होने
ट जोहने लगे। फिर खड़-खड़ हुआ। ज्ञानेन्द्र उठ ख
!— समझा, दर्वाज़ा खोल कर एकबार देख लेनेमें क
ई है? इतनेमें फिर कुण्डी बजी। धीरे-धीरे काँप
ड़ोंसे अग्रसरहो ज्ञानेन्द्रनाथने दर्वाज़ा खोल दिया। देख
की दूसरी बगलमें मोटे कपड़े से तमाम शरीर ढके ए
खड़ी हुई है। स्त्रीके पासही एक और प्रौढ़ा स्त्री ख
दोनों ही बङ्गालिन हैं। ज्ञानेन्द्रनाथको मालूम हु
, पहली घूँघटवाली स्त्री का सारा शरीर काँप रहा
सरी औरत उसे पकड़े हुए है। समझा—ये दोनों कि
पत्तिमें फँसी हुई हैं, और यहाँ पर कोई स्वजातीय व्य
ता है, यह जानकर किसी प्रकारकी सहायताके लिये
पास आयी हैं। ज्ञानेन्द्रनाथ दर्वाज़ेसे थोड़ा हटकर ख

आँगनमें पहुँचकर घूँघटवाली कम्पितकाय स्त्रीने मुँह पर पड़ा हुआ पर्दा उघाड़ दिया। उसका सारा शरीर हवासे हिली बेलकी भाँति काँप रहा था, आँखोंमें आंसू भरे हुए थे। ज्ञानेन्द्रनाथ एकदम चौंक उठे। उनका हृदय एक साथ सौ छुरियाँ भोंके जानेकी भाँति मर्म्माहत होगया। क्षण भरमेंही कालानलने उसे जलाकर भस्मकर दिया। कातर और अवरोधे हुए स्वरसे उन्होंने कहा—"नवीना, यहाँ कैसे आयी?"

ज्ञानेन्द्रनाथ का संज्ञाशून्य कलेवर ज़मीन पर गिर पड़ा।
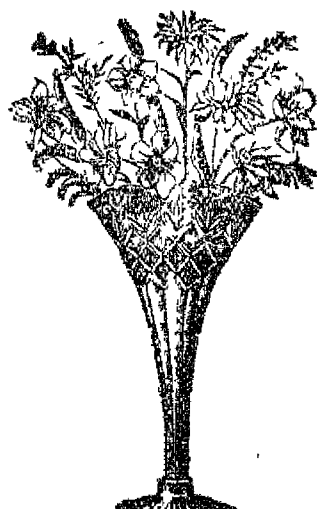
इक्कीसवाँ परिच्छेद।

दस दिन बीत गये। इस संसारमें धीरे-धीरे बहुत दिन बीत गये और बीतते जाते हैं, किन्तु उनका हिसाब कोई भी याद नहीं रखता। भावी का गर्भ विस्तृत है। अनेकों सुख और दुःखोंका सामना करना पड़ेगा—यह सोचकर मनुष्य सामनेकी ओर ही सतृष्णा नेत्रों से देखता है। लेकिन यह बहुत बुरी बात है। अतीतके प्रति इस प्रकार की उदासीनताही मनुष्यको अधःपतन के गर्तमें ढकेलती है। बीती हुई बातोंकी आलोचना करनेसे मनुष्य बहुत कुछ सीख सकता है। किये हुए सुकर्मोंका स्मरण रखनेसे, हृदयमें आत्मिक बल का सञ्चार होता है; अतीतके दुष्कर्मोंको याद करनेसे भविष्यमें सावधान रहनेकी इच्छा होती है। अतीतकाल शिक्षाका भण्डार है। इतिहास इस बातकी पुष्टि करता है। वह इस बातका शिक्षक है।

किसी विशेष शासनकर्त्ताके जीवनका अवलम्बन करना पड़ता है। उस समयमें देश विशेषकी उन्नति और अवनति की कहानीका प्रदर्शन करना ही इतिहास का उद्देश्य है। इतिहास जाति विशेषके उत्थान-पतन, अवनति और अभ्युदय की बातकी घोषणा करता है। जाति समूह का नाम है। और समूह बनता है व्यक्तिसे। प्रत्येक व्यक्ति अर्थात् मनुष्य का अतीतकाल ही जीवन कहाता है। अत: उसी अतीत इतिहासकी आलोचना करनी चाहिये। वह मनुष्य का लक्ष्य स्थिर कर सकता है, उसके केन्द्र-पतित—पथच्युतजीवनको स्थिर रख सकता है, इसीसे इतिहास संसारका प्राण माना गया है और इसीलिये अतीत की आलोचना आवश्यक है।

ज्ञानेन्द्रनाथ सन्मार्गसे भ्रष्ट हो गये। जिस मनुष्य चरित्रके बलसे वे एक उज्ज्वल नक्षत्र की भाँति विश्वके आकाशमें अपनी आभा चमकाया करते थे, आज वह पाप-मेघोंसे घिर गया। इस समय वे अतीत की भयङ्करी स्मृति को हृदयमें पोषित कर, भविष्यत्के लिये सावधान रहने का साधन कर रहे हैं, और उसी सावधानताके अनुरोधसे उन्होंने अज्ञातवास लिया था—प्राणमयी लावण्यमयीको दुःख देकर देशत्यागी हुए —प्रभूत ऐश्वर्य की कुछ भी परवा न कर दीन-दरिद्रियों की भाँति ...

। बैठनेका अधिकारी बनूँगा ; लेकिन सभी व्यथा हुआ
ो मालूम होता है, कि मनुष्य जो कुछ सोचता है, व
समय पूरा नहीं होता। प्रमाण-स्वरूप काल-साँपिन
ना उनकी शान्ति भङ्ग करनेके लिये—उनकी कठोरता
स करनेके लिये—न मालूम कहाँसे आ धमकी।
ज्ञानेन्द्रनाथने नवोनासे कुछ भी नहीं कहा था। वे अवि
की सावधानताके अनुरोधसे ही उससे दूर भागे थे। लेकि
नाने आश्चर्यजनक कौशलोंके द्वारा उनके निर्जन निवास
लगा लिया। केवल पताही नहीं लगा लिया, वहाँ आक
जूद भी होगयी।
जिस दारुण दारिद्र्यके भारसे ज्ञानेन्द्रनाथ पीड़ित होक
तान्त रोगोंकी भाँति समय बिताया करते थे, वह अब नह
। उसके हाथसे अब उन्हें निष्कृति मिल गयी है। अ
ते कपड़े नहीं हैं; उनका शरीर इस समय झकझका
हेद रहित वस्त्रों से ढका हुआ है ; टूटी चटाई के स्थान
जकल वहाँ साफ़-सुथरी शय्या बिछी हुई दीख पड़ती है
रों ओर पीतल कांसीके बर्तन रक्खे हुए हैं। पहले उन
ह अरधेट अन्न न मिलनेके कारण जीर्ण-शीर्ण होगया था, अ
हमें कान्ति है। सारांश यह कि—हमारे पाठकोंने ज्ञानेन

ता है और इस समय भी वे श्रीभगवान् से हृदय व
क्तिके लिये प्रार्थना किया करते हैं।

धनहीन ज्ञानेन्द्रनाथके प्रयोजनीय पदार्थ नवीनाने एव
न किये हैं। दुष्टा नवीना प्रयागसे भागनेके समय लावण्य
ससे बहुतसा रुपया और नोट चुरा लायी थी। उपरो
ाह उन्हींकी सहायतासे हुआ है।

साँझ हो चुकी थी। ज्ञानेन्द्रनाथके कमरेमें स्वच्छ
ाश होरहा था। ज्ञानेन्द्रनाथ अपनी शय्या पर पड़े हु
ा मुँह किये कुछ सोच रहे थे। उन्होंने सोचा—"मालू
ना है. इस जीवनमें शायद लावण्यके दर्शन अब नहीं होंगे
र भी तो ठीक है। ज्ञानेन्द्र अब इस पापी मुँह और घृणि
ूषित, इन्द्रियपरायण जीवनको किस तरह उसके साम
ेगा? यह माना कि, वह मुझे देखलेगी क्षमा क
ी। लेकिन मैं किस तरह उससे पहले की भाँति प्रे
यहार कर सकूँगा?" इस प्रकार की चिन्ताएँ वे आज
ों कर रहे हैं। मालूम होता है, आज तीन महीनेसे उन
हृदयमें उठ रही हैं। पर बात कुछ भी स्थिर न हुई।

लेकिन अब नहीं सहा जाता। इस पापपूर्ण चिन्ता
रन्तर गुर्क रह; ज़ियादा समय बिताना असाध्य है। जिस

र रहे थे, उस समय उनके कमरेमें एक शुभ्रवसना सुन्दरी
वनीने प्रवेश किया। यवनी और कोई नहीं, हमारी पूर्व-
रिचिता नवीना है। नवीनाने कुछ देर खड़ी रह उस शय्या-
शायी शोभामय पुरुषको देखा। उसके नेत्र उस समय लालसा-
लसे प्रदीप्त होरहे थे। उसके मुख पर भोगवासनाओंकी
रेखाएँ प्रस्फुटित होरही थीं। उसने शय्या पर बैठकर धीरे-
धीरे पूछा—"आनेन्द्र, क्या सोरहे हो?"

आनेन्द्रनाथ चौंक उठे। व्यस्तताके साथ बोले—"नहीं,
यह-समय सोनेका नहीं। क्या तुम काम-धामसे निवट
गईं?"

नवीनाने कहा—"हाँ! कुछ खाओगे?"

आनेन्द्र बोले—"नहीं, भूख नहीं है।"

नवीनाने कहा—"तुम्हें किसी समय भी भूख लगती है
ज़बरदस्ती चाहे कोई खिलादे, लेकिन तुम अपनी इच्छासे
कभी खातेही नहीं।

आनेन्द्र बोले—"बात ठीक है, आजकल किसी वक्त भी
भूख नहीं लगती। लेकिन तुम क्यों मेरे लिये इतने कष्ट
उठाया करती हो? मेरा जीवन शान्ति-शून्य होगया है
यदि मुझसे तुम किसी प्रकारकी प्रत्याशा रखती हो, तो याद

कर दिया और केवल यही नहीं, अपना इहकाल और परकाल भी नष्ट कर दिया। अब ऐसी बात क्यों कहते हो? अब तो तुम्हीं मेरे स्वर्ग हो—तुम्हीं सर्वस्व हो?"

ज्ञानेन्द्र बोले—"नवीना मेरी बातही कठोर नहीं, मैं भी कुछ दिनोंमे कठोर बन गया हूँ। तुमने कहा कि, मेरे लिये तुमने अपना धर्म और समाज, इहकाल और परकाल नष्ट कर दिया। यह ठीक है, लेकिन यह बात क्या तुम अपने सच्चे हृदय से कह रही हो? यदि सच्चे हृदयसे कह रही हो, तो इस समय अपनेको सचेत क्यों नहीं करतीं? धर्म और समाज नष्ट होगया, किन्तु ज्ञान और बुद्धि तो है? ईश्वर की ओर ख़याल रखती हुई ज़रा बताओ तो, क्या मैंने किसी प्रकार या कभी तुमसे ऐसा करनेके लिये कहा था? तुम होशियार हो, फिर असली बात क्यों छिपाती हो?"

नवीना बहुत देर तक चुप रही। ज्ञानेन्द्रके वाक्य उसके हृदयमें शूलकी भाँति चुभे। बड़े निठुर वाक्य हैं, प्रेमके प्रभावके की बातें है। उस हिसाबसे समझाने पर नवीना साफ़ समझ गयी कि, उपरोक्त बातोंसे तो मैं ही देनदार ठहरती हूँ? लेकिन असली बात छिपाकर उसने कहा—ज्ञानेन्द्र, पहले साक्षात् वाले दिनसे ही तुम मेरे ऊपर आशा-

ज्ञानेन्द्र बोले—"छि:! छि:! झूठी बातें किसी तरह भी अच्छी नहीं लगतीं। यह ठीक है कि, मैंने बहुतसे विषयोंमें तुम्हारी सहायताकी, लेकिन उसके द्वारा यह न समझना चाहिये कि, उनका सूत्रपात किसी बुरे अभिप्रायसे हुआ था, वरन् मैंने उसे अपना कर्त्तव्य समझ कर किया था। क्या विपद्‌की रक्षा करना पाप समझा जाता है? तुम विधवा ब्राह्मण-कन्या हो; तीर्थ-दर्शन, देव-सेवा तुम्हारा कर्त्तव्य है; यही समझ कर और तुम्हारी प्रार्थनानुसार मैंने तीर्थ-दर्शन कराया। लेकिन इन बातोंका क्या यह अर्थ होता है कि, ये सब काम किसी बुरे मतलबसे किये गये? बिना कारण दोष मत दो।"

नवीना फिर चुप होगई। उसने फिर सोचा—बात ठीक है, तथापि दृढ़ताके साथ कहा—"अच्छा, तो उस दिन ऐसा क्यों हुआ?"

ज्ञानेन्द्रनाथ बोले—"तो क्या इस बातका उत्तर मुझीको देना होगा? तुम स्वयं अपने से पूछलो। उत्तर ठीक मिल जायगा। सोच देखो, तुम्हींने मुझे पापके फन्देमें फांसनेके लिये अनेक कौशल किये। पर मैं अभागा उन्हें देखकर भी नहीं समझा। और न समझने का एक कारण था, मेरे घरमें

मैं देवी

ी सुपथ पर नहीं आ सकता। उस समय में भी अन्
ाया, पूर्वजन्मके पाप उदय होगये, इससे तुम्हारे रूप-सागर
 गया। अब ज्यों-त्यों प्राण बचे हैं। ज्ञान और विवेक
र दिया है। इतने पर भी यदि अपने पापोंका प्रायश्चि
करूँ, तो मुझमें और विषैले कीड़ेमें कुछ भी फ़र्क नहीं
किन मेरे अधःपातमें तुम दोषी नहीं, दोषी मैंही हूँ
 चरित्र की अपूर्णता—मेरे हृदयकी दुर्बलताके कारण
हारा भी पतन हुआ। इसके लिये मैं ईश्वरके सामने
ाजके सामने—और कहते हुए जीभ काँपती है—उ
ीके आगे भी चिरअपराधी रहूँगा।"

इन सब बातोंसे नवीना का हृदय फटने लगा। उस
झा,—"अब भी ज्ञानेन्द्रनाथ लावण्यमयीके ही प्रेममें डू
 हैं। इसीसे इतनी कठोरता है।" बोली,—"खैर, जो हो
ना था सो हो चुका। इस समय तुम्हीं मेरे अवलम्ब हो—
हीं मेरे सर्वस्व हो। बताओ, मैं किस तरह तुम्हारी प्रेम
ी बन सकती हूँ? किस तरह और क्या-क्या करनेसे तु
वण्यमयीको भूलकर मेरी सेवासे तृप्त हो सकते हो?"

ज्ञानेन्द्रनाथ चौंक उठे। मानो किसी भयङ्कर साँप
ट खाया। वे पलँगसे उठकर बोले—"नवीना, जीवन मैं

हूँ, अधम हूँ, देशत्यागी और भिक्षुक हूँ; लेकिन अभीतक उसी देवीका सेवक हूँ। जब तक जीऊँगा, मेरा हृदय कभी देवीकी सेवासे विरत नहीं होगा।"

बात समाप्त करते ही ज्ञानेन्द्रनाथ बाहर चले आये। नवीना वहीं बैठी-बैठी आँसू बहाने लगी।

बाईसवाँ परिच्छेद ।

शा नेन्द्र नाथके बाहरसे दुरवस्था-हीन होजाने पर भी हृदय में उनको दुरवस्था कम न होकर क्रमशः बढ़ रही है। उन्होंने हठात् मोहके प्राबल्य में ने चिरसंचित ज्ञान और शिक्षाके शासनको पददलित या था। किन्तु साथ ही साथ उनकी मोहान्धकारमें ढ र्त्तव्य-बुद्धि और धर्म्मानुराग भी प्रदीप्त होगया—वे उसी सम अतीत दुष्कर्मोंके द्वारा तीव्र तुषानल से दग्ध होने लगे नुताप से उनके आत्माको दुःख होने लगा। पापके अ मदिरा-सेवनसे उत्पन्न हुई प्रतिक्रियासे उनका हृद थिल होगया। चुपचाप, निर्ज्जनमें हृदयको प्रकृतिस्थ कर लिये, फिरसे कर्त्तव्यकी अवधारणाके लिये, वे किसीसे कु कहकर सुदूर देशमें भाग आये थे। किन्तु छुटकारा कहीं भी नहीं ; इस समय भी पापिनी नवीना अकल्पनीय उपायोंसे प

ज्ञानेन्द्रनाथने समझा था,—"इस व्यापारमें यद्यपि नवीना ने अनेक प्रकारके उपायोंसे उनका मन आकर्षण करनेकी चेष्टा की और अनेक कौशलसे उन्हें फन्देमें फाँसनेका आयोजन किया था, लेकिन अपराध उनका ही है। लोग भलेही नवीनाको दोषी ठहरावें, पर उनकी समझमें वह उतनी दूषिता नहीं, दोषी वही हैं। कारण—कि, वह स्त्री है। स्त्रियोंमें इतनी ताकत नहीं कि, किसी कुप्रवृत्तिके प्रबल झोंकाने पर उसका मूलोच्छेद कर सकें। फिर नवीना तो अशिक्षिता है, ज्ञानेन्द्रको अपनी शिक्षाका अभिमान है। नवीना कु-संसर्गिणी है और ज्ञानेन्द्रनाथ सदासे समाज-शासक और कुप्रथाओंके विरोधी रहे हैं। नवीना स्वामिहीना है, पर ज्ञानेन्द्र के तो रूप और गुणोंमें अतुलनीय स्त्री है। नवीनाने भोग नहीं भोगे थे, पर ज्ञानेन्द्रने अपनी प्रिय पत्नी लावण्यके साथ स्वर्गीय सुखोंका आनन्द लूटा था। येही तर्कनाएँ ऐसी थीं, जिनके द्वारा ज्ञानेन्द्रको यह धारणा होगयी थी—एक दफा ईश्वरके न्यायालयमें नवीना बेकसूर छूट सकती है, पर ज्ञानेन्द्र का तो किसी प्रकार भी छुटकारा नहीं। उन्हें आजकल देह, मन और विवेक सभी पर विलक्षण घृणा है। तो क्या इस पापमय जीवनके गुरुतर भारको लिये हुए उन्हें अपने जीव-नका अवशिष्ट अंश [illegible]

तर्कका उन्होंने स्वयं अपने मनमें इस प्रकार उत्तर दे लिया था कि, उसने अपनी स्वार्थसिद्धिके लिये इच्छानुसार चेष्टा की थी, जो साधारण बात है, पर उस चेष्टामें वे क्यों शिकार बन गये ? वे तो हर समय चारों ओरसे चौकन्ने रहा करते थे। उस रूपकी मदिरा को उन्होंने क्यों पिया ? दोष उन्हींका है।

आज उनका हृदय अन्यान्य दिनोंकी अपेक्षा अधिक उद्वेलित था। आज ज्ञानेन्द्रनाथ बहुत दिनोंमें अपने उस कमरेसे बाहर हुए। समय दिनके दस बजेका था। रास्तेमें मिलनेवाले प्रायः सभी लोग अपरिचित थे, लेकिन ज्ञानेन्द्रनाथ को उस समय यह मालूम हो रहा था कि, वे मेरे पूर्वपरिचित हैं, इन सभीने मुझे पहिचान लिया है, और इन्हें मेरे दुष्कर्मोंकी बात भी ज्ञात हो गयी है। ज्ञात न होनेका कोई कारण नहीं, क्योंकि कलंक-गाथा तो मेरे मस्तक पर स्पष्ट अक्षरोंमें लिखी हुई है, उसे सभी कोई पढ़ सकते हैं। रास्तेके आदमी उन्हें बड़े गौरसे देखते हैं। लेकिन देखनेके उद्देश और देखनेके मतलब समझनेमें दृश्य और द्रष्टा दोनोंको भिन्न [illegible]ावापन्न हैं। देखनेवालोंके लिये तो विदेशी, रूपवान, शान्त [और] निर्लिप्त ज्ञानेन्द्र अपरिचित हैं; अतः अपरिचितके लिये [अ]साधारणका [illegible]

नेके लिये ये लोग मेरे प्रति घृणा दिखाते हुए, सीधा रास्
कर, कुछ दूर बचकर जा रहे हैं। यह देखकर वह कु
गये। उस समय वे छिपनेके लिये, किसी स्थानमें अप
ो मुख लोक-लोचनसे अदृश्य करनेके लिये, व्याकुल
। पासही उन्हें दिल-खुश बाग़ दिखाई दिया। उसे देख
ी ज्ञानेन्द्रनाथ बिना कुछ सोचे-समझे अन्दर घुस गये।
दिलखुश बाग़ वास्तवमें दिलको खुश करनेवाला था
परिपाटीसे लगे पुष्प-वृक्षोंसे पूर्ण इस प्रकारके बाग़ सर्वत्र नह
पड़ते। छोटी-छोटी लताओंके कुञ्जोंमें विविध वर्ण
इस तरह लगे हुए थे, कि देखनेवालेका मन एकद
व हो जाता था। दूरसे मालूम होता था, मानो किसी
बड़ा सुन्दर गलीचा बिछा रक्खा है। ज़मीनपर हरी
ी दूब लग रही थी। इन सब प्राकृतिक पदार्थोंके सा
ुष्यके हृदयमें कवित्व और शिल्प के संमिश्रणसे एक स्वर्गी
भाकी उत्पत्ति होती है, पर उन्हें देखकर ज्ञानेन्द्रके मन
निक भी स्फूर्त्ति नहीं हुई। कारण कि, वहाँ भी लो
और वे उनकी ओर उसी प्रकार देखने लगे कि, जि
ार रास्तेमें। अहो! अभागोंके लिये कहीं भी शान्ति
हीं?

अपना मुँह ढाँक कर कहीं जावेंगे। धीरे-धीरे ज्ञानेन्द्रना
गके एक जनशून्य स्थान पर पहुँचे। एक गहरा सौ
र वे ज़मीन पर बैठ गये। उन्होंने सोचा,—"अब यदि व
ति निवास-स्थानपर न लौटकर कहीं अन्यत्र चले जाँय,
दोष है?" दोष बहुतसे हैं, क्योंकि नवीनाने सैकड़ों ब
ी कहा है कि, वह उन्होंके लिये सर्वत्यागिनी हुई है
उनकेही चरणोंमें आत्म निवेदन कर आश्रित की भाँ
णागता हुई है। यह ठीक है कि, उसके प्रेमसे ज्ञाने
ो नहीं, वे उसे किसी तरह भी नहीं चाहते, तोभी व
ींके लिये उन्मादिनी है। उसे इस प्रकार निःसहा
ड़ कर कहीं जानेसे अधर्मके ऊपर फिर अधर्म होगा
ः बिना उसे घर भेजे, बिना किसी ठिकानेसे लगा
कृति नहीं।

बहुत देर बीत गयी। प्रायः साँझ होनेमें कुछही दे
। ज्ञानेन्द्रनाथ वहाँ बैठे-बैठे उकता गये। सहसा उठे औ
वा मुँह किये हुए अस्थिर स्थान पर चल दिये। चलते
ते एक बार ऊपर सिर उठाया। कुछ दूर एक बङ्गाल
ता दीख पड़ा। इस प्रवासमें आजतक किसी बङ्गाली
थ उनका साक्षात नहीं हुआ था। स्वदेशीय आदमी दे

हीं मालूम हो सका। उधर जानेकी उन्हें इच्छा भी नहीं
। वे दूसरी ओरको मुँह करके जल्दी-जल्दी जाने लगे
किन्तु यह क्या! पीछे पीछे कौन आ रहा है? ज्ञानेन्द्र
ना साहस भी नहीं हुआ कि, लौटकर आगन्तुक को देख
लें, उलटे वे और भी तेजीसे चलने लगे।

वास्तवमें एक आदमी उनका पीछा कर रहा था। उस
कड़े और उसके चलनेका ढँग बङ्गालियोंके जैसा था
ानेन्द्रनाथको तेजीसे चलते देख आगन्तुक उनके पीछे दौड़
ा। पास आकर बोला—"दादा, ज्ञानेन्द्र दादा!"

कण्ठस्वर पहचानकर ज्ञानेन्द्रनाथ पहचान गये कि
गन्तुक और कोई नहीं विधुभूषण है। अब क्या था
ानेन्द्रनाथ एकदम संज्ञा-शून्य हो गये, झिझके और लज्जा
भ घृणासे उनका सिर नीचा होगया। उस समय उन
मने राधवपुरका जीवन्त चित्र खिंच गया। लावण्य खड़ी
ाके दोनों नेत्रोंमें अविरल अश्रु हैं। प्रणाम करती हुई व
हती है—"नाथ, अब दासीके अपराध क्षमा करो।" ऐ
न होते ही ज्ञानेन्द्रनाथ सहसा चीख मार उठे।

पीछे दौड़नेवाला वास्तवमें हमारा पूर्वपरिचित वि
षण था। विधुभूषण ने और समीप आकर कहा,—"दाद

ज्ञानेन्द्रनाथ चुप हैं। विधुभूषण फिर बोला,—क्यों इतने
नरता है? आप इतने दुर्बल क्यों हैं? क्या आपक
ई पीड़ा होगयी है।"

ज्ञानेन्द्रनाथ अब भी निःशब्द हैं। विधुभूषणने उनके पै
ड़ लिये। चरणोंकी धूलि मस्तक पर चढ़ायी। अब उ
ह ज्ञान हुआ। विधुभूषणको पैर पकड़ते देख वे पी
गये। सोचा,—इस पापमग्न व्यक्तिके स्पर्शसे विधुभूषणके
ति पवित्र पुरुष पतित हो जायगा।

विधुभूषणने फिर कहा—"दादा, आप बोलते क्यों नहीं
ज बड़े भाग्यसे तो आपके दर्शन हुए हैं, फिर भी आप इ
मसे कुछ नहीं कहते। बोलो, भैय्या बोलो। दुःखके मा
ा हृदय फटा जाता है।"

अबकी बार ज्ञानेन्द्रनाथ कुछ बोले। लेकिन यह कैस
र है! ऐसा स्वर आसन्नमृत्यु पुरुषका हुआ करता है
ा—"विधु, मैं बीमार नहीं हूँ। तुम मेरे पास क्यों च
ये। मुझे अब कुछ नहीं कहना है।"

विधुभूषण बोला—"मैं तो प्रत्यक्ष देखता हूँ कि, आ
ानक रूपसे अस्वस्थ हैं। आपका कण्ठ-स्वर अत्यन्त कात
पास क्यों आये—यह आप क्या कह रहे हैं? हम स

थ होगयी हूँ। केवल एकबार आपके दर्शनोंकी आशासे भी तक जीवित हूँ।

यह सुनकर ज्ञानेन्द्रनाथ बेहोश होकर आँधीसे टूटे वृक्ष ी तरह ज़मीनपर गिर पड़े। विधुभूषणने तत्काल उन्हें पकड़कर सम्हाल लिया। उस समय ज्ञानेन्द्रनाथको मालूम था—मानो विषादयुक्ता लावण्य उनके सामने खड़ी हुई है— ामने ही नहीं, जहाँ दृष्टि डालो वहाँ लावण्य खड़ी है, न्द्र-मण्डलमें, पुष्प-वृक्षोंमें और पेड़ोंकी फुनगियोंपर भी ला- ण्य खड़ी है। बहुत देर तक ज्ञानेन्द्रनाथको ऐसा ही दीख हा। इसके बाद अविरल अश्रुधारा नेत्रोंसे निकलने लगी हुत देरतक रोये। नेत्रोंके जलसे विधुभूषणकी समस्त गोद ीग गयी। विधुभूषण चुप है। बहुत देर बाद ज्ञानेन्द्रनाथने कारा—"विधुभूषण!"

विधु भूषण बोला—"भैय्या!"

ज्ञानेन्द्रनाथने पूछा—"तुम क्यों आये हो?"

विधुभूषण बोला—"इस प्रश्नका कुछ जवाब नहीं। जि ं देवता समझता हूँ, उसे मैंने क्यों ढूँढ़ा, इसका उत्तर—व्यर्थ एकदम व्यर्थ है।"

ज्ञानेन्द्रनाथने कहा—"यहाँ तुम किस जगह ठहरे हो'

तेईसवाँ परिच्छेद।

दो वानी अदालतमें विधुभूषण और भजहरिमें ज
मुक़द्दमा चल रहा था, उसमें दोनो पक्षोंकी गवा
जबानबन्दी आदि सब कुछ हो चुकी, केव
ल देना बाक़ी है। लेकिन् विधुभूषण को हुक्म की कुछ
.वा नहीं, उसके प्राण ज्ञानेन्द्र की ख़बर-खोज लेनेके लि
त्यन्त व्याकुल हैं। वह अवश्यमेव उनका पता लगावेगा
ह ठीक है कि, उसके पास धन नहीं, लोग नहीं; प
ात्मिक बल तो है। रामलोचन, लावण्यमयी एवं अन्या
भी आदमी घर आगये, पर ज्ञानेन्द्र कहाँ है? यह प्र
ठते ही विधुभूषण समस्त स्वार्थ-चिन्ताओंको जलाञ्जलि
रके निकल पड़ा। उसके जानेकी ख़बर गाँव भर में केव
' आदमी जानते थे, रामलोचन और लावण्यमयी। क्यों
स्ताव का अनुमोदन करने वाले केवल येही दो जने थे।

ज्ञानेन्द्र की अन्वेषण-यात्रामें विधुभूषणने किन उपा

विधूभूषणके चले जानेपर मुकद्दमे का हुक्म सुनाया गया
म यह था कि, भजहरि की अविकृत सम्पत्ति का आध
ग विधुभूषण और उसके भाइयोंको मिले। अलावा इसके
हरिने जो अपने जमाखर्च का हिसाब पेश किया है, व
र्था मिथ्या है। इस हिसाबका झूठा अंश निकाल दे
मालूम होता है, भजहरिके पास खर्च हुई सम्पत्ति
से भी अभी दो हज़ार रुपये मौजूद हैं। उनमें से ए
ार रुपयेके लिये विधुभूषण भजहरिके खिलाफ डिग्
ारी करावे एवं इस मुकदमे में बहुतसे आदमियोंने झूठ
ाहियाँ दी है. उनमें भी भजहरि और रघुनाथ चक्रवर्तीक
ानबन्दी तो महाझूठी है। इन दोनों को वादी इच्छा
ने पर फौजदारी सिपुर्द करा सकता है।

ऐसा भयंकर हुक्म मिलने पर भजहरिकी बुरी हालत
गयी। अब कोई उपाय नहीं। वकील-मुख्तारों
ने कह दिया कि, अपील दायर करने से भी कुछ फ
होगा। ज़मीन, बाग, मकान, दूकान, बर्त्तन-भाँड़ा औ
पया-पैसा अब सभी कुछ बटेगा। फिर भी 'मरे के ऊप
लाठी' छिपाकर रक्खे हुए दो हजार में भी आधा-साझा
र विधुभूषणने इसको ढूंढ़की निकाली। हा भगवान

र अग्निहोत्र सभी कुछ झूठे हैं।' ठीक है भजहरि जै
क है। पाखण्डी लोग स्वार्थसिद्धि में आघात पड़ने प
हो विश्वास करने लगते हैं।

वास्तव में भजहरिको खिलाफ हुक्म निकलनेसे बड़ा शोक
। इतना शोक किसी पुत्रशोकातुर को भी नहीं होता
मुँह औंधा किये ज़मीन पर ही पड़े रहते हैं। किन्
की धर्मपत्नीने इस व्यापारमें बड़ी धीरता का परिच
या। वह बोली—"तुम क्यों इतने दुःखित होते हो ? ज
वत था, वही तो हुआ।"

यह सुन कर भजहरि आगबबूला हो गये। बोले—"राँड
ी जले पर नमक छिड़कती है। भाग यहाँसे, नहीं त
र घूँसोंसे सिर तोड़ दूँगा। आई है विधुभूषणकी वकी
कर।" सुनतेही बेचारी सन्न हो कर चली गयी
ाय बीतने लगा। पाँच दिन बाद भजहरि होशमें आये
शमें आते ही उन्हें फिर दूरकी सूझने लगी। सोचा-
डिग्री हो या न हो, अब विधुभूषण को धोखा देना चाहिये
चार महीने पहले की तारीख डालकर सारी सम्पत्ति गिरव
दूँ। फिर डिग्री होजाने पर भी दखल न हो सकेगा

नहीं बताई। ताराचन्द बोले—"डिग्री जारी होने की
तो तो कोई बात नहीं देख पड़ती। खैर, जो कुछ भी हो
तिक सम्पत्ति में से तो बटवारा होगा ही; रही नक़द की
, सो उसे कोई जानताही नहीं कि हरि दादा के पा
तना है। उसमें से दयाकरके वे जो कुछ दे देंगे, विधु
वे वही सब कुछ होगा।"

चन्द्रनाथ बोले—"ना भैय्या, झगड़ा सहजमें मिटने वाल
ीं। भौतिक सम्पत्ति को छोड़, रुपये-पैसे के मामले
व आदमी मिलकरही कुछ कम करा सकते हैं। विधुभूष
पक्ष आदमी है। उसे समझा-बुझा देनेसे ही कुछ का
। सकता है, नहीं तो कुछ भी नहीं हो सकता।

हमारे पूर्वपरिचित, दुष्ट सभाके प्रधान सदस्य, श्रीब्र
ने कहा—"लेकिन, आजकल तो विधु देखही नहीं
ता। यदि वह यहाँ होता, तो बहुत कुछ उपकारक
ावना थी।" ताराचन्द बोले—"विधु कोई चीज़ नहीं
ना आनन्दके कुछ भी उपकार नहीं हो सकता। यदि
ज यहाँ होते, तो खुशामद-दरामदसे बहुत का
कलता।"

ब्रजहरि बोले—"उसका पता सहज में मिलना बड़ कठि

वह भी आज इस मजलिस में हाज़िर है। भजहरि के
ोष सुनकर उसने कहा—"न लौटने का कौन सबब
ोना को ले कर भागने से क्या देशमें लौटनेके लिये उनक
ा कर दिया है। वे ज़मींदार हैं, पैसे वाले हैं, सारा दि
ं दूसरोंका भला करने में ही बीतता है। फिर किसक
मत है जो उनसे कुछ कहे?"

ब्रह्मदेव बोले—"ठीक है, भाई ठीक है। ज्ञानेन्द्रनाथ त
औरत को ही लेकर भागे हैं, लोग तो इससे भी अधि
कर पाप कर डालते हैं। उनके लौटने में कुछ ब
ीं। वे अवश्य लौटेंगे। हरि दादा, बिना उनको मित्र
ये इस मुक़दमे में तुम्हारा भला नहीं।"

भजहरि बोले—"आज-कल बड़ा अन्याय है, इस कलि
ग में ग़रीब का पक्ष कोई नहीं लेता। सभी बड़े आद
यों की खुशामद करते हैं। भाई, जो कुछ मेरे भाग्य
खा होगा, होगा तो वही; पर मैं उस घोर पापी नराध
ानेन्द्र नाथ का शरणागत कभी नहीं बनूँगा। इस सम
दि एक आदमी होता, तो बड़ा उपकार होता। रघुनाथ को
ुझसे नहीं देख पड़ता। न मालूम वह कहाँ है?"

मल्लाह बोला—"वह तो उसी दिन चला गया था

मल्लाह बोला—"नहीं।"

मजहरिने कहा—"जैसी हाँड़ी वैसा प्याला। बाबू ए
उकी लड़की लेकर भाग गये और संभव है, रहियी किर
उसे छोरि को ले भागी हो? अरे! कहीं रघूका कपाल
ही जाग उठा? वह बड़ा चालाक है, शायद ज्ञानेन्द्र
ही बन बैठा?"

मल्लाह बोला—"छि:! छि:! ऐसा मत कहो। बहुआह
वती है, उन्हें कलङ्क लगानेमें पाप होगा।"

ताराचन्द बोले—"असंभव कुछ नहीं है। जैसा कु
रा आजकल है, उसे देखते, सभी कुछ संभव है। माल
ता है, रघुनाथ हाथ साफ़ कर गया। रही साथ रहने वा
रलोचनकी बात, उनका तो पीकदान और चवर गहु जो
स है। जिसने दो पैसे दिये, बस रात उसीको है।"

और किसीके कुछ कहनेके पहले ही, सामने का वन चुपच
लकर रामी भीवन सबके सामने आ खड़ी हुई। राम
हालत अब बड़ी ख़राब होगयी है। वह इतनी दुर्ब
र क्षय होगयी है कि, चलना तक भारी है। तमा
ीर काला पड़ गया है। देह पर कपड़ा नहीं

अहसे दर्शन किया जाता था, आज वह डर का मारा
ायी है।"

रामी चुपचाप आकर खड़ी होगयी। किसीसे कुछ नहं
ा, न रोयी न धोयी और न चिल्लायी। केवल निःशब्द खड़
। उसे इस प्रकार खड़ा देख भजहरि बोले—"तू क्य
यी है?"

रामी बोली—"मैं क्यों आयी हूँ? हाँ, मैं आयी हूँ
क। तुम सती की निन्दा कर रहे हो—मुँह टूट पड़ेगा।

भजहरि बोले—"टूट पड़ने दे, उसको तू फिकर मत क
चली जा।"

रामी बोली—"हाँ, हाँ; मैं भी जाऊँगी और तुम
ओगे। यहाँ का मज़ा तुम्हारे हिस्सेमें ही नहीं है। मे
, पूरा होगया और तुम्हारा भी पूरा होगया। मैं र
नीच आदमी की लड़की हूँ, लेकिन तुम जैसे पाजी नह
। सतीका मान मैं जानती हूँ। तुम्हारा मुँह टूटेगा।"

भजहरिने कुछ जवाब नहीं दिया। कोई कुछ न बोल
ली फिर कहने लगी—"रघु भी तुम जैसा ही पाजी है।"
भजा, अच्छी तरह सुन ले, रघु पाजी है। वह लक्ष्मी
हको भी नहीं देख सकता। तुम मुक़द्दमा हार गये भज

इस बार भजहरि को बड़ा गुस्सा आया। बोले—"अच्
छा, तुझे इन बातोंसे कुछ मतलब नहीं, हम सब जान
ो तू यहांसे भाग जा।"

बाबो बोली—"मतलब है। मैं पापिन हूँ, लेकिन तुम
ा नहीं। एक समय तू मेरे पांव पकड़ कर रोया करत
याद है? मैं उसी दिनसे तेरी भलाई जानती हूँ। मैं
त दिनों तेरे हाथके रबड़ीके मोलुए खाये हैं, लेकिन
अभी हूँ वे सब विधुके बापके धनसे आते थे। इतना जान
भी अभी बहुत कुछ जाननेसे मतलब है।"

भजहरिने चौपालमें से उठकर धोबनके सिरके बाल पक
ये और कहा—"रांड मारही डालूँगा, नहीं तो भागजा।

धोबन बोली—"ताक़त भी है? याद है, एक दिन ते
ुझे मैंने लात मारी थी। आज तू मेरे बाल पकड़ क
रना चाहता है। लेकिन होशियार रह, मेरे पांव अ
नहीं हैं। अब भी हैं। तेरे पापोंका घड़ा भर
जाती है, इसीसे कुछ नहीं कहती, भरने पर उसे मैं
तमें फोड़ूँगी।"

यह सुनते ही क्रोधान्ध भजहरिने एक झटका देक
ोबोको ज़मीन पर गिरा दिया और उसके सिर तथा छाती प

के मुँहसे खून गिर रहा है। वह निःशब्द और बे-हरक
; चारों ओरसे एक आशङ्का का कोलाहल उठ खड़
ा। बहुतसे आदमी इकट्ठे होगये। आगन्तुकोंमेंसे बहुतों
झा, रामी की जीवनलीला अब समाप्त हो जायगी। औरतों
य, हाय करके शोर मचा दिया। अब भजहरिने समझ
था कि, उनके श्रीपाद-पद्मोंके प्रहारसे ही रामीने परलोक
ा की तैयारी की। तैयारी की या यात्रा होगयी। अ
था, भजहरिकी सभामें निरन्तर बैठने वाले आदमी धीरे-धी
कने लगे। पड़ोसकी औरतोंने घरमेंसे पानी लाकर रामी
ह पर छींटे देने शुरू किये। वह उस वक्त भी मुँह
न गिरा रही थी। छींटोंसे कुछ नहीं हुआ। तब पङ्
लने लगा। आखिर सभी कुछ किया, पर रामी नहीं उठी।
अब क्या था, भजहरिके पैर तलेसे मिट्टी निकल गयी
खूब समझ गये, इस खून का भोंड़ा मेरे सिर
टेगा। तब घरवालोंसे भी कुछ न कह, चुपचाप कहीं भा
ये।

बात बिना पङ्ख उड़ा करती है। रामीके मरनेकी खब
यु के वेगकी भाँति सब जगह फैल गयी। रामका एक पह
न जाने पर थानेके थोड़ेसे सिपाहियोंके साथ जमादार घटना

...मोंके हृदय की धड़कन अभी बाकी थी। मकान की औरतें ...भजहरिकी ख़बर पूछनेके लिये परेशान की गयीं। लेकिन ...जहरि कहाँ भाग गया, इसका पता कुछ नहीं लगा।

आजकी सारी रात इसीप्रकार पूछताछमें बीती। भज-हरिकी पत्नी हाथ जोड़ कर भगवान् से प्रार्थना करने लगी— ...देव, इस समय संसारमें आपके बराबर कोई बलवान् नहीं। ...र्ग-नरक की बात तो दूर, यहाँके किये पापों का फल यहीं ...ल जाता है। दयामय, मजबूर हूँ। क्या करूँ? लेकिन यदि ...रा पातिव्रत धर्म अक्षुण्ण है, तो आशा है, आप मुझे वैधव्यका ...:ख नहीं देंगे।"

तीन दिनके बाद गोविन्दपुर ग्राममें एक किसानके मकान ...र भजहरि पकड़े गये। उस समय उन्होंने अपने छिपानेकी ...हुतसी चेष्टाएँ कीं, लेकिन कुछ भी फल नहीं हुआ। हथ-...ड़ी बेड़ी पहिना कर पुलिसने उनका चालान कर दिया।

चौबीसवाँ परिच्छेद ।
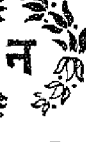
न वीना अकेली है। लखनऊ आनेके बादसे उस
ज्ञानेन्द्रको एक क्षणके लिये भी नहीं छोड़ा
वह हर वक्त, ज्ञानेन्द्रके पास रहकर उनको प्रेमाग्नि
ड़काने की चेष्टामें लगी रही। स्वच्छन्दताके साथ प्रेमिकके पा
कर सानन्द समय बितानेकी आशासेही उसने यहाँ त
नेकी सोची थी। लेकिन आशा फलित नहीं हुई। क्योंकि
 ज्ञानेन्द्रनाथ पूरे तौरसे सतर्क हैं। पहले उन्होंने भ्रमव
कर्म किया, मोहके फन्देमें फँसकर पाप-पङ्क का आश्र
या। लेकिन अब वैसा भ्रम नहीं है, मोहका अन्त होगय
। इसीसे नवीना अपने कार्य्यमें सफल-मनोरथ नहीं हुई
 यह बात नहीं कि, ज्ञानेन्द्रको अपने वशमें करनेके लि
ने कुछ उठा रक्खा हो। इस व्यापारमें उद्देश्य-सिद्धि
तने उपाय थे, नवीना सभी कर हारी। रोदन और कात

न हुआ। तब वह समझ गया कि, सूखे पेड़की जड़में जल सिञ्चन बेकार है, और अप्राप्य वस्तुकी आशा छोड़ देनाही अच्छा है। अब उसके मनमें आत्मग्लानि, अपमान, घृणा और लज्जा का ज्ञान उत्पन्न हुआ। प्रेमार्थिनी सुन्दरी उपेक्षिता होनेपर ऐसा ही अनुभव करती है।

नवीना बहुत दिनोंसे जिस बातका विचार किया करती थी, आज अकेली होनेसे वह स्रोत अत्यन्त प्रबल हो उठा। उसने समझा, मेरी जैसी रूपराशि संसारमें दूसरेको अप्राप्य है। इसे पानेके लिये—इसे अपना करनेके लिये—बहुतसे लोग लालायित हैं, बहुतसे लोग चिरदासत्वमें बंधकर उसके चरणोंमें विक्रीत होनेके लिये तैयार हैं। जिसके लिये इस देवदुर्लभ सम्पत्तिकी आजतक रक्षाकी और यहाँ नहीं, जिसके चरणोंमें इस रूपकी दूकानको स्वयं उपयाचिकाके रूपमें होकर बर्बाद कर दिया, जिसके पास वह लज्जा और तेजस्विताको दूर फेंक भिखारिनी बन कर गयी, उस नराधमने उसकी उपेक्षाकी! वह अपनेको मुझसे सौभाग्यशाली समझकर बरम्बार विरक्ति और अवज्ञा दिखाया करता है। ऐसी यन्त्रणा स्त्री के लिये असह्य है।

इसीसे नवीनाने मनही मन संकल्प कर लिया कि, अब

घर पहुँचनेका उपाय क्या है ? यदि किसी तरह घर पहुँच जाऊँ, तब तो स्वाधीनता से अपनी इच्छा पूरी की जा सकती है। विशेषकर, उसके पास अब भी ढाई हज़ार रुपया है। वह इस रुपयेसे सुख सहित दिन बितायेगी।"

नवीना जब पापमें खूब अच्छी तरह डूब गयी है, तब पाप से क्या डर ? उसने अपनी इच्छासे—सुखकी आशासे—आदर सहित पापका आलिङ्गन किया है, इस समय पापही उसका अवलम्बन है। पापही उसके सुख और आनन्दका नेतासका है। इसलिये उसने मीमांसा की है, जहाँ पड़ बिना रोक इस पाप की परितृप्ति हो, अब वहीं प्रस्थान करना चाहिये। अकेली बैठी हुई नवीनाने निःशङ्क चित्तसे बहुत कुछ सोच-विचारके बाद ऐसा सिद्धान्त स्थिर किया।

सन्ध्या होगयी। नवीनाने घरमें दीपक जलाया। घरके काम-धाममें जी नहीं लगता। क्योंकि उसका चित्त आज बड़ा उदासीन है। वह फिर शय्या पर आकर बैठ गयी। फिर सोचा—मनकी बात किसीको भी नहीं बतानी चाहिये। अब वह प्रेमके बन्धनसे मुक्त है, किसीसे भी प्रणय नहीं। जब नगेन्द्र उससे नहीं होना चाहते, तो उनसे फिर छिपाकरही काम करना चाहिये। धीरेन्द्र लावण्यसे हैं। लावण्यमयीसे

भाग्यमें क्या-क्या होना बदा है, उसे वह नहीं जानती ; लेकिन यह खूब जानती है कि, उसके इस दारुण अपमान का कारण एकमात्र लावण्यमयी है। उस लावण्यका सर्वनाश कर देना उसका प्रधान संकल्प है। यन्त्रणासे छटपटाती हुई लावण्य का अन्त होगा, ज्ञानेन्द्रनाथ पास खड़े हुए उस दृश्यको देखकर दुःखी होंगे और नवीना दूर खड़ी-खड़ी प्रतिहिंसापूर्ण तीव्र हँसीके साथ उन दोनों की दुर्गति देखेगी—यही उसकी प्रधान चिन्ताका विषय है।

रात के प्रायः नौ बज गये। ज्ञानेन्द्र कभी बाहर नहीं जाया करते थे, अतः उनके आनेमें विलम्ब देखकर नवीनाने सोचा, क्या भाग गये ? क्या यहाँसे चले गये ? चले गये तो चले जायँ, यदि वे नहीं जाते तो मैं स्वयं ही उनके पाससे शीघ्र चली जाती। अब वे पहले ही चले गये, यह अच्छा हुआ।

इस अपरिचित प्रदेशमें, अज्ञातभाषी लोगोंमें—फिर रातका समय ! नवीनाको डर लगा। वह धीरे-धीरे उठकर पाससाले घरके सदर दर्वाजेके पास गयी और थोड़ासा खोल कर बाहर की ओर देखती रही। रास्ता विस्तृत है, दोनों ओरकी दूकानोंमें खूब प्रकाश होरहा है, रास्ते पर आने-जानेवालोंकी संख्या बहुत थोड़ी है। द्वारके ठीक पासके एक मकानमें मुरी वेश्याका निवास है।

छी तरह नहीं समझती। किन्तु उसने यह अच्छी तर
न लिया कि, कुत्सिता व्यभिचारिणीसे अनुराग करनेवा
प्रतिद्वन्द्वी आपसमें लड़ रहे है। पास खड़े लोग दोनों
तरफ़दार हैं। वाद-विवादकी मात्रा अति प्रबल है। उ
गड़ का परिणाम देखनेके लिये वहाँ पर कुछ निकम्मे लो
खड़े होगये थे।

नवीना वहाँ के रँग-ढँगसे समझ गयी कि, लड़नेवा
याके प्रार्थी हैं और दोनोंही अनेक उपायोंसे नायिका
नने अपनी-अपनी श्रेष्ठता जता रहे हैं। अलावा इसके, उ
को हस्तगत करनेके लिये, दोनोंही बहुतसे उपहार देनेव
ताव कर रहे हैं। नवीनाने एक लम्बा श्वास छोड़ा। अप
नतके साथ उस कुरूपा वेश्याकी तुलना करनेके बाद उस
दयमें बड़ी वेदना हुई।

नवीनाने विस्मयके साथ देखा कि, उस भीड़के पीछे ए
गली आदमी खड़ा है। आदमी तमाशा देखनेके लि
हीं खड़ा, वरन् किसीका मकान खोज रहा है। उसक
ह साफ़ नहीं देख पड़ता, अतः पहचानना मुश्किल है
ीना ने दर्वाज़ा बन्द कर लिया, पर कुण्डी नहीं लगाई।
बङ्गाली आदमी बहुत देरतक इधर-उधर देख नवीन

कमी रहा करते हैं। वे कभी बाहर नहीं निकलते। कभी
ाचित् दूकानदार उन्हें देख लेता है। उनके सङ्ग शाय
क औरत भी है, लेकिन दूकानदारने कभी उसकी आवा
ीं सुनी। आज लगभग चार महीनेके बाद बाबू कह
हर गये हैं। इन चार महीनों के बीचमें किसीने उ
ालते नहीं देखा। अलावा इसके, उस बङ्गाली आदमी
बू का आकार-प्रकार और रूपरङ्गके बारेमें भी दुकानदा
बहुत कुछ जान लिया है।

अनन्तर उसने दुकानदारके साथ बहुतसा परामर्श किय
त देरतक धीमेस्वरमें बातचीत होती रही। बङ्गाली आद
ेबसे दो रुपये निकाल कर उस दूकान्दार को दिये
े बाद वह आनन्दके मकानके सामने आकर खड़ा हुआ
बार चारों ओर निगाह डाली। फिर डरते-डरते दर्वा
कुण्डी पकड़ कर ज़ोर से किवाड़ों पर धक्का मारा
ाज़ा बन्द नहीं था, अतः खुल गया। दर्वाज़ेसे कुछ
पर नवीना खड़ी हुई थी। दोनोंने दोनोंको देख लिया
ोंही एक दूसरेको पहचान गये। पहचानतेही परस
तें होने लगीं।

जिस समय वे अपनी-अपनी बातचीतमें बेतरह लगे

नो दूकानके प्रकाशके सामने बैठा हुआ दिनभरका हिसा
ा रहा था।

इसी समय ज्ञानेन्द्रनाथ और विधुभूषण परस्पर बातची
ते हुए उस रास्ते पर आये। ज्ञानेन्द्र इस वक्त शान्त है
चाकृत प्रसन्न और दृढ़तापूर्ण हैं। दूरहीसे ज्ञानेन्द्रनाथ
स्मय सहित देखा कि, उनके मकानके दर्वाज़े पर ए
ाली युवक खड़ा हुआ है। दर्वाजा थोड़ा खुला हुआ है
क घरके किसी आदमीसे बातचीत कर रहा है। लेकि
में तो नवीनाके सिवा दूसरा कोई आदमी ही नहीं। क
ीनासे बातचीत कर रहा है? उन्होंने विधुभूषणसे कहा-
य्या विधु, वह देखो, जिस दर्वाज़े पर एक आदमी खड
ा है, वही मेरा घर है। तुम वहाँ मत जाना। अ
ओ, कल सवेरेही साक्षात् होगा।"

विधुभूषण उस समय ज्ञानेन्द्रके मकानके दर्वाज़े पर ख
दमी की ओर देखने में इतना मग्न था कि, उसने ज्ञाने
बात सुनी भी नहीं। वह बोला—"भैय्या, वह आदमी त
नाथ चक्रवर्ती मालूम होता है। आप यहीं रहें, मैं धीर
े जाकर देख आता हूँ।"

ज्ञानेन्द्रने विधुभूषणका हाथ पकड़ लिया और कहा-

है। इसलिये ठीक नहीं कहा जा सकता कि, वह कौन है?"

विधुभूषण बोला—"मुँह ढका रहने पर भी मैंने साफ़ पहचान लिया कि, वह रघुनाथके सिवा दूसरा आदमी नहीं है। यह ठीक है कि, रघुनाथ का यहाँ तक पहुँचना कठिन है, लेकिन् क्या अजब यदि वह मेरे पीछे ही पीछे आता रहा हो? मैं उसे अवश्य देखूँगा, आप हाथ छोड़ दीजिये।"

यह कह विधुभूषणने हाथ छुड़ा लिया और ज्ञानेन्द्रके मकान की ओर लपका। उसे पास आया देख आगन्तुकने मुँहका कपड़ा उघाड़ कर उसकी ओर देखा। देखतेही वह दूसरी ओर भाग गया। ज्ञानेन्द्रनाथ और विधुभूषण इस बारेमें निःसन्देह होगये कि, आगन्तुक राघवपुर के रघुनाथ के सिवा और कोई नहीं था। अब विधुभूषण उसके पीछे भागा। ज्ञानेन्द्र नाथने बहुतेरा रोका, पर वह न माना।

पच्चीसवाँ परिच्छेद ।
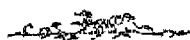
जबतक विधुभूषण लौट न आया, तब तक ज्ञानेन्द्र नाथ वहीं खड़े-खड़े अपेक्षा करते रहे। पड़ोस का दूकानदार और दिन इतनी देरतक दूकान खुली नहीं रखता था। न मालूम आज क्या माजरा है ? अब उसने दूकान बन्द करने के लिये किवाड़ गिराया और उसी समय ज्ञानेन्द्र नाथ से पूछा—"बाबू साहब आप यहाँ कैसे खड़े हुए हैं ?"

ज्ञानेन्द्रनाथ बोले—"क्या तुम मुझे पहचानते हो ?

दूकानदार बोला—"हाँ, आप इसी मकान में तो रहते है ? पहले एक दो दफ़ा देखा था, अच्छी तरह देखने का मौक़ा आज ही मिला है।"

तब ज्ञानेन्द्र नाथ ने पूछा—"सब दूकाने बन्द होगयीं, पर तुम्हारी दूकान खुली हुई है। क्या रोज़ इसी वक्त तक दूकान

अभी कुछ देर हुई हमारे मकान के दर्वाजे पर खड़ा एक आदमी झाँक रहा था और हमें आते देख कर वह भाग गया। उसकि पीछे मेरा एक दोस्त भाग गया है। उसी की बाट में मैं यहाँ खड़ा हुआ हूँ।

दूकानदार बोला—"भागते को पकड़ना अन्याय है। क्योंकि, यदि उसमें कुछ भी साहस होता तो वह भागता ही क्यों? वह आपसे डर कर भागा है, फिर उस कुत्ते को आपने क्यों पकड़वाया?"

ज्ञानेन्द्र नाथ बोले—"ठीक है। मेरी इच्छा नहीं थी। भाग गया तो भले ही भाग जाय। अगर वह यहाँ खड़ाही रहता, तोभी मैं उससे कुछ नहीं कहता।"

दूकानदारने पूछा—"क्या आप यह सच कह रहे हैं?"

ज्ञानेन्द्र बोले—"भई, तुमसे झूठ बोलने से क्या फायदा? मैं यह बात सच कहता हूँ कि, चाहे वह किसी मतलब से क्यों न आया हो, मेरा उसमें कुछ नुकसान नहीं।"

तब दूकानदार ज्ञानेन्द्रके पास आकर धीरे से बोला—'आपके पास एक बंगाली स्त्री भी है न? शायद वह पहले नहीं थी, अभी आयी है। खैर, मैंने उसे कभी नहीं देखा। [illegible]गा बंगाली बाबू उसीके साथ कुछ फुसर फुसर कर रहा था।"

किसी प्रकारका दुःख नहीं होगा। लेकिन बाबू साहब, आप ज़रा होशियार रहें।"

ज्ञानेन्द्रने विस्मय के साथ पूछा—"यह क्यों ?"

दूकानदार बोला—"अगर वह आपकी गृहिणी होती, तब तो मैं दूसरेके साथ आशनाई समझ उसके बारेमें एक अच्छी सलाह देता। लेकिन मालूम होता हैं, कि वह आपकी औरत नहीं है। अतः उसकी देख-रेख न रखने पर भी होशियार अवश्य रहना।"

इसी समय पसीने से शराबोर विधुभूषणने आकर कहा—'भैय्या, मैंने उसे पकड़ लिया था, पर उसमें अपना कुछ फ़ायदा न देख छोड़ दिया।"

ज्ञानेन्द्रनाथ बोले,—"अच्छा किया। उससे हमारी दुश्मनी थोड़े ही है ?"

विधूभूषणने कहा—"लेकिन भैय्या, वह आया यहाँ किसी न किसी उद्देश्य से ही है, और वह उद्देश्य मुझे ख़राब मालूम होता है। आज मैं मकान नहीं जाऊँगा। इसी दर्वाज़े पर बैठा रहूँगा।'

ज्ञानेन्द्रनाथ हँसे और बोले—"इतना कष्ट उठाने की कुछ ज़रूरत नहीं। अलावा इसके, ऐसा करनेसे फ़ायदा न

हमारा सर्वनाश उपस्थित हो जाय। अतएव किसी की इच्छा में बाधा डालनेसे हमारा कुछ लाभ नहीं। अब तुम जाओ, कल सवेरे फिर मिलना।"

विधु बोला—"मुझे आपके ऊपर ख़तरा आने की आशङ्का है!"

ज्ञानेन्द्रने कहा—"तुम अभी बच्चे हो, इन बातों को तुम नहीं समझ सकते। मेरे ऊपर कोई ख़तरा न आवेगा। मैं इस समय धनहीन हूँ। वे जो चाहे सो करें, इसमें उनका विरोध करनेसे कोई फ़ायदा नहीं। फिर वे हमारा क्या नुक़-सान कर सकते हैं? तुम बेखटके होकर डेरे पर जाओ, सवेरे मिलना।"

दूकानदार चला गया। विधुभूषणने भी अधिक तर्क-वितर्क करना व्यर्थ समझ डेरेकी ओर प्रस्थान किया। उसके नज़रों की ओझल होजाने पर ज्ञानेन्द्रनाथ अपने घरमें घुस गये। भीतर जाकर उन्होंने आश्चर्यके साथ देखा कि—दर्वाज़ा खुला पड़ा है। ज्ञानेन्द्र कुछ ठिठके। अनन्तर दर्वाज़ा बन्द करके भीतर चले गये।

धीरे-धीरे शयन कमरेके दर्वाजे पर पहुँचे। कमरेका दर्वाज़ा भीतरसे बन्द था। इसीलिये उन्हें बहुतसी आवाजें

ा बहुत देरके थाये हुए हो क्या ? क्या बहुतसी आवा
ो पड़ी ?"

ज्ञानेन्द्रने कहा—"नहीं। बेकार नींद तोड़ने से तुम्हें बड़
ट हुआ। जाओ, अब सो रहो।"

ज्ञानेन्द्र सब जानते थे। नवीना का भी जानेका बहाना
र था। क्योंकि ज्ञानेन्द्रने उसे रघुनाथकी साथ बातचीत
ते देखही लिया था। नवीनाने कहा,—"अभी सोऊं कैसे
ने खाना तो खायाही नहीं।"

ज्ञानेन्द्र नाथ बोले—"इस समय भूख नहीं है। विशे
असमय भोजन करनेसे तबीयत ख़राब हो जायगी।"

नवीना बोली—"सारी रात भूखे रहोगे ? यह क्यों ?"

ज्ञानेन्द्र बोले—"तबीयतख़राब करने की अपेक्षा इस सम
खाना ही अच्छा है। उपवास करनेसे कोई नुक़सा
हीं होगा।"

नवीना ने कहा—"तब आप सो जाइये। मैं घरव
मकाज करके सोऊँगी।"

ज्ञानेन्द्रनाथ पलँगपर जाकर लेट रहे। लेकिन नी
हीं आयी। विधुभूषण को प्रत्याशाहीन देखकर, उस
कपटतासे हृदयका भाव छिपाकर, ज्ञानेन्द्रनाथका चि

अपने मुखसे पाप और दुष्कृतिका व्यक्त करना आत्मरि
श्मकता-साधनका अमोघ अस्त्र है। रोमन कैथोलि
य, अपने धर्म मठमें प्रवेश करने वाले पुरुष और स्त्रियों
ीत जीवनके समस्त दुष्कर्मोंका विवरण अकपट होव
ा करते थे। इस प्रकारके विवरण सुनकर बादको आग
ं प्रवेशार्थीकी इच्छा पूरी की जाती थी। अन्यान्य बहु
धर्मावलम्बियोंमें भी गुरुके पास अपराध स्वीकार कर
चलित है। यह पद्धति, मनुष्य का मन शान्त करनेव
ृकृष्ट उपाय है। विधुभूषण उम्र में छोटा है, इसलि
् की बराबर न होने पर भी, ज्ञानेन्द्रनाथ जानते थे कि
ेंवल चरित्रबल और पवित्रता-बल में वह समाज व
दरणीय है। विशेषकर वह जीव-हितैषी और गुणमुग
। ऐसे पुरुष-पुंगव के सामने ही सब बातें कही गयी हैं
स तरह ज्ञानेन्द्रनाथके हृदयमें धीरे-धीरे पापने प्रवे
या था, जिस तरह वे उन्मादी पतङ्ग की भाँति अवस
कर पाप-वन्हि में गिर पड़े थे, वे सब बातें किसी तरह भ
छिपा उन्होंने साफ़-साफ़ कह डालीं। उनकी विगत चेष्ट
नुतापकी प्रबलता, पापसे छुटकारेका प्रयास आदि सब कु
धभूषणने सुन लिया। घटनाका कोई अंश भी नह

रोहित हो गयीं। काल-सर्पका अविरल दंशन शा
गया।

अच्छा, इन बातों के अलावा और भी कुछ हुआ? प
या, बहुतसी बातें हुईं। लावण्यमयीका हाल जानने
ये ज्ञानेन्द्रनाथ का हृदय नितान्त व्याकुल होनेपर भी,
इस कारके उसके सम्बन्धमें कोई बात न पूछ सके। विध
शणने भी उसका हाल विशेष बढ़ाकर नहीं कहा। तथा
तना कुछ कहा, उससे ज्ञानेन्द्रनाथका हृदय अधीर होगया
धु विभूषणने उन्हें विश्वास दिलाया और कहा
किसी प्रकार भी अधीर न हों, घबरायें नहीं, शीघ्र
ोरथ सिद्ध होगा। इस विश्वासवाणीके बलसे ही उन
यमें अनेक प्रकारकी सुख-कल्पनाएं उठने और लय हो
ीं।

ज्ञानेन्द्रनाथ शय्यापर निद्रितकी भांति पड़े थे, पर उनक
खोंमें नींदका लेश भी नहीं था। नवीना न मालूम लैम्प
मने बैठी हुई क्या-क्या करती रही। उसने एक साधार
पोटली तैय्यार की। उसे बगलमें दबाकर बाह
थी। कहीं ज्ञानेन्द्र न जाग उठें, इस भयसे उसने तनि
खटका नहीं किया। बाहर पोटली रखकर वह फि

निन्द्रने उस शब्द को सुनलिया। लेकिन किसी प्रकारकी
कुलता ज़ाहिर नहीं की।

नवीनाने फिर चुपचाप घरमें प्रवेश किया, फिर शय्याके पा
ड़ी होकर सोचने लगी और कहने लगी,—"ज्ञानेन्द्र, तुम्
न-दान करने में मैंने तनिक भी कसर नहीं छोड़ी, तोभ
न वशमें नहीं हुए। जब तुम अपने हुए ही नहीं, तो फि
धिक आशामें रहना, तुम्हारे पास ठहरना अनावश्यक है
री आशाकी पूर्ति होगी, मुझे पाकर जो लोग अपन
भाग्य समझेंगे, अब मैं वहीं और उन्हींके पास रहका
नन्द दिन व्यतीत करूंगी। लेकिन तुम्हें कभी न
लूंगी।"

पापिष्ठा फिर बाहर आयी। वहाँ आकर सोचने लगी—
इतनी देर क्यों? शायद किसी कारणसे रुक जाना पड़
? बड़ा अच्छा आदमी है, हृदय से प्यार करता है, त
ो इतने कष्ट सहकर यहाँ आया। कहीं ज्ञानेन्द्र को देखक
र तो नहीं गया? नहीं, उसका प्रेम डर जाने वाला नह
।"

उसी समय दर्वाजे पर थप-थप शब्द हुआ। शब्द धीमे
ोने पर भी नवीनाने उसे सुन लिया। वह द्वारके पा

नवीनाने कहा—"अच्छा, आती हूँ। दर्वाजा खुला है
र आजाओ।"

आगन्तुक भीतर आगया, वह और कोई नहीं हमा
चित रघुनाथ है। रघुनाथ बोला—"कहो,—सब ले लिर
! देखो कुछ भूलना मत।"

नवीना बोली—"नहीं, रुपयेकी बात कहते हो? उसे त
पहले से ही ठीक कर लिया।"

रघुनाथ खड़ा रहा। नवीनाने फिर कमरेमें प्रवेश किर
बोली—"नाथ! इच्छा थी कि, तुमसे कहकर आती, कि
हस नहीं होता। मालूम होता है, इस जीवनमें अ
हारे दर्शन नहीं होंगे। अब कभी सुखी होऊँगी, त
शद मिलना हो। ज्ञानेन्द्र मेरी उपेक्षा करके तुमने अच्छ
ीं किया। और एक बात है, तुम्हारी लावण्यको मैं अप
नी दुश्मन समझती हूं। यदि कभी भगवान् दिन फेरेंग
र सुयोग मिला, तो उसे तुम्हारे सामने ही पिस्सूकी भाँ
कोंसे मसल कर मारूँगी। तुमने मेरे साथ बड़े-बड़
व्यवहार किये है, उसकी खबर परमात्मा लेगा। क
ो ऐसे दिन नहीं आवेंगे? ज़रूर आवेंगे। अभी
तुम्हें अपने पैर पकड़वाकर रुलाऊँगी। एक लक्

रही थी। रघुनाथने बड़े यत्नसे दोनों बाहुओंसे नवीनाके कोमल शरीरको वेष्टन कर लिया और गाड़ी पर चढ़ा लिया और बोला—"नवी, साधनासे ही सिद्धि होती है। भगवान्ने आज बड़े दिनों बाद इच्छा पूरी की।"

गाड़ी शीघ्रतासे दौड़ने लगी।

जाओ नवीना! सुखकी खोजमें पृथ्वीके एक छोरसे दूसरे छोरतक घूम आओ। देखोगी, समझोगी कि, पापमें सुख नहीं है, भोगमें जीवनकी तृप्ति नहीं है। तुमने बहुत समय हुआ, तभी अपने धर्मको त्याग दिया; लेकिन् धर्महीना होकर भी अभीतक तुम्हारे लिये आश्रय था। फिर आश्रय भी किस का? देवी देवताओंका। लेकिन अभागिनी, आज तुम उससे सर्वदाके लिये दूर हो चलीं।

छब्बीसवाँ परिच्छेद ।

दो महीने बीत गये। ज्ञानेन्द्रनाथने यह सुदीर्घका
संसारसे एक प्रकारसे निर्लिप्त रहकर ही काटा
विधुभूषण उनका छायाके समान संगी था। उस
खनऊके गणेशगंजमें डेरा डाला था। जिस दिलखुश बा
ज़िक्र हम किसी पिछले परिच्छेदमें कर आये हैं, वह य
पास ही है। इस बाग़में ज्ञानेन्द्रनाथ विधुभूषणके आग्रह
य: घूमनेके लिये जाया करते थे। उनकी सेवाके लि
धुभूषणने अनेक दास-दासी रख दिये हैं एवं उन्हें हर सम
न्न रखनेमें वह किसी प्रकार की त्रुटि नहीं करता।

जिस दिन रघुनाथके साथ इन दोनोंका साक्षात् हुआ थ
र नवीना संभवत: उसीके साथ भागी थी, उस दिनसे इ
महीने तक विधुभूषण और ज्ञानेन्द्रमें उस विषयपर को
चीत नहीं हुई। नवीना कहाँ गयी? रघुनाथ क्यों आ

। खर्च करता है। सहसा इस ग़रीबके पास इतना ध
ांसे आगया—ज्ञानेन्द्रनाथने इस बातके जानने की
ा नहीं की। यह नहीं कि, यह बात उनके मनमें
उठी हो; उठी अवश्य, पर पूछनेका साहस न हुआ।
नते थे कि, यह सब आयोजन संभवतः उसीकी ओर
ा है, जिसका मैं अक्षम्य अपराधी हूँ; विधुभूषण केव
े देवीकी प्रेरणासे अपना कुटुम्ब त्यागकर मेरे सन्तो
ानमें लगा हुआ है।

अनुमान सबका सब सत्य नहीं। विधुभूषण केवल अ
वीकी आज्ञासे परतंत्र होकर ही ज्ञानेन्द्रनाथको प्रसन्न ना
ता वरन् उसकी आन्तरिक श्रद्धा और ज्ञानेन्द्रके प्रति अपू
के आकर्षणने ही तमाम कुटुम्बियोंसे बिछोहा कराक
की हित चेष्टामें उसे लगाया है। और यदि लावण्यमयी ही
योजन करती तो, यह समझनेका कोई कारण नहीं कि
मीको अपराधी जानकर भी साध्वी पत्नी दूरसे पतिकी सुख
न्तिकी व्यवस्था करती है। हमारा विश्वास है कि, लाव
मयी ज्ञानेन्द्रको अपराधी नहीं समझती, क्योंकि देवचरि
दुष्कर्म असंभव है। लेकिन फिर भी दूसरी ओर प्रायश्चि
ी है। निरन्तर पुण्यमयीके ध्यानसे पापीके हृदयसे पा

ता जाता है। यही प्रकृत प्रायश्चित्त है। रोगजीर्ण अथ
यी व्यक्ति धीरे-धीरे ही स्वास्थ्य और शक्तिका लाभ कर
। प्रकाण्ड वृक्षकी जड़में जो छोटे-छोटे पौधे सूख गये थे
य और नक्षत्रोंका मुँह देखकर वे फिर नवजीवनसे शोभा
न होगये।

क्रमशः सुख-दुःखकी बहुतसी बातें दोनोंके ही मुँह
आयी पड़ने लगीं। ज्ञानेन्द्रनाथ चकित होकर सोच
कि, इतनी बातें उन्होंने क्यों कह डालीं? विधुभूष
श्चर्य्यके साथ आलोचना करने लगा कि, उसकी सावधान
को लाँघकर बातोंका स्रोत बहुत दूरतक फैल गया! ज्ञा
प्रसन्न न होनेपर भी शान्त हैं, सुखी न होनेपर भी दुःख
न हैं, और पुष्ट न होनेपर भी स्थिरचित्त हैं। कभी-कभ
तीत की स्मृति तो जाग उठती है, पर उनके हृदयमें पा
हीं, पापकी गंध भी नहीं। चिन्ह हैं, पर वस्तुका अभा
। ये चिह्न भी कभी धुल जायँगे।

एक दिन विधुभूषणने कहा,—"भैय्या, यदि देश चलनेक
च्छा न हो तो मत चलो, लेकिन दूसरी जगह तो चलो।"

विधुभूषणकी बात सुनकर ज्ञानेन्द्रने कुछ विचारा। इस
द कहा,—"मालूम होता है, इतने दिन विदेशमें रहते-रह

विधुभूषण बोला,—"क्यों ? क्या मुझसे कोई अपराध होगय
? बिना किसी कुसूरके किये, आप मुझे बिना बात क
ाते हैं ?" यह कह, अभिमानके साथ उसने मुँह नीच
र लिया ।"

ज्ञानेन्द्रनाथ बोले,—"तुम दुःखित न हो भाई ? मैंने तुम
खित करनेके लिये ये बातें नहीं कहीं । तुम्हारे ऊप
ृहस्थका भार है, बहुत कुछ कर्त्तव्य हैं, उन सबको पर
कर, इतने दिन विदेशमें रहना ठीक नहीं, यह सोचकर
ा ऐसा कहा ।"

विधुभूषण बोला,—"आपके क्या नहीं है ? आप तो राज
हैं । देशके सब लोग आपके अनुगत हैं, आपक
ाएक भवन हरवक्त लोगोंसे भरा रहता है, आप
त:पुरमें —"

बात समाप्त न हो पायी । साँपसे काटे व्यक्तिकी भाँ
ानेन्द्रनाथ विचलित हो उठे । दोनोंका मुँह नीचा होगय
नों ही चुप हैं । बहुत देर बाद विधुभूषणने ज्ञानेन्द्रका हा
लाकर कहा,—"भैय्या !" स्रोतका बाँध टूट गया । ज्ञाने
नाथ ज्ञान-हीन शिशुकी भाँति व्याकुलताके साथ विधुभूष
दोनों भुजाओंसे जकड़कर बोले,—"भैय्या, मेरे अन्तःपुर

किन—लेकिन भाई, मैं अब उसका कोई नहीं,
ब—"

बात कण्ठमेंही रुकगयी। ज्ञानेन्द्रनाथ विधुभूषण
तीपर अपना मुँह रखकर ज़ार ज़ार रोने लगे। जन
लानको खोकर जिस तरह रोती है, बालक अपनी प्या
तुके खोदेने पर जिस तरह रोता है, मनुष्य अपने सर्वस्व
य कर जिस प्रकार रोता है, ज्ञानेन्द्रनाथ उसी प्रकार रो
। विधुभूषण कुछ भी न कह सका। वह धर्मव्रत मह
के रोरुद्यमान मुखको छातीसे चिपटाकर चुप बैठा रहा।
रुदनको रोकनेके लिये उसको हिम्मत न हुई। वह इ
श्व प्रेमके स्रोतको न रोक सका।

यदि संसारमें रुदन न होता, तो इसमें कोई सुख न
, शान्ति दीखनेवाली यह वसुन्धरा एक कठोर मरुभूमि
य न समझी जाती। यदि हृदयसे शोकका पवित्र आवर
कर रुदन-स्रोत बाहर न हुआ करता, तो समस्त पृथ्
हाकार से भर जाती। अतः हे रोदन! तुम सुखमें
और दुखमें भी हो। तुम्हीं मनुष्यके परम आश्रय हो
हारी अमृतधाराका अवलम्बन करनेसे मनुष्यके सू
दयमें शान्ति प्रवेश करती है। तुम्हारे मुक्ताफल-तुल्य प्रश

दूसरेका दुःख समान है। रोदन-माला देवता है। धन्य भग-वान! तुमने शायद कातर मनुष्यको प्रसन्न करनेके लिये ही पवित्र रोदनकी व्यवस्था की है।

बहुत देरतक रोनेके बाद ज्ञानेन्द्रनाथको होश हुआ। उन्होंने प्रेमाश्रयी विधुभूषणके हृदयसे अपना मुँह हटा कर कहा "विधु, मेरी दुर्बलताको देखकर मालूम होता है, तुम्हें बहुत हँसी आयी होगी। पर भैया, सच तो यह है कि जो पापी है, वही दुर्बल है। इस समय सिवा रुदनके और कोई मेरा संगी नहीं।"

विधुभूषणने गद् गद् कण्ठसे कहा—"भैया, मैं भगवान्‌से प्रार्थना करता हूँ, कि संसारके सब मनुष्य तुम जैसे सहृदयी होजायँ।"

अनन्तर विधुभूषणने एक गिलास पानी लाकर ज्ञानेन्द्रके हाथमें दिया। ज्ञानेन्द्रने उसे पिया, और आँख और माथा धोया। फिर कहने लगे—"विधु, तुम घर मत जाओ, मैं तुम्हें यहाँ नहीं जाने दूँगा। अब मैं अच्छी तरह जान गया कि, इस संसारमें तुम जैसा मित्र दुर्लभ है। तुमने मुझे जीवन दिया है, शान्ति दी है।"

विधुभूषण हँसता हुआ बोला—"जाना कौन चाहता है?

तब ज्ञानेन्द्रने कहा—"निरन्तर एक स्थान पर नहीं रहा जाता। यदि किसीको विदेशमें रहना पड़े, तो उसे चाहिये कि वह बहुतसे स्थानोंमें फिरे। अतः कलही कहीं चलने की फिक्र करो।"

विधुभूषण बोला—"बहुत अच्छा। मैं अभी सामान दुरुस्त करता हूँ। अब साँझ होगयी, क्या इच्छा है?"

ज्ञानेन्द्र बोले—"चलो, डेरे पर चलें।"

सत्ताईसवाँ परिच्छेद

आठ बज गये। अयोध्याके अन्तर्वर्त्ती फैजाबादसे आज एक घोड़ागाड़ी अयोध्या जाने वाली सड़क पर बड़े वेगसे दौड़ रही है। गाड़ीके ऊपर कोचमैन और साईस के सिवा एक दर्बान एवं दो व्यक्ति और हैं। गाड़ीके भीतर हमारे ज्ञानेन्द्रनाथ और विधुभूषण के सिवा और कोई नहीं है। ज्ञानेन्द्रनाथ कह रहे हैं—"भाई, तुम्हारी सला-हसे अयोध्या आना बड़ा अच्छा हुआ। इस समय मेरा मन एक अभूतपूर्व भावसे व्याकुल होरहा है। क्यों होरहा है, यह मुझे नहीं मालूम? लेकिन हृदयमें विषादकी स्मृति और आनन्दके आवेग का अपूर्व सामञ्जस्य है।

विधुभूषण बोला—"आप भावुक हैं। आपके चित्तमें इस जगह बहुत से भाव पैदा हो सकते हैं। लेकिन विषाद क्यों है?"

ज्ञानेन्द्र बोले—"ठीक नहीं कह सकता। अनुमानसे ऐसा

काँटे चुभते हैं। स्त्रीके ऊपर आसक्त होनेकी बात हमने अनेक पुस्तकोंमें पढ़ी है, सुनी है ; लेकिन भाईके ऊपर भाई का प्रेम जैसा रामचन्द्र और लक्ष्मणने दिखाया, उसका अनुकरण देशके किसी व्यक्तिने भी आज तक नहीं दिखाया।"

विधुभूषण बोला—"आप तो अनुकरण की बात कहते हैं, वैसा भावतो किसी कविके हृदयमें भी पैदा नहीं हुआ।"

ज्ञानेन्द्रनाथ बोले—"एक प्रेमही नहीं, रामचन्द्रका प्रजारञ्जन, सत्यप्रियता और प्रेम सभी कुछ अद्भुत थे। केवल राजधर्म-पालनके अनुरोधसे पवित्रतामयी सीता का वनवास बड़ी अतुल मानसिक शक्तिका परिचायक है।"

इतने में अयोध्या आपहुँची। कङ्कड़ोंके छोटे-छोटे पहाड़ हमारे मुसाफिरोंके दृष्टिगोचर होने लगे। बायीं ओर सरयू, दक्षिणमें हरी-हरी दूब और अनेक पहाड़ हैं। बड़ाही मनोहर दृश्य है। रास्ते के पास खड़े तीन आदमी इसी गाड़ीके आनेकी अपेक्षा कर रहे थे, वे शीघ्रतासे दौड़ आकर गाड़ीके पास खड़े होगये। ज्ञानेन्द्रने देखा,—पण्डा लोग उन्हें अपना अतिथि बनानेके लिये आगये हैं। ज्ञानेन्द्र और विधुने उन्हें प्रणाम किया। उनमेंसे एक पण्डा कहा—"डेरा तय्यार है।

पण्डा बोला—"अब गाड़ीसे उतरिये। जन्मभूमि इस सामने की मस्जिद के पास है।"

मुग़ल-सम्राट् औरङ्गज़ेब की व्यवस्थासे प्रायः सर्वत्र हिन्दू-देवमन्दिरों के स्थान पर मुसल्मान मस्जिदें बन गयी थीं। जहां का स्थान पूरे तौरसे कब्जे में न आसका, वहाँ कुछ दूरी पर मस्जिदें बनवादी थी। अति सावधान चित्तसे ज्ञानेन्द्रने अनुचरोंके साथ पण्डाओंके पीछे-पीछे जाकर जन्मभूमिमें प्रवेश किया। पण्डाओंने रघुनाथजीका जन्मस्थान दिखाया। जो भवन उस स्थान पर दशरथके राज-भवनके नामसे परिचित है, वहां पर प्राचीनताका कोई लक्षण नहीं। ज्ञानेन्द्रने इस बात पर ध्यान नहीं दिया, उन्होंने बिना किसी प्रकार की तर्कना किये वहाँ की धूलि सिर पर चढ़ायी। रामचन्द्र दशरथ आदिकी बहुतसी मूर्त्तियाँ देखीं। इसके बाद ज़मीनके भीतर वाले तहखानोंमें गये। वहां सीता देवी रसोई बना रही थीं एवं लक्ष्मण भोजनके लिये खड़े हुए थे। यही स्थान लक्ष्मण-भोजन-शाला के नामसे परिचित है। बहुत देर तक वहाँ रहकर सबने फिर गाड़ी में सवार होगये। गाड़ी चलकर हनुमानगढ़ी के पास आकर थमी।

हनुमानजी की अयोध्यामें बड़ी महिमा है। और

गोसाईंजी —

नने अपना हृदय फाड़कर सन्दिग्ध मनुष्योंके सामने युग
त्तियों को दिखा दिया, उस भक्तचूड़ामणिके परमपूज
नेमें कोई सन्देह नहीं।

हनुमानजीका मन्दिर बहुत ऊँचे पर है। वहाँ जाने
ये बहुतसी सीढ़ियाँ तय करनी पड़ती हैं। सामने
ोंकी शाखाओं पर, सैकड़ों लाल मुँहके बन्दर है
बड़े नटखट है। वे पूजाके बर्तन, पहननेकी धोती आ
में ले जाते हैं। फिर एक उसी स्थान ही पर नहीं, सा
ोध्यामें ऐसे ही बन्दर हैं। लेकिन उनसे लोग कभी नह
िबयाते। वे इन बन्दरोंको महावीरके वंशधर समझक
की पूजा करते हैं।

हनुमानजीके मन्दिरके सामने खड़े होकर आनन्दना
से गद्गद् होगये। प्रेमसे मनुष्यही क्यों, वनके पशु-पक्ष
देवता बन जाते है। इस विशाल मन्दिरका हनुमा
र्तिही इसका प्रत्यक्ष निदर्शन है। इस देवताको सैक
दमी निरन्तर आ-आकर पूजा किया करते है। ढेरके ढे
-पदार्थ और द्रव्य वहाँ अनवरत आते रहते हैं। हाय प्रेम
य भक्ति! क्या तुम संसार को वशमें करनेका मन्त्र जान
?

पण्डा और साथके लोगोंको भोजनादिके लिये डेरे पर भेज दिया, गाड़ी बिदा होगई। ज्ञानेन्द्रनाथ धीरे-धीरे जाने लगे। कुछ दूर, पूर्व की ओर जानेके बाद उन्हें एक छोटे मार्गसे जाना पड़ा थोड़ा चलनेके बाद, वे एक जगह चौंक कर खड़े होगये। उनके कानोंमें कहीं से रोनेकी आवाज़ सुनायी दी। मालूम हुआ—कोई औरत किसी दारुण यन्त्रणासे कातरताके साथ रोरही है।

स्वर विधुभूषणके कानोंमें भी सुन पड़ा। वह भी ज्ञानेन्द्रनाथ की भाँति स्थिर खड़ा होगया। पण्डा बोले—"क्या आप इस रोनेकी आवाज़ को सुनकर खड़े होगये हैं? यहाँ आज एक महीनेसे एक बङ्गाली किसी स्त्रीके साथ रहा करता है। स्त्री आजकल बीमार होरही है। क्या बीमारी है, सो तो हमें नहीं मालूम; लेकिन वह निरन्तर इसी प्रकार चिल्ला-चिल्ला कर रोया करती है।"

विधुभूषण बोला,—"वह कौन है, कैसी है, इत्यादि जानने की इस समय कोई ज़रूरत नहीं। मालूम होता है, स्त्रीको बड़ा कष्ट है। फिर वह बङ्गालिन है; अतः आपतो डेरे पर जाइये। मैं उसका असली पता लगाता हूँ।"

ज्ञानेन्द्रने कहा—"नहीं, मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा।

र ज्ञानेन्द्रनाथ पीड़िताके मकान की तरफ चल दिये। कुछ दू
ाड़ी बढ़ते ही पहले विधुभूषणको पीड़िताके दर्शन हुए
विस्मय के साथ एकदम बोल उठा,—"हैं! यह र
ेसा है?"

ज्ञानेन्द्र बोले,—"हाँ, यह तो मैं भी जान गया। लेकि
के पास जाकर पूछो कि, उसे क्या रोग है। यह अवस
स तरह हुई?"

विधुभूषण पीड़िता के पास बहुत देर रहा। बहुत
ाचीत की। अन्तमें योग्य चिकित्सादि की व्यवस्था क
लौट आया। रास्तेमें ज्ञानेन्द्रसे इस बारेमें किसी प्रकारक
नचीत नहीं हुई। विधुभूषणने सिर्फ इतनाही कहा,-
व मैं दोपहरके समय पीड़िताके पास जाऊँगा, तब आपक
संग रहना जरूरी है।"

ज्ञानेन्द्रने किसी प्रकारकी आपत्ति नहीं की। अनन्त
के सब सरयूके समीपवर्त्ती डेरेमें चले गये।

अट्ठाईसवाँ परिच्छेद ।

नवीना रोग-शय्या पर पड़ी हुई है। उसका अ
पहलासा रूप नहीं है। यौवन भी गया। इ
समय उसे देखकर पहली नवीना कहनेका को
ायक नहीं। भादों की चढ़ी हुई गङ्गाकी भांति एक सम
ह जैसी शोभाशालिनी थी, अब उसकी शोभाका सबली भाव
नाव है। वे हँसी भरे, मदन के क्रीडाभूमि-स्वरूप, अ
लाल कटाक्षमय नेत्र इस समय निष्प्रभ हैं। देखनेमें विक
लूम होते हैं। उसके गालोंके ऊपर वाली हड्डी ऊँची उठ आ
उसके रेशम को भी मात करने वाले चिकने बाल अब धू
सने हुए हैं। सिर खुला हुआ है। तमाम शरीर पर गोरत
स्थान पर स्याहीने अधिकार जमाकर असामान्य सौन्द
एक साथ नष्ट कर डाला है। जो मोतियोंके समान चम
ले दाँत हँसीके समय को छोड़ हर वक्त, ओठोंके भीतर छि
ते थे वे अब बुरी तरह से बाहर निकल आये हैं। सब

ह बहुतसी होने पर भी उनकी पूर्त्ति नहीं हुई। वह अ
ी भाँति समझ गयी कि, पापमें शान्ति नहीं । इस संसार
उसकी आशाओंका पूरा होना कठिन है। वह ज्ञानेन
यके आश्रम पर ही परम सुखी थी। वह वहाँ कुटुम्बक
लकिनी जैसी थी। लावण्य उसे अपनी प्रिय भगिनी समझत
। ज्ञानेन्द्र बहिनसे ज़ियादा प्यार करते थे। वहाँ ब
सुखसे समय बीतता था। दास-दासी सभी उसकी आज्ञ
नते थे, स्वयं लावण्य उसे प्रसन्न रखने की कोशिशमें रहत
। अब वही अभागिनी विधवा सदाके लिये उन सुखों
ञ्चित होगयी। यदि उसकी धर्ममें मति रहती, यदि उसे पाप
का भ्रम न होता, तो सबही आनन्दमय और सुखम
। उसने इसका विचार नहीं किया, फलतः ऐसी दुर्दश
ई।

ज्ञानेन्द्रनाथको अनेक लोभोंके फन्देमें फाँसकर उस
समें डुबकी लगायी थी। समझा—दुनियामें अब उसकी बर
कोई भी सुखी नहीं। सुखका विशाल द्वार उसके साम
ला हुआ है। वह लावण्यमयीके स्थानकी मालकिनी बनेगी
नेन्द्रनाथ अब उसके दास बनकर रहेंगे। हिसाब तो ठी
चा था, पर भूल बेढब हो गई। ज्ञानेन्द्रनाथ धार्मिक

भी नवीना के प्रेम-पींजरेमें न फँस सका। अब क्या उपाय था ?

उपाय तब भी था। वह तब भी पाप-वासनाओंका विसर्जन कर, बीती हुई पापकी स्मृतिको हृदयमें छिपाकर लावण्यके छाया-भाश्रममें सुखसे रह सकती थी। किन्तु यह भी हुआ नहीं। जो प्राणी पापमें सुखके लिये, भोगमें तृप्ति और दैहिक प्रवृत्ति के लिये भंज चुका है, वह कभी भी स्थिर नहीं रह सकता। पापका रास्ता बहुत पीछे है, बड़ा मोहमय और पतनकारी है। उससे पैदा हुई इच्छाओंका पूरा होना बड़ाही मुश्किल है। क्षुद्र नवीना तो क्या चीज़, अनेक ज्ञानवान् महात्मा भी उस मोहमय रास्ते पर जाकर स्थिर न रह सके। जब स्थिर न रह सके, तो पतन अनिवार्य हुआ। नवीनाकी वही हालत हुई। लोग यह न समझें कि, हमने ऊपर जो कुछ कहा है, वह किसी पक्षपातके वशमें होकर। हम नवीना के वकील नहीं हैं। वास्तवमें यह बात सच्ची ही है कि, पापपथमें आकर स्थिर रहना असम्भव है।

अङ्कुरकी हालतमें ही वासनाओं की जड़ उखाड़ न देनेपर जब समय मन पहलेही चञ्चल होकर बेढंग जानेके लिये त्यारी करता है, तभी विवेकके उपदेश और कर्त्तव्यनिष्ठाके ...समें उसकी गति रोक...

समय ये सब हुआ हैं। नवीना पहले तो पाप-सागर
ो-खुशी घुस गयी। अब नरकके चित्रको सामने देखक
से चीखें मार रही है।
अगर वह भोग-वासनाओंकी किङ्करी न बन कर अपने
बनाये रखती, तो आज उसकी ऐसी दुर्दशा कभी न होती
ने समझा,—जब मैं पापसे मँज गयी हूँ, तो मुझे पापमें
को खोज करनी चाहिये। ज्ञानेन्द्रनाथ बर्बर हैं, हृदयही
। प्रेम, अनुराग और यौवन इनके माहात्म्यसे
दम अपरिचित हैं, अतएव ऐसे आदमीका अनुसर
ना निष्प्रयोजन हैं। साथही उसने देखा, रघुनाथ चक्रव
छोड़ कर, बड़ी-बड़ी तकलीफें उठा कर, प्रेमका भिक्षु
कर, इतनी दूर नवीनाके पास आया है। इसलिये य
ही यथार्थ प्रेमिक है। एवं इसकेही संसर्गसे नवीना
नाओंकी निवृत्ति होगी। उसके पास अब भी ढाई हजा
या है। वह उस रुपयेको लेकर, निठुरको छोड़ प्रेमिक
श्रय लेगी। ऐसाही हुआ, उसने निर्बोधके बदले सुबोध
यमें आश्रय दे दिया।
एक महीना बड़े आनन्दसे कटा। इतना प्रेम इतनी मधुर
ागिनी नवीना को इस जन्ममें भोग करनेके लिये न

पारलौकिक मार्गमें निवेदित कर दिया। अपनेको रघुनाथकी दासी समझने लगी। उसका सुराग हुआ अब, उसका यौवन अब कुछ रघुनाथका हुआ। नवीना उसके जालको कुछ भी न समझ सकी। बहुत दिनों बाद उसकी आँखें खुलीं।

नवीनाके पास अब एक भी पैसा नहीं। पेटकी ज्वाला बुझानेके लिये उसने कपड़े-लत्ते, ज़ेवर-जथा सबको बेंच डाला। यह घटना फैज़ाबादमें हुई। जब किसी तरह भी गुज़ारा न हुआ, तब उसने वेश्याओंके बाज़ारमें अड्डा जमाया। रूप-यौवनके बेचनेसे कुछ दिनों काम चला। इसके बादको उसे भयानक पीड़ाने घेर लिया। दुर्दशा की सीमा न रही। गृह-स्वामीने उसे निकाल बाहर किया। अब उसको भिक्षा द्वारा गुज़र होने लगी। अयोध्या तीर्थ स्थान है, वहां नित्य-प्रति असंख्य यात्री आया करते हैं। अतः भिक्षामें सुविधा होगी—यह समझ कर वह अयोध्यामें आगयी। उठनेकी शक्ति जाती रही थी, शरीर रोगसे जर्जरित होगया था। आखिर मृत्युशय्या ग्रहण करनी पड़ी। उसका रूप गया, यौवन गया, और धर्मको जलाञ्जलि देदी गयी थी, इस समय रह गया केवल प्राण। लेकिन अब क्या होता है? अब ज्ञानको लेकर क्या किया जाय? यदि कुछ दिनों पहले होता, तो कुछ लाभ भी होता।

ानने दया करके विधुभूषण और ज्ञानेन्द्रनाथको भेज दिया।
ाल डाक्टर बुलाया गया, पथ्यादि की व्यवस्था की गयी ए
न-जिन वस्तुओंकी आवश्यकता थी, उनका अभाव पूर्ण कि
ा। रोगिणी समझी,—जहाँ ज्ञानेन्द्रनाथ होते हैं, वहीं द
स्रोत उमड़ आता है, और यन्त्रणाएँ पलायन कर जाती है
विधुभूषण और ज्ञानेन्द्रके चले जाने पर नवीनाके सिरहा
स्त्री आकर खड़ी होगयी और पीड़िताके किसी आदे
अपेक्षा न कर सब प्रकारकी शुश्रूषाएँ करने लगी। नवी
वस्मयके साथ देखा, कि वह औरत राघवपुरकी चौधराइन है
गराज तक वह साथ थी। अब यहाँ कैसे आयी? क
थी?

नवीना बहुत देर तक उसका मुँह देखकर बोली—"चौध
न, तुम आगयीं, अच्छा हुआ। इस अन्त समय में तुम्हें दे
मुझे प्रसन्नता हुई। इस पापानुष्ठान में दोष सब प्रकार
ी था, तुमने तो सतर्क करनेमें कुछ भी कसर नहीं व
। लेकिन मैं अभागिनी यह न समझ सकी कि, पाप
 नहीं है। इसीलिये मेरी ऐसी दुर्गति हुई।"

नापितबहूने कहा—"घटना यहाँतक आपहुँचेगी, इसक
े स्वप्नमें भी खयाल न था। खैर, मुझे विश्वास है, तुम्हें बहु

भोंधराइनने इस बात पर कुछ ध्यान न देकर कहा—"क्या तुम्हारे भाई और माँ को ले आऊँ ?"

नवीनाके शरीरमें मानो अमृतका सञ्चार हुआ। वह एक-दम उठकर कहने लगी—"छि: ! यह पापी मुँह क्या अब किसीके दिखाने लायक है ? फिर माँ और भाई को ! मैं तो यह चाहती हूँ कि, मेरे मरने की ख़बर भी कोई न सुने।"

भोंधराइनने और कुछ नहीं कहा। उसने धीरे-धीरे नवीनाको सुला दिया। नवीना मनही मन कहने लगी—"दया—देवता की दया—सब जगह है। जिस प्रेमपूर्ण घरमें आग लगाने वाली थी, जिस देवी और देवताके हृदयमें छुरी भोंकने वाली थी, जिस देवीको हटा कर उसके स्थान पर प्रेतनीकी मूर्त्ति को बैठाने की इच्छा थी, उस पापिष्ठाके ऊपर भी दया !"

भोंधराइन बोली—"किसकी बात कह रही हो नवी ? ज्ञानेन्द्र बाबू की दया का बखान करती हो ? वे पाप-पुण्य की तरफ़ ख़याल नहीं करते। उनकी दया पात्रापात्र का भेद नहीं रखती।"

नवीना बोली—"यह मैं ख़ूब जानती हूँ। लेकिन हृदयमें कुछ बातें छिपी हुई हैं, जिन्हें [illegible]

हुआ। विधुभूषण दिनमें कई बार आया करता था। और यही नहीं, उस दिन वह सारी रात उसीके पास रहा एवं आवश्यकीय चीज़ोंका संग्रह भी कर दिया।

उन्नीसवाँ परिच्छेद ।

अगले दिन प्रातःकालको नवीनाको भी विश्वास होगया कि, वह अब इस रोग-शालाके निकट पथको पार कर गयी। लेकिन इससे उसे आनन्द नहीं हुआ। बौधायन उसकी बड़े यत्नसे सेवा कर रही है। रात भर नहीं सोयी। इतना ही नहीं, बौधायनके अलावा और कई एक आदमी दौड़-धूपमें लगे हुए हैं। इन्होंने जब वह खूब सोई थी। निद्रा अवस्थामें उसने एक स्वप्न भी देखा। स्वप्नमें देखा—करुणामयी लावण्य स्वर्गीय-ज्योति-युक्त शरीरसे उसकी दिलो-जानसे सेवा कर रही है। कैसी दया है! कैसी करुणा है! इतना परिश्रम तो यदि कोई उसकी सगी बहिन या प्यारी सखी भी होती, तो वह भी न करती! लेकिन यह स्वप्न है। स्वप्न क्या सत्य हुआ करता है? हाँ, होता है, पर यह नितान्त असंभव है।" आँखोंमें उसी आलस्यमें देखा—उसकी सेवाके लिये अनेकों

ार-ज़ार रो रही है। छिः! छिः! जिसको नाखूनोंसे नोच-नोच
र मारता था, उसके ऊपर इतनी करुणा! बड़ी लज्जाकी
त है। यदि वह पहलेही मर जाती, तो अच्छा था। शर्म
मारे नवीना मरमर गयी।

घोर नींदमें नवीनाने और भी देखा कि, सामने उसकी माँ
ड़ी हुई है, भाई खड़ा हुआ है। छिः! छिः! ये लोग मेरा
ह क्यों देखने आये? यह क्या मरनेसे पहले का छाया-
र्शन है? तो क्या वह अब जीवित नहीं है? इत्यादि सोचते
ोचते नवीना सहसा जाग उठी। फिर सोगयी। स्वप्न फिर
ारी है।

कितने ही लोग आते हैं, कितनेही जाते हैं। सभी नवीन
लिये उद्विग्न हैं। लावण्यमयी सबसे अपने किस्मर-कण्ठसे
नेकी बातें कह रही है। व्याकुलता और उत्कण्ठाकी सीमा
हीं। सभी खेल मृत्युके पहले मस्तिष्क-विकारसे पैदा
ई कल्पनाके मालूम होने लगे। नवीना चुपचाप पड़ी
ही। लेकिन तब भी उसे लावण्यके दर्शन होरहे थे। अब
से धीरे-धीरे गहरी नींद आने लगी। नींद टूटनेके बाद
सने विस्मयके साथ देखा कि, घरमें सिवा चौधराइनके और
ोई नहीं है। उसे ऊँघा-नींदोंमें देखकर नापितबहूने पूछा—

बोधबाबूने बोली—"हाँ।"

नवीनाने कहा—"आज मैंने सारी रात स्वप्न देखा है।"

"अच्छी तरह नींद न आनेसे ऐसेही स्वप्न देख पड़ते हैं। स्वप्नमें क्या देखा नवी?"

नवीना बोली—"बड़ा मधुर स्वप्न था। मैंने देखा,—लावण्य मेरे सिरहाने है। मेरे लिये बड़ी व्याकुल होरही है। माँ भी पास खड़ी है। मैं अगर नरक का कीड़ा होती, तब तो मैं उन सब बातोंको झूठ समझती।

बोधबाबूने कहा—"धूप निकल आयी है। सम्भव है, डाक्टर साहब आते हों। वे रातको भी आये थे। तुम मुँह मत धोना।"

नवीना बोली—"अब डाक्टरकी कोई ज़रूरत नहीं। रोग आराम होगया। पानी दो, मुँह धोऊँगी।"

नापितबहूने पानी ला दिया। नवीना मुँह धोकर बोली—"एक इच्छा है, तुम उसे पूरा कर सकती हो? मैंने सुना है कि यहाँ ज्ञानेन्द्र आये थे। मैं पापिष्ठा हूँ, तोभी एकबार उनसे मिलने की चाह है। कोई बुरी चाह नहीं, अब मुझे भले-बुरे की खूब पहिचान होगयी है।"

बाबूने पूछा—"तब क्यों मिलना चाहती हो?"

राध स्वीकार करना चाहती हूँ। खैर, लावण्य न सही
नेन्द्र तो मिल जायँ।"

उसी समय कमरेमें एक दूसरे दर्वाज़े से स्थिर गम्भीर मूर्ति
युवकने प्रवेश किया। युवा ज्ञानेन्द्रनाथ थे। चौधराय
देखकर वहाँसे चली गयी। ज्ञानेन्द्रनाथने प्या
से पूछा,—

"नवीना, अब कैसी तबीयत है?" नवीना कुछ दे
ज्ञाहीन की भाँति उस सौम्यदर्शन पुरुष की तरफ़ देखत
। इसके बाद उठी और हाथ जोड़कर बोली—
वता! आप आगये? दया इसीका नाम है। आप मह
ष हैं, मैं राक्षसी हूँ, मैंने आपका सर्वनाश करना चाहा था
पिशाची हूँ, आपको स्वर्गसे गिरनेकी चेष्टा की थी।
पिष्ठा हूँ, आपके सुखपूर्ण संसारको मैंने भस्म कर डाल
कोशिश की थी। तिस पर भी आपने अपनी दयाव
नहीं छोड़ा? आप धन्य हैं!"

ज्ञानेन्द्रनाथ निश्चल कण्ठसे बोले—"भूल सभीसे होती है
अबला और अशिक्षिता हो। तुम्हारी भूल क्षमा कर
य है। लेकिन मैं गर्वित शिक्षाभिमानी और तेजस्वी पुरु
मेरा पाप वास्तवमें अक्षम्य है। तुम्हारी अपेक्षा दो

ाही है । मैं किसी तरह भी निर्दोष साबित नहीं हो सकती
ने तो आप कर के पथ की भिखारिणी के धर्मकी रक्ष
ने का ही आयोजन किया था । लेकिन मैं उसी दया
ाना शोगया और उल्टा आपको ही पाप-फन्देमें फांसा
का दोष तो सिर्फ इतनाही है कि, आप मेरे कौशलोंव
ीं समझ सके । आपने, जिसे सबसे पहले ही चरणोंसे टल
लिये था, उसका आदर कर सर्वनाश को बुलाया । सां
पिलाने पर भी अपनी आदत नहीं छोड़ता । हाय ! इत
नेके बाद ज्ञान उपजा । अगर पहले ही ज्ञान होजाता,
आप जैसे देवता का क्यों सर्वनाश करती ?"

नवीना मुंह ढांक कर रोने लगी । ज्ञानेन्द्रनाथने पह
भांति कहा —"अच्छा, अब सब बातें भूल जाओ । आगेव
ावधान होओ । मैं तो सावधान होगया । तुम भी धर्माचरण
ा अपना पाप धो डालो ।"

नवीना रोती-रोती बोली—"कैसे धोऊँ ? बाकी कौन
ा करनेको रहा ? आप देवता हो, धर्मवीर हो : आ
हले से भी सावधान थे और अब भी । मैं नारकी स्त्री ह
ालिये धर्म कहां ? मैंने स्वर्ग की देवी लावण्यको रुला
। उसके जितने आंसू गिरे हैं, उतनेही वर्ष मुझे नरक भोग

फिर किस तरह उन्हें भूल जाऊँ? अगर इस समय उस हर्षमुख देवीके दर्शन हो जायँ, तो नरक का कष्ट सामने आने पर भी सहज में भूल सकती हूँ? लेकिन ऐसा भाग्य कहाँ?"

हताश होकर नवीना खटिया पर गिर पड़ी। ज्ञानेन्द्रनाथ बोले—"नवीना, जिस देवीका तुम बारम्बार नाम लेती हो, मैं तो उस पवित्र नाम को लेनेका किसी तरह भी अधिकारी नहीं। तुम दुःखिनी थीं, सुखकी खोजमें धोखेसे पाप-गर्त्तमें जा पड़ीं। किन्तु मैं—सोच देखो नवीना, मुझे कौनसा सुख नहीं था। मेरी गृहिणी जैसी तो किसी देवता की देवी भी नहीं। मैं नराधम हूँ, अकृतज्ञ और पामर हूँ; अपनी इच्छासे उस स्वर्गीय देवीके हृदयमें घाव किया। अब तो मैं उसके दर्शनों का भी अधिकारी नहीं। मुझे मौत नहीं आयी! छिः! मैं मरूँगा भी नहीं, जिसके हृदयको मैंने तीव्र अनन्त यातना पहुँचायी, अब उसे वैधव्य की यन्त्रणा नहीं भोगने दूँगा। अगर यह बात अभी कुछ दिनों हृदयमें न पैदा होती, तो अब तक कभीका नरक-यन्त्रणा भोगता होता। अब मैं किसीको अपना मुँह नहीं दिखाना चाहता। तुम्हें भी नहीं और लावण्यको भी नहीं। लेकिन तुमसे एक बात कहनी है। कहो, सुनोगी?"

की प्रत्येक बातमें देवत्व और रूपमें पिशाचत्व की तुलना कर रही थी। आनन्दनाथ बोले,—"सम्भव है, किसी दिन तुम्हारा आकस्मिक दारुण आघात हो। यदि हो, तो धनुग्रह करके कहना कि जिस नरपिशाचने तुम्हारे साथ विश्वासघात किया है, जिसने तुम्हें दुःख के सागरमें डाल दिया है, जिस दुरात्माने अमृत पिलानेवालेको बदलेमें विष पिलाया है, जो सब प्रकारसे अयोग्य है, वह नर-पिशाच अब कभी तुम्हें अपना मुँह नहीं दिखायेगा। एवं यह भी कहना,—नवीना, उसने अभीतक क्षमापात्र बननेका कोई काम नहीं किया है, इसलिये उस देवी के सामने आकर क्षमा प्रार्थना करनेका भी वह अधिकारी नहीं। वह लावण्य-मयी ही नहीं, पुण्यमयी और प्रेममयी भी है। वह अक्षम्यको भी क्षमा कर सकती है, किन्तु उस क्षमाके पानेसे पिशाच स्वामीकी तृप्ति नहीं होगी। और यह भी कहना कि, पापाग्निसे उस पापीका हृदय निरन्तर धू धू करके जलता रहता है। उसके लिये इस जगत्में अब कहीं शान्ति नहीं। वह आजकल पापका बोझा सिर पर रखकर मनुष्य-समाजमें छिपा हुआ समय बिताता है।"

बात समाप्त भी न होने पायी थी कि, 'खट' से पासका एक बन्द दर्वाजा खुल गया और उसमेंसे एक रोती हुई कम्पितकाया युवती वेगसे आकर आनन्दनाथके चरणोंमें गिर पड़ी और

विस्मयसे चकित ज्ञानेन्द्रनाथने देखा कि, वह भूपतिता सुन्दरी लावण्यमयी है! अस्फुट स्वरसे कहा—"ला—ला—लावण्य, तुम यहाँ कैसे ?"

संज्ञाहीनों की भाँति ज्ञानेन्द्रनाथने लावण्यमयीको उठाकर छातीसे लगा लिया।
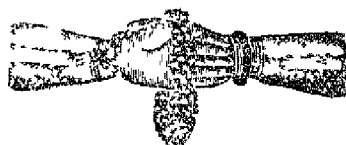
उपसंहार ।

एक महीना और इधर उधरको सैर करने में बीत गया। इसके बाद सब आदमियोंके साथ ज्ञानेन्द्र नाथ राय राघवपुर लौट आये। रामलोचन चक्रवर्ती उनके पुराने हितचिन्तक थे, उन्होंने ही विधुभूषण के परामर्शानुसार लावण्यमयी और आवश्यक लोगोंको फैजाबाद भेज दिया था। उनके ही यत्नसे ज्ञानेन्द्र नाथ की लज्जा का बाँध टूटा। आनन्द-सम्मेलन हुआ। ज्ञानेन्द्र और लावण्य अब खूब प्रसन्न हैं।

नवीना घर नहीं लौटी। उसने अब वास्तवमेंही समस्त इन्द्रियोंको वशमें कर लिया था। अब वह ज्ञान-ध्यानके साथ काशीवास करती है। काशीवास का खर्च लावण्यके ज़िम्मे है। रघुनाथका पता नहीं लगा। सुना गया है, नवीना का जितना रुपया वह लेकर भागा था, उस सबको डाकुओंने छीन लिया। इसके बाद वह मरा या बचा, कुछ पता नहीं।

बाल-बच्चोंको भले प्रकार समझा-बुझा कर अपने घरमें ले आया। अब फिर सब जने प्रसन्नताके साथ साझेमें रहने लगे। ज्ञानेन्द्रनाथने पहलेही विधुभूषणको अपने यहाँ डेढ़ सौ रुपये मासिक पर कारिन्दागीरीके काम पर रख लिया था। अब तो वह पूरे तौरसे उनके सगे भाई की भाँति रहने लगा।

गाँवमें जो लोग शत्रुता रखते थे, वे भी ज्ञानेन्द्रनाथ और विधुभूषणके देवताओं जैसे काम देखकर, अपनी भूल पर दुःख प्रकाश करने लगे। अब सभी उनके मित्र हैं।

लावण्यमयी समझ गयी कि, उसके देवोपम पतिका स्वर्णहृदय अग्निमें तप जानेके कारण विशुद्ध होगया। और ज्ञानेन्द्रनाथने समझा कि, अविच्छेद्य विरह के बाद उनकी गुणवती पत्नीका देवित्व अपरिसीम होगया।
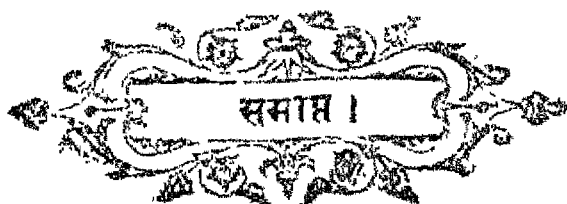
सम्राट् अकबर

हिन्दी-संसार में आजतक ऐसी पुस्तक नहीं निकली। इस पुस्तक के पढ़ने से इतिहास, उपन्यास और जीवन-चरित तीनोंका आनन्द मिलता है। ऐसी-ऐसी बातें मालूम होती हैं, जो बिना ५।७ हजार रुपये की पुस्तकें पढ़े हरगिज नहीं मालूम हो सकतीं। इसमें ५०० साफे और प्रायः एक दर्जन हाफटोन चित्र हैं। मूल्य २॥) हम अपनी ओरसे कुछ न कह कर एक अतीव प्रतिष्ठित अँगरेजी मासिक पत्र की अविकल उद्धृति नीचे लिखे देते हैं। पाठक इसे पढ़कर देखलें कि हमारा लिखना कहां तक ठीक है :—

"माडर्न रिव्यू" लिखता है :—

"This again is a life of the great Musalman Emperor and a very well written life indeed. The method followed is an excellent one for writing lives. The author has made use of lot of books on the subject and his treatment is not merely historical—rather he has, after Macaulay, made use of his imagination and given a graphic colour to what he has written. His descriptions are very nice and the book reads something ike a novel. The great hero of the book has been described n all his aspects. In the book we find besides a very valuble reproduction of the contemporary life. It has distinct uperiority over all other books on the subject, some of them ublished long ago. We remember of a book published by e Hindi Bangabasi Office on the same subject and a comarison of the two brings to light the distinct superior... the book under ...